भाकृअनुप
ICAR

उत्कृष्टता की ओर बढ़ते कदम

इक्षु

राजभाषा पत्रिका

वर्ष 6 अंक 2
जुलाई-दिसम्बर 2017

ISO 9001 : 2015

भाकृअनुप-भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

राजभाषा कीर्ति पुरस्कार–2017

महामहिम राष्ट्रपति महोदय द्वारा 14 सितंबर, 2017 को हिंदी दिवस पर विज्ञान भवन, नई दिल्ली में प्रदान किया गया।

गणेश शंकर विद्यार्थी पुरस्कार–2017

माननीय कृषि एवं किसान कल्याण मंत्री, भारत सरकार द्वारा भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के स्थापना दिवस समारोह, नई दिल्ली में 16 जुलाई, 2017 को प्रदान किया गया।

इक्षुः राजभाषा पत्रिका
वर्ष 6 : अंक 2
जुलाई–दिसम्बर, 2017

इक्षु

संरक्षक एवं प्रकाशक
अश्विनी दत्त पाठक

सम्पादक
अजय कुमार साह

सह–सम्पादक
अरूण बैठा
आदित्य प्रकाश द्विवेदी
अभिषेक कुमार सिंह

कला एवं छायांकन
विपिन धवन
योगेश मोहन सिंह
अवधेश कुमार

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान
लखनऊ–226002

ISO 9001 : 2015

© भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

पत्रिका में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं। संस्थान अथवा राजभाषा प्रकोष्ठ का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

अपने लेख एवं सुझाव भेजें :

संपादक, इक्षु एवं
प्रभारी, राजभाषा प्रकोष्ठ
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान
पोस्ट : दिलकुशा, लखनऊ–226 002
ई–मेल : ikshuiisr@yahoo.in

वर्ष 2017: संस्थान राजभाषा कार्यान्वयन समिति के सदस्य

डॉ. अश्विनी दत्त पाठक	अध्यक्ष
डॉ. सुधीर कुमार शुक्ल	सदस्य
डॉ. डी. आर. मालवीय	सदस्य
डॉ. वी. पी. सिंह	सदस्य
डॉ. (श्रीमती) राधा जैन	सदस्य
डॉ. महाराम सिंह	सदस्य
डॉ. ए. के. सिंह (कृषि अभियंत्रण)	सदस्य
डॉ. वी. के. गुप्ता	सदस्य
डॉ. एस. आई. अनवर	सदस्य
डॉ. ए. पी. द्विवेदी	सदस्य
श्री ऋषि राम	सदस्य
श्री अतुल सचान	सदस्य
श्रीमती आशा गौर	सदस्य
श्री अभिषेक कुमार सिंह	सदस्य
डॉ. अजय कुमार साह	सदस्य सचिव

प्रकाशक
निदेशक
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान
रायबरेली रोड, पोस्ट : दिलकुशा, लखनऊ 226 002
फोन : 0522–2491800 फैक्स : 0522–2480738
ई–मेल : director.sugarcane@icar.gov.in
वेबसाइट : www.iisr.nic.in

मुद्रित : माहेश्वरी एण्ड सन्स, 289/214 मोतिनगर, लखनऊ–226004 फोन : 0522–4071816

अश्विनी दत्त पाठक
निदेशक

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान
लखनऊ–226002

ISO 9001 : 2015

निदेशक की लेखनी से.....

तकनीक आधारित क्रांति से मिठास के क्षेत्र में उत्साहजनक प्रगति हुई, जिससे गन्ना किसान एवं चीनी उद्योग आर्थिक समृद्धि की दिशा में अग्रसर है।

एक अनुमान के अनुसार वर्ष 2017–2018 में गन्ना तथा चीनी उत्पादन पूरे देश में पिछले वर्ष की तुलना में अधिक होगा। इस सफलता में उत्तर प्रदेश का अहम् योगदान है। वर्ष 2017–18 में उत्तर प्रदेश 1600 लाख टन गन्ना तथा 118 लाख टन चीनी उत्पादन कर गन्ना एवं चीनी उद्योग के क्षेत्र में ऐतिहासिक सफलता की गाथा लिखने को तैयार है। इस उपलब्धि में गन्ना किसानों, वैज्ञानिकों, राज्य सरकार के कार्मिकों का अहम् योगदान है। संस्थान द्वारा विकसित उत्पादन तकनीकों का किसानों द्वारा वृहत् स्तर पर प्रयोग से न सिर्फ गन्ने का उत्पादन बढ़ा बल्कि किसानों के आय में भी अत्यधिक वृद्धि हुई।

भारत सरकार का महात्त्वाकांक्षी लक्ष्य है कि सन् 2022 तक किसानों की आय दोगुना की जाए। इस लक्ष्य प्राप्ति में खेती की लागत को कम करना मुख्य अवयव होगा इसके लिये जरूरी है कि मृदा परीक्षण आधारित उर्वरक प्रयोग; ज्यादा से ज्यादा खेती यंत्रों का प्रयोग एवं वैज्ञानिकों द्वारा विकसित नई तकनीकों का प्रग्रहण ज्यादा से ज्यादा किसानों द्वारा किया जाए। इस कार्य में सबकी सहभागिता महत्वपूर्ण है। इस दिशा में सभी की सहभागिता को सुनिश्चित करने के लिए संस्थान द्वारा समय–समय पर 'साझेदार–सम्मेलन' का आयोजन किया गया जिसमें गन्ना एवं कृषि विकास से संबंधित सभी विभागों के उच्च अधिकारियों, वैज्ञानिकों एवं किसानों के बीच परिचर्चा कराई गई। इसके उपरांत रणनीति बनाई गई साथ ही संस्थान द्वारा किसानों के खेतों पर सहभागिता प्रसार कार्यक्रम चलाया जा रहा है जिसमें उनके खेतों पर गन्ना बीज उत्पादन, गन्ना के साथ सह–फसल उत्पादन, पेड़ी प्रबंधन इत्यादि पर प्रदर्शन आयोजित गिया गया। जिसके परिणाम अति उत्साहजनक रहे। विभिन्न प्रकाशनों के माध्यम से कृषि तकनीकों पर सूचना किसानों तक पहुँचाने के लिए संस्थान लगातार प्रयासरत रहता है। इसी प्रयास के अंतर्गत 'इक्षु' राजभाषा पत्रिका का प्रकाशन प्रत्येक छः माह पर किया जाता है। 'इक्षु' के वर्तमान अंक में भी अनेक फसलों पर तकनीकी जानकारी आप तक पहँचाई जा रही है जिसे किसानों तक पहुँचाकर आप अपनी अहम् जिम्मेदारी निभा सकते हैं।

आप लोगों के असीम प्यार एवं प्रकाशित लेखों की उच्च गुणवत्ता के कारण इस पत्रिका को वर्ष 2017 में राष्ट्रीय स्तर के दो सर्वश्रेष्ठ पुरस्कार प्राप्त हुए। राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा **'राजभाषा कीर्ति'** पुरस्कार का प्रथम पुरस्कार मिला जो कि 14 सितम्बर, 2017 को विज्ञान भवन में महामहिम राष्ट्रपति महोदय द्वारा प्रदान किया गया। द्वितीय पुरस्कार भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली द्वारा **'गणेश शंकर विद्यार्थी'** का प्रथम पुरस्कार दिनाँक 16 जुलाई, 2017 को नई दिल्ली में प्रदान किया गया। इसके लिए संपादक, सभी लेखकगण, एवं संपादक मंडल बधाई के पात्र हैं।

मुझे उम्मीद ही नहीं पूर्ण विश्वास है कि भविष्य में भी यह पत्रिका नई उँचाइयों को प्राप्त करेगा।

लखनऊ

जनवरी, 2018

(अश्विनी दत्त पाठक)

डॉ. अजय कुमार साह
प्रधान वैज्ञानिक एवं प्रभारी, प्रसार व प्रशिक्षण
संपादक (इक्षु) एवं प्रभारी, राजभाषा प्रभाग प्रकोष्ठ

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान
लखनऊ–226002
ISO 9001 : 2015

'इक्षु–सार'

वर्ष 2017 राजभाषा पत्रिका 'इक्षु' के लिए गौरवपूर्ण रहा। 'इक्षु' को राष्ट्रीय स्तर के दो पुरस्कारों (राजभाषा कीर्ति पुरस्कार एवं गणेश शंकर विद्यार्थी पुरस्कार) से नवाजा गया। यह बताते हुए मुझे अति हर्ष का अनुभव हो रहा है कि 'इक्षु' को इस स्तर तक पहुँचाने में इसमें प्रकाशित लेखों के लेखकों का महत्वपूर्ण योगदान है। आपके योगदान के बिना यह पत्रिका इस गौरव को प्राप्त नहीं कर सकता था, इसके लिए आप सभी बधाई के पात्र हैं। पत्रिका की गुणवत्ता उसमें प्रकाशित लेखों तथा उसको प्राप्त सम्मान से परिलक्षित होता है। यह पत्रिका दिनों–दिन नई ऊँचाई को प्राप्त कर रहा है। इस पत्रिका को वर्ष 2017 में भारत सरकार के गृह मंत्रालय द्वारा राजभाषा कीर्ति का प्रथम पुरस्कार दिया गया जिसे भारत के राष्ट्रपति महोदय के कर कमलों से हिंदी दिवस के अवसर पर विज्ञान भवन नई दिल्ली में प्रदान किया गया। गणेश शंकर विद्यार्थी पुरस्कार का प्रथम पुरस्कार, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्, नई दिल्ली द्वारा स्थापना दिवस के अवसर पर 16 जुलाई, 2017 को दिया गया।

'इक्षु' को प्रकाशित करने में हमारा यह प्रयास रहता है कि कृषि से संबंधित सभी विषयों के लेखों का समायोजन जरूर किया जाए, साथ ही राजभाषा हिंदी के विभिन्न आयामों पर लेख समाहित किए जाए। इस प्रकार 'इक्षु' के प्रत्येक अंक में ज्ञान रूपी रंग–बिरंगी फूलों को एक साथ गुलदस्ता में प्रस्तुत किया जाता है।

'इक्षु' के इस अंक में हिंदी के प्रतिष्ठापन के प्रति सजग भाषा चिंतन एवं भारत और राजभाषा विषयों पर लेख राजभाषा प्रभाग के अंदर प्रस्तुत किये गये हैं। इन लेखों में भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्र प्रसाद जी का हिंदी के प्रति उनके विचारों से आप अवगत होंगे। 'इक्षु' के ज्ञान विज्ञान प्रभाग में हमेशा की तरह कृषि से संबंधित सभी विषयों जैसे गन्ना, चुकंदर, दलहन, लाख की खेती, गुड़ उत्पादन, सब्जी उत्पादन इत्यादि पर लेख प्रस्तुत किया गया है। साथ ही आज के ज्वलंत मुद्दे जैसे नीलगाय प्रबंधन एवं फसल अवशेष प्रबंधन पर महत्वपूर्ण जानकारी इस अंक में दी गई है, जो पाठकों के लिए बहुत उपयोगी होगी। आरोग्य एवं संजीवनी प्रभाग में प्रस्तुत लेख निश्चित रूप से आपको स्वास्थ्य के प्रति सजग बनाने में सहयोग करेगा।

आमोद – प्रमोद प्रभाग में प्रस्तुत लेख जैसे जी.एस.टी. के बारे में जानकारी, भ्रष्टाचार का जिम्मेदार, पहाड़ी व्यंजन एवं नव वर्ष बधाई संदेश आपको रोमांचित करेगा। मुझे पुर्ण विश्वास है कि यह अंक आप सभी को बहुत पसंद आयेगा।

यह संस्थान नराकास (कार्यालय–3) का अध्यक्षीय कार्यालय होने के कारण लगभग 63 सदस्य कार्यालयों से राजभाषा हिंदी पर किए जा रहे प्रयासों पर सूचना हमें प्राप्त होता है साथ ही उनके द्वारा प्रकाशित पत्रिका भी मुल्यांकन के लिए प्राप्त होता है। मूल्यांकन उपरान्त नगर स्तर पर उन्हें पुरस्कृत भी किया जाता है। उन सभी कार्यालयों के प्रमुखों द्वारा नराकास बैठकों में 'इक्षु' की भूरी–भूरी प्रशंसा की जाती है।

मैं आशा करता हूँ कि आप इस पत्रिका को और बेहतर रूप में प्रस्तुत करने में अपने सुझावों से हमें अवश्य अवगत कराएंगे। आपके सहयोग से हम राजभाषा हिंदी को और अधिक सूचनापरक एवं लाभकारी बनाने में हमेशा प्रयासरत रहेंगे।

लखनऊ

जनवरी, 2018

(अजय कुमार साह)

इक्षुः राजभाषा पत्रिका
राजभाषा प्रकोष्ठ की अर्धवार्षिक पत्रिका
वर्ष 6 : अंक 2
जुलाई–दिसम्बर, 2017

विषय वस्तु

राजभाषा प्रभाग 1–7

जनपदीय भाषाओं की कविताः लिखित एवं वाचिक 1
सूर्य प्रकाश दीक्षित

हिंदी के प्रतिष्ठापन के प्रति सजग भाषा चिंतकः राजेन्द्र प्रसाद 5
उषा सिन्हा

भारत और जनभाषा 7

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग 8–74

अंतरिक्ष प्रजनन द्वारा फसल सुधार 8
आशुतोष कुमार मल्ल, वरूचा मिश्रा, मुकेश कुमार, बी. डी. सिंह एवं अश्विनी दत्त पाठक

भारत के उपोष्ण क्षेत्रों में गन्ने की नवीन सस्य तकनीक 10
आदित्य प्रकाश द्विवेदी, वेद प्रकाश सिंह, विनय कुमार सिंह, के.के. सिंह एवं मनोज कुमार त्रिपाठी

गन्ने में मार्कर से कितना फायदा? 13
राघवेन्द्र कुमार, संगीता श्रीवास्तव एवं अश्विनी दत्त पाठक

गन्ना खेती का आधुनिक स्वरुप 17
नरेन्द्र सिंह

गन्ना बीज की प्रचलित मात्रा को कम करने तथा शीघ्र बीज गुणन हेतु अन्तरालित रोपण (एसटीपी), पॉलीबैग एवं बडचिप विधि 20
राधा जैन, अजय कुमार साह एवं चन्द्र पाल सिंह

परखनली से गन्ना बीज उत्पादन 24
संगीता श्रीवास्तव, राघवेन्द्र कुमार एवं देवेन्द्र राम मालवीय

नीलगाय का महत्व तथा इनसे फसल की सुरक्षा के उपाय 26
यीतेश कुमार, अभिषेक कुमार सिंह, पंकज भार्गव, वाय. के. यदु, अनुप्रिया चंद्राकर, ए. के. साह एवं अश्विनी दत्त पाठक

मसूर की उन्नत उत्पादन तकनीक 32
पंकज कुमार सिंह, राजीव कुमार सिंह एवं रामजीत

फसल अवशेषों को जलाने से वातावरण में दुष्प्रभाव 34
सत्यम चौरिहा, आदित्य कुमार सिंह, सतीश पाठक, नरेन्द्र सिंह एवं धीरेन्द्र कुमार

सूक्ष्म सिंचाई विधि : एक नवीन पद्धति 35
दीपक सिंह, पी.आर. ओजस्वी, ए.सी.राठौर, निशा सिंह, श्रीधर पात्रा एवं तृषा राय

पशुओं का उत्तम आहार लुसर्न 37
योगेन्द्र प्रताप सिंह, अतुल कुमार सचान, ब्रह्म प्रकाश, लाल सिंह गंगवार एवं अश्वनी दत्त पाठक

बेर वृक्ष एवं लाख की खेती 38
ए.के. जायसवाल, एस. एन. सुशील एवं शर्मिला रॉय

भारत में गुड़ उत्पादन : महत्व, वर्तमान स्थिति, बाधक तथा भविष्य 41
ब्रह्म प्रकाश, लाल सिंह गंगवार, अजय कुमार साह एवं अतुल कुमार सचान

भारतीय विद्या में जल शुद्धि पर विचार 45
कृष्ण मुरारी सिंह 'किसान'

जैविक खाद : प्रकार और विशेषताएं 52
राघवेन्द्र तिवारी, वी.पी. जायसवाल, सुधीर कुमार शुक्ल, एस.के. अवस्थी, आशा गौर एवं लालन शर्मा

गन्ने की पेड़ी पर जैव कारकों (बायोएजेंट्स) का प्रभाव 54
एस.के. अवस्थी, आशा गौर, राघवेन्द्र तिवारी, आदिल जुबैर एवं सुधीर कुमार शुक्ल

थार रेगिस्तान में उन्नत सौर शुष्क से फल व सब्जियाँ सुखाना 56
सुरेन्द्र पूनियाँ, ए.के. सिंह, दिलीप जैन एवं आर.के. सिंह

शहरों में सब्जी उत्पादन करें व निरोग रहें 58
अर्चना सिंह एवं ए.के. सिंह
मृदा की उर्वरा शक्ति को बढ़ाने में फसल अवशेषों के उपयोग का महत्व 61
ओम प्रकाश, अजय कुमार साह, अश्वनी दत्त पाठक, अभिषेक कुमार सिंह एवं पल्लवी यादव
उन्नत तकनीक अपनाएं लीची उपज बढ़ाएं 64
कुलदीप श्रीवास्तव, शेषधर पाण्डेय, रामकिशोर पटेल, राजीव रंजन राय एवं विशाल नाथ
धान में जल बचत की तकनीकः एरोबिक धान 71
राम किशोर, वरूचा मिश्रा, ए. के. मल्ल एवं अश्विनी दत्त पाठक
चुकंदर बीज उत्पादन के तरीके 73
वरूचा मिश्रा, ए. के. मल्ल, अश्विनी दत्त पाठक एवं राम किशोर

आरोग्य एवं संजीवनी प्रभाग 75—91
संश्लेषित/कृत्रिम दुग्ध की जाँच 75
अतुल कुमार सचान, ब्रह्म प्रकाश, योगेन्द्र प्रताप सिंह, लाल सिंह गंगवार एवं अश्विनी दत्त पाठक
गन्ने के कैंसर का इलाज है? 77
राघवेन्द्र कुमार, संगीता श्रीवास्तव एवं दिनेश कुमार पाण्डेय
***बोवाइन इफीमरल फीवर* (अढ़ैया बुखार)** 79
रमाकान्त एवं सत्यव्रत सिंह
धान के प्रमुख कीट एवं उनका एकीकृत प्रबन्धन 80
विनोद कुमार सिंह एवं सुरेश सिंह
पोषण दोगुना 84
मिथिलेश तिवारी, एस.आई. अनवर एवं ए.के. सिंह
पौधों के पोषण में बोरॉन का महत्व 85
प्रतिभा कुमारी, रीना कुमारी एवं बबलू शर्मा
जानो लाल सड़न को 88
प्रियम वन्दना एवं दिनेश सिंह
लाल सड़न रोग की महत्ता एवं बचाव का प्रबंधन 89
मुकेश कुमार, ए. के. मल्ल, वरूचा मिश्रा, बी. डी. सिंह एवं अश्विनी दत्त पाठक
ग्लूटेन मुक्त गन्ने का आटा 91
राजीव कुमार, अंशु सिंह, अमरेश चंद्रा, सी. पी. सिंह एवं राधा जैन

अमोद—प्रमोद प्रभाग 92—110
फ्री वाई—फाई का प्रयोग करें, परंतु सोच—समझ के 92
आशीष सिंह यादव, ब्रह्म प्रकाश, अतुल कुमार सचान, अवधेश कुमार यादव एवं योगेश मोहन सिंह
जीएसटी इंडियाः एक 17 साल पुराना सपना 94
राघवेन्द्र तिवारी, सुधीर कुमार शुक्ल, वी.पी. जायसवाल, एस.के. अवस्थी, आशा गौर एवं लालन शर्मा
ऑफिस के काम को कैसे दें बखूबी अंजाम ? 96
ब्रह्म प्रकाश
मुहावरेः अर्थ एवं उत्पत्ति 100
ब्रह्म प्रकाश एवं अभिषेक कुमार सिंह
नव वर्ष बधाई संदेश 2018 102
सुधीर कुमार शुक्ल
भ्रष्टाचार का जिम्मेदार कौन? 103
सी. पी. सिंह एवं देवेंद्र सिंह
पौष्टिकता से भरपूर उत्तराखण्ड के पहाड़ी व्यंजन 107
कु. मनीशा, वी.के. सचान, गौरव पपनै, पंकज नौटियाल एवं रश्मि
नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (कार्यालय—3), लखनऊ छमाही प्रगति 110
शब्दकोष 111
आपके पत्र 115
समाचार प्रभाग 116

राजभाषा प्रभाग

जनपदीय भाषाओं की कविता: लिखित एवं वाचिक

सूर्य प्रकाश दीक्षित
पूर्व प्राध्यापक, हिंदी विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

पिछले अंक से जारी

मगही

यह मगध क्षेत्र (बिहार) की एक महत्वपूर्ण बोली है। इसका जन्म अर्द्धमागधी अपभ्रंश से हुआ है। इसमें जनपदीय साहित्य और लोक साहित्य, दायनों उपलब्ध हैं। प्रमुख कवियों में मथुरा प्रसाद नवीन, रामनिरंजन परिमलेन्दु, शेष आनन्द मधुकर, रामकृष्ण मिश्र आदि उल्लेखनीय हैं। नवीन जी (1928–2009) का एक चर्चित संकलन है 'अखिरकहिया तक'। परिमलेन्दु जी ने मुक्त छंद में कई रचनाएँ की हैं।

मधुकर जी के प्रबंध काव्य–'एकलव्य', 'भगवान बिरसा' चर्चित हुये हैं। रामकृष्ण मिश्र की दो महत्वपूर्ण कृतियाँ है– 'बेल पत्तर' और 'सांझ बाती'।

मगही का अधिकतर काव्यवाचिक परंपरा से जुड़ा है। इसमें प्रायः वे सारे ऋतु गीत, संस्कार गीत, श्रमगीत, धार्मिक गीत और जातीय गीत किंचित् परिवर्तन के साथ प्राप्त होते हैं, जिनकी चर्चा ब्रज, अवधी, भोजपुरी के संदर्भ में की जा चुकी है। कुछ विशिष्ट लोकगीत हैं– बरही, बगुली, बरसाती, पराती आदि।

मालवी

यह मध्यप्रदेश के मालवा क्षेत्र की जनभाषा है। पहले यह नर्मदा तट का चेदि जलपद था। महिश्मती इसकी राजधानी थी। मूल रूप में भील, गोड़ आदि जनजातियाँ इसका प्रयोग करती थी। इस पर गुजराती, मराठी, राजस्थानी का काफी प्रभाव रहा है। हिंदी के प्राचीन संतकवियों जैसे– सिंगा जी की रचनाओं में मालवी की प्राचीन शब्दावली प्राप्त होती हैं। इसमें वाचिक लोक साहित्य काफी रचा गया है। मालवी का एक प्रसिद्ध गीत है– गणगौर गीत। उसमें प्रतिबिम्बित यह विराट बिम्ब वस्तुतः बड़ा विलक्षण हैं–

'शुक्र तारो रे ईश्वरी ऊगी रह्यौ तेकी मख टीकी गढ़ाव।
ध्रुव की बादली से ईश्वर तुली रही तेकी तह बोल रँगाव।
सरग की बिजलई रे ईश्वर कड़की रही तेकी मख मगजी लगाव।
नव लख तारा रे ईश्वर चमकी रही तेकी मख अंगिया सिलाव।'

यहाँ लोक कवि ने शुक्र को बिंदी, बदली को रंग बिरंगी चूनर, विजली को मगजी या गोटा, तारों को सलमा सितारों वाली कंचुकी कहा है, जिसमें चाँद–सूरज जड़े हुये हैं। यहाँ कवित्व की छटा दिखाई देती है।

मालवी के जनपदीय साहित्य के चर्तित कवि हैं– आनन्दराव दुबे, नन्दराम बालकवि वैरागी, प्रभाकर दुबे, गौरी शंकर 'गौरीश', बाबूलाल सेन, बसंत निरगुणे, निर्मल, मदन मोहन व्यास, नरेन्द्र सिंह, गिरिवर सिंह भँवर, नरहरि पटेल, हरीश निगम, टीक चन्द भवसार, सिद्धेश्वर, बालमुकुन्द रघुवंशी, श्यामसुंदर व्यास, श्याम परमार आदि। पुराने कवियों में चन्द्रमुखी का उल्लेख इतिहास ग्रंथों में किया गया हैं। मालवी के अध्येताओं में प्रहलाद जोशी, रामनारायण उपाध्याय, सूर्य नारायण व्यास आदि की महती भूमिका रही है। विद्वानों ने आनन्दराव दुबे (1918–1996) को मालवी की प्रथम कवि माना है। उनकी कृति 'गीत फिर गायौ', 'कलम कागद' में प्रकृति परिवेश का वर्णन मुक्त छंद में किया गया है। बालकवि वैरागी (1931–1982) राजनीति के साथ–साथ जनजीवन से भी गहरे स्तर पर जुड़े हुये हैं। वे मंच के बड़े लोकप्रिय कवि हैं। इनकी दो कृतियाँ 'चटक म्हारा चम्पा' तथा 'अई जाओ मैदान' काफी चर्चित रही हैं। मालवी लोकगीतों के क्षेत्र में श्याम परमार, पी.डी. शर्मा आदि के कार्य स्मरणीय हैं। इसमें भी संस्कार गीत, ऋतु गीत, श्रमगीत, धार्मिक गीत, जातीय गीत आदि के लगभग वे ही रूप प्राप्त होते हैं, जो न्यूनाधिक अन्तर के साथ बुंदेली, अवधी, ब्रज राजस्थानी आदि में मिलते हैं। मालवी की एक विशिष्ट बोली है– निमाड़ी। इसका लोकसाहित्य काफी समृद्ध है। पंडित रामनारायण उपाध्याय ने निमाड़ी लोकगीतों के सर्वेक्षण एवं विश्लेषण की दिशा में बहुत महत्वपूर्ण कार्य किया है।

मैथिली

यह मागधी अपभ्रंश से विकसित भाषा है, जो बिहार में गंगा के उत्तरी क्षेत्र और नेपाल की तराई में प्रचलित हैं। मैथिल पंडितों की भाषा होने के कारण यह विभिन्न काव्य रूपों एवं परम्पराओं से सम्पन्न है। इसका प्राचीन काव्य पर्याप्त समृद्ध है, जिसमें विद्यापति का स्थान सर्वोपरि है। विगत कुछ दशकों से मैथिली में गद्य–पद्य युक्त आधुनिक साहित्य काफी लिखा जा रहा है। शायद इसीलिये इसे स्वतंत्र भाषा का दर्जा प्राप्त हो गया है।

आधुनिक मैथिली कवियों में प्रमुख हैं– 1. सुरेन्द्र झा 'सुमन (1910–2002) इनके तीस काव्य संग्रह प्रकाशित हैं, जिसमं 'उत्तरा', 'पयस्विनी' आदि प्रसिद्ध हैं। इनकी कविता का एक नमूना अवलोकनीय हैं–

'गंधवती धरतीक समस्त सुरभि गुण अणु–अणु संचित।
सलिलक रस लै पवन परस दैं विविध रूप रस व्यंजित।
तरु–तरु गुल्म लतावलि लुकि–लुकि ब्रन्ते रंजित झरि झरिके।'

बैद्यनाथ मिश्र 'यात्री' (1911–1998) हिन्दी में ये नागार्जुन के नाम से प्रसिद्ध हैं। मैथिली में इन्होंने 3 उपन्यास और 2 काव्य रचे हैं, जिनमें 'पत्रहीन गाछ' श्रेष्ठ है।'माँ मिथिले' नामक कविता में वे लिखते हैं–

'मुनिक शान्तिमय पर्ण कुटी में तापसीक अचपल भृकुटी में सम रवणरत श्रुतिक कुटी में छल अंधक आवास। बिसरिगेल छीसे हम किन्तु ने झाँपल इतिहास।'

आरसी प्रसाद सिंह (1936–1996) के सात काव्य संग्रह प्रकाशित हैं, जिनमें 'सूर्यमुखी' साहित्य अकादमी द्वारा पुरस्कृत है। एक कविता में जीवन पर विचार करते हुये वे लिखते हैं–

'मानवक संसार चाहे समस्या जे विकट हो किन्तु जीवन ते सदा आनन्द उच्छल स्वर भरल अछि। जड़ विशेषक दृष्टि सं अभिनाश चाहे सन्निकट हो किन्तु यौवन ते नवल किछु सृष्टि रचना में पड़ल अछि।'

जीवकान्त (1936–2013) ने काव्य, संस्मरण और बाल साहित्य के क्षेत्र में बहुत लिखा है। 'तकैत अस चिड़ै' इनका पुरस्कृत काव्य है।

कीर्ति नारायण मिश्र (1933) का पुरस्कृत काव्य है, ध्वस्त होइत शान्त स्तूप। इन्होंने प्रायः मुक्त छंद का प्रयोग किया है।

सुकान्त सोम (1950) ये मैथिली के नये कवियों और उपन्यासकारों में गिने जाते हैं।

राजकमल चौधरी (1912–1967) इन्होंने हिंदी और मैथिली दोनों में महत्वपूर्ण रचनाएँ की हैं। एक उदाहरण देखिये–

सब पुरुष शिखण्डी, सब स्त्री रासक राधा सब कमीन में धनुष तानिक बैसल रक्त पिपासल व्याधा।

राजकमल हिंदी में बीर कविताओं के लिये चर्चित रहे हैं।

मैथिली का लोकसाहित्य लगभग एक हजार वर्ष पुराना है। इसमें सोहर जनेऊ, समदाऊनी (बिदाई) नामक संस्कार गीत फाग (तिरुहुती) चैता, बारहमासा मल्हार (सावन) जैसे ऋतु गीत नचारी, झूमर, बटगामिनी (पंथक गीत), बिरह–संदेश काव्य, लोककथाएँ और नाटिकाएँ बहुत बड़े परिमाण में प्राप्य हैं। इसका व्याकरण, शब्दकोश, पाठ्यक्रम–निर्माण और शोध–समीक्षा का स्तर भी सन्तोष प्रद है। मैथिली की स्वतंत्र लिपि है, जो बंगला से काफी प्रभावित है। इसका एक पुराना रूप था अवहट्ट या अवहंस। विद्यापति ने इसमें कीर्ति पताका की रचना की थी, जो अवधी के सन्निकट है। मैथिली का बंगला से भी घनिष्ठ संबंध है। यह भाषा संस्कृत से भी बहुत प्रभावित है

राजस्थानी

यह हिंदी की पश्चिमी विभषा है, जिसके भीतर कई बोलियाँ, जैसे– मेवाती, अहीरबाटी, मारवाड़ी मेवाड़ी, जयपुरी, ढूँढाणी, हाड़ोती बागडी, शेखावाटी, भीली आदि। राजस्थान और राजस्थानी संज्ञाएँ परवर्ती हैं। इसके पुराने नाम हैं– मरुप्रदेश, थार राजपूताना आदि। पहले यहाँ की भाषा मारू और गुर्जर अर्थात् गुजराती राजस्थानी मिश्रित थी। इसका पूर्व रूप था डिंगल। यह अपभ्रंश भाषाओं से विकसित हुई थी। ब्रज भाषा से प्रभावित राजस्थानी को 'पिंगल' यनाम दिया गया था। इसमें आदिकालीन हिन्दी साहित्य की अनेक काव्य परंपराओं (जैसे– रासो रासक, फाग साहित्य, जैन काव्य, बीर गाथाएँ, चरितकाव्य आदि) से संबंधित रचनाएँ हुई हैं। यथा– भरतेश्वर बाहुबली रास (1168), नेमिनाथ कृत 'बारहमासा' कुमार पाल 'प्रतिबोध', बीसलदेव रास, 'ढोला मारू रा दूहा', खुमाण रासो, चन्दनबाला रास, राउल बेल, स्थूलिभद्ररास, प्रताप रासो आदि। इस भाषा में चारण कवियों का बड़ा योगदान रहा है। मध्ययुग के प्रमुख रचनाकार हैं– ईसरदास, दुरसा, वीर भाण रतनू करणीदान, जोधराज, बाँकीदास, राठौड पृथ्वीराज, जाम्भांजी, मीराबाई, अग्रदास, रज्जब, सुंदरदास, दादूदयाल आदि। इसमें विभिन्न प्रकार की लोकगाथाएँ, लोककथाएँ प्राप्त होती हैं। राजस्थानी का गद्य काफी विकसित है। प्राचीन राजस्थानी में कई वचनिकाएँ रची गयी हैं। इसके आधुनिक कवियों में प्रसिद्ध हैं– 'वंश भास्कर' और 'वीर सतसई' के रचयिता सूर्य मल्ल मीसण, मुरारिदान, उमरदान, मोहन सिंह, विजयदान देथा, कन्हैया लाल सेठिया, नारायण सिंह भाटी, रघुराज सिंह हाड़ा चन्द्रप्रकाश देवल, गणेशीलाल उस्ताद, रेंवतदान, मनोहर शर्मा, ननद भारद्वाज, मणि मधुकर, सत्यप्रकाश जोशी, गजानन वर्मा, आई दान सिंह आदि। इसमें उपन्यास, कहानी निबन्ध, नाटक आदि भी बड़ी मात्रा में प्रकाशित हुये हैं। इस क्षेत्र में रानी लक्ष्मी चकूण्डावत, नृसिंह राजपुरोहित, नानूराम, मालचंद विवाडी, मदन केवलिया, यादवेन्द्र शर्मा आदि का महत्वपूर्ण स्थान है। पत्रकारिता, अनुवाद और शोध समीक्षा भी इसमें अपेक्षाकृत काफी है।

राजस्थानी लोकसाहित्य में विभिन्न प्रकार के संस्कार गीत, ऋतु गीत, श्रमगीत, लोककथाएँ, लोकगाथाएँ आदि प्राप्य हैं। तात्पर्य यह है कि राजस्थानी हिंदी की एक विकसित विभाषा है। साहित्य अकादमी ने इसे स्वतंत्र साहित्यिक भाषा की मान्यता दी है। संप्रति राजस्थानी के नाम पर मारवाड़ी का मानक रूप प्रचलित होता हुआ दिखाई दे रहा है।

राजस्थानी लोकसाहित्य में महत्वपूर्ण है पँवाडे, जैसे पाबूजी का पड़, निहाल दे ढोला मारू। यहाँ के लोकगीतों में हल्दी, विवाह, बसन्त गीत, सावन गीत लोकप्रिय हैं। संस्कार गीतों में– मंडप, ओलू, मामेरा, घोड़ी विदाई, बनरी, माहेरो आदि प्रमुख हैं। ये गीत तार वाद्य, फूँक वाद्य और ताल वाद्य के साथ गाये जाते हैं। गायक जातियाँ हैं– मीरासी, डफाली, लंगा, नट, पातर, रावल आदि। लोकनाट्यों में 'रामलीला' का काफी प्रचलन हैं। राजस्थानी का वात–साहित्य वात साहित्य भी बड़ा समृद्ध हैं। निष्कर्ष यह है कि राजस्थानी का जनपदीय और वाचिक साहित्य अग्रगण्य है।

वज्जिका

यह बिहार में प्रचलित भोजपुरी और मैथिली के बीच की बोली है। इसमें काफी लोक साहित्य है, साथ ही कुछ जनपदीय साहित्य भी। इसके प्रसिद्ध कवियों में हैं–

अवधेश्वर 'अरुण' (1938):– इनकी कविता के कुछ नमूने द्रष्टव्य हैं–

'गोर–गोर चाँदनी के मधुर किरनियाँ लहर के मंद–मंद सोर।
पुरवा पवनवा पर खिरके बँसुरिया कि गंड़क में उठत हिलोर।
धानी रंग अँचरा कुसुम रंग चुनरी, नील रंग चोली बूटेदार।
पहिरि चलिल सखी पिया के नगरिया मन में उमँगवा अपार।

रामेश्वर प्रसाद (1940):– इन्होने कविता, निबन्ध और समीक्षा क्षेत्र में काफी काम किया है। इनकी प्रसिद्ध कृति हैं– 'कुन्ती का बेटा' इनके गीतों में गहरी श्रृगारिक चेतना दिखती है।

हरेन्द्र सिंह 'विप्लवः':– इन्होंने –कच देवयानी' नामक एक महाकाव्य लिखा है और कई व्यंग्य गीत भी रचे हैं।

रामविलासः– वज्जिका में इनके कई काव्य और कहानी संकलन प्रकाशित हैं, जैसे– अमराइया के इजोर, सत भइया, घरवास आदि। लोकगीतों की धुन में रचित इनका एक प्रसिद्ध गीत है–

'नया साल में कुहुके कोइल कर्र पुकार, हम्मर राजा हो।
अलक तरापी गेल सरक सब पीटे रोज कपार, हम्मर राजा हो।'

संप्रति वज्जिका विकास पथ पर अग्रसर दिखाई देती है।

हिमाचली

यह हिमाचल प्रदेश की जन भाषा है। इस पर पंजाबी का काफी प्रभाव दिखाई देता है। इसमें गद्य और पद्य के विभिन्न रूप, साथ ही लोक साहित्य की विभिन्न विधाएँ खोजी जा रही हैं। जनपदीय हिमाचली में काव्य रचना करने वाले ये कवि विशेष रूप से उल्लेख्नीय हैं–

डॉ0 गौतम शर्मा (1938):– इनकी कविता का एक नमूना देखिये

'पुन्या री वाँक जाहलू पहाड़े ते झाँक दी।
संजोगा ने सुपणे आं ने त्रिकदे रैह असां।'

नरेन्द्र अरूण (1939) इन्होने काव्य एवं नाटक लेखन के साथ कई अनुवाद भी किये हैं। अपनी बोली का स्तवन करते हुये वे लिखते हैं

'लिखो एक इतहास नवांजा जित्तो एक बसाह नवांजा।
सरी दुनिया बिच्चे चैहको भई जाई सी प्यारी बोली।'

कृष्ण गोपाल 'पीयूश गुलेरी' (1940) ये हिमाचली के नए रूप विन्यास के क्षेत्र में सक्रिय हैं। इनका श्वा है

दिक्ख इह जो दिक्खा कनै नित नौआं लिक्खा।'

स्पष्ट है कि हिमाचली बोली अपने अस्तित्व निर्माण की दिशा में गतिशील है।

हरियाणवी

इसे समय–समय पर अनेक नाम दिये गये, जैसे कोरवी, बाँगड़ू, मेवाती, अहीरबाटी, सरहिन्दी, जाटवी आदि। इसे 1966 से 'हरियाणवी' कहा जा रहा है। इस पर ब्रज, राजस्थानी और खड़ीबोली का गहरा प्रभाव है। कुछ लोग कोरवी तथा बागड़ी बाँगड़ू से इसे भिन्न मानते हैं और कुछ इन्हें हरियाणवी की बोली मानते हैं। हरियाण में मानक हिन्दी तथा हरियाणवी के अनेक रचनाकार हैं/रहे हैं। पुराने कवियों में स्मरणीय की बोली मानते हैं। हरियाण में मानक हिन्दी तथा हरियाणवी का पर्याप्त पुट प्राप्त होता है, जैसे– 'एक अचम्भा हमनै सुण्यौ बेटी न जाया बाप।'

कुछ इतिहास ग्रन्थों में अकबरकालीन एक कवि 'वल्ल' का नामोल्लेख किया गया है। विद्वानों ने कबीर की रचनाओं में हरियाणवी के कई शब्द इंगित किये हैं। यों, हरियाणवी के प्रथम महत्वपूर्ण कवि हैं– गरीबदास (1717)। इनकी वाणी गुरु ग्रन्थ साहब में संकलित है। कहा जाता है कि इन्होंने 18हजार पर रचे थे। इनकी कविता का एक नमूना द्रष्टव्य है–

'सतगुरु पारस रूप है हमरी लोहा जात।
पलक बीच कंचन करे पलटै पिण्डा गात।।'

अन्य कवियों में उल्लेखनीय हैं–

नित्यानंद (लगभग 1800 ई0) इनकी कृति है नित्यानंद भजन। ये मुख्यतः नीति और भक्ति के कवि थे। इनके बोल हैं–

'चादर मँहगे मोल की दिन–दिन मैली होय।
नित्यानंद कट जायेगी धोय सके तो धोय ।'

जंभोजी ये विश्नोई संप्रदाय के संस्थापक परम पूज्य सन्त रहे हैं। इन्होंने अद्वैत और निर्गुण सगण समन्वय से संबद्ध अनेक रचनाएँ की हैं, जो 'सबदवाणी' में संकलित हैं।

जैतरा (1737):– इनके काव्य 'द्रौपदी चीर हरण' का उल्लेख इतिहास ग्रन्थों में किया गया है।

ब्रह्मानन्द सरस्वती (1908–1973) इनकी दो कृतियाँ प्राप्त हुयी हैं– ब्रह्मानन्द पचासा, नीति विचार। अनय संत कवियों में उल्लेखनीय हैं– निश्छल दास, विचारदास शम्भूदा, साहिब सिंह, घासीराम आदि।

हरियाणवी में प्रेम काव्य रचने वाले शेख फरीद सैयद गुलाम हुसैन, खैरू शाह कलंदर, अलखदास और गुलाम जिलानी का उल्लेख हुआ है। रामकाव्य परम्परा से जड़े हुये हैं बालकराम, जिन्होंने रामायण साँग की रचना की तथा अहमदबक्स थानेस्वरी, जिन्होंने 6 काण्डों की हरियाणवी रामयण लिखी। कृश्ण काव्य परम्परा से जुड़े कवि शम्भूदास (1854–1908) जींद के राजकवि थे। उनकी तीन कृतियाँ चर्जित हैं– कृष्ण लीला, रुक्मिणीलीला तथा जोगन लीला। यहां शंकरदास, भांडा ठाकुर आदि ने 18वीं शती में लावनी, कव्वाली, झूलना, ख्याल आदि का काफी विकास किया।

हरियाणवी में लोक गाथाएँ बहुत हैं। प्रसिद्ध गाथाएँ– पूरनमल, गूगापीर, निहाल दे गाथाएँ पवाँडे, रसिया, आल्हा, ढोला, जगदे का पँवारा, राव किशन की गोपाल गाथा, 'शीलादे', 'राजा रसालू' आदि। लोक नाट्यों में प्रसिद्ध हैं– तमाशा, साँग, नकल, झुमका और साँगीत। हरियाणवी लोकगीतों में मुख्य हैं– जनम, साध, ब्याई, मल्हौर, पटका, लगन, विवाह, भात, रतिजगा, उबटन, घुड़चढ़ी, खोडिया, (नकटौरा) बड़हार, लाड़ो, बंघणा (बन्ना) कन्यादान ढुकवा (तोरण), गाली गीत जोगिंया, दोहो आदि। मृत्यु पर यहाँ शोक गीत गाने की प्रथा है। यहाँ के ऋतु गीत हैं गणगौर, तीज, नौमी, साँझी, बसंत, सावन, बारहमासा आदि। श्रमगीतों की भी यहाँ बहुतायत है। यहाँ के लोक धर्मी नाट्य कर्मी रहे हैं–

लखमीचंदः– इन्हें हरियाणा का सूर्य और 'साँग सम्राट' कहा जाता है। इन्होंने साँग मण्डली की स्थापना की औरन लगभग तीन दर्जन साँग लिखे। इनकी भाषा ब्रज से मिलती जुलती है, यथा–

'वृन्दावन में धेनु चरइया, कालाधाम के नाग नथइया,
तुमने द्रोपदी की टेर सुनी, काट दिये फंदे।'

ठसी शैली में बाजे भगत ने हीर राँझा तथा नलदमयंती का साँग, साँग, माँगेराम ने अमर सिंह राठौर, पिंगला और भरथरी का साँग, भारत भूषण ने कई राष्ट्रीय साँग लिखे। इस साँग परम्परा में रामकृष्ण (1925–2003) मेहर सिंह, ताऊ साँगी आदि नाम भी स्मरणीय हैं।

हरियाणा के जनपदीय साहित्य में इन रचनाकारों का विशिष्ट योगदान है–

तारादत्त विलक्षण (1917):– इन्होंने आकाशवाणी के माध्यम से आधुनिक हरियाणवी का काफी प्रचार–प्रसार किया है।

रामेश्वर दयाल शास्त्री कृतियाँ –हरियाणवी रामायण, वीरांगना आदि।

श्रीराम शर्मा (1907–1966) कृतियाँ–कृतियाँनरसी का भात, राजबाला आदि।

हरियाणा निवासी रचनाकारों ने मानक हिन्दी में काफी लिखा है। इनमें उल्लेखनीय हैं राजकवि उदय भानु हंस, ज्ञान प्रकाश विवके', निशांत केतु, राजकुमार निजात, निर्मल पीड़ी, विजेन्द्र कुमार जैमिनी, रामेश्वर प्रसाद खण्डेलवाल, जयनाथ ललिन, हरिश्चन्द्र वर्मा, छविनाथ त्रिपाठी, सुमन चन्द्र, रामनिवास माधव, लालमंगल माधव कौशिक, राकेश वत्स आदि।

इस विभाषा में गद्य विधाओं की भी शुरुआत हुयी है, जिससे हरियाणवी के उत्तरोत्तर विकास के प्रति आश्वस्त हुआ जा सकता है।

हिंदी जगत की ये विभाषाएँ और बोलियाँ विभिन्न अंचलों की सांस्क तिक धरोहर है। मानक हिन्दी के प्रभाववश इनका प्रयोग एवं प्रचलन दिनोंदिन कम होता जा रहा है। यह हिंदी के लिये अनिष्ट कारक होगा। आवश्यकता यह है कि–

1. इन बोलियों का भाषा भूगोल तैयार कराया जाये तथा विभाशा, बोली, उपबोली के रूप में इन्हें चिन्हित किया जाये।
2. जनपदीय स्तर पर इन रचनाकारों का सर्वेक्षण करवाकर इनका प्रमाणिक परिचय प्रस्तुत किया जाये।
3. प्रत्येक बोली में व्याकरण, शब्दकोश, मानक उच्चारण आदि सुगठित कराए जायें।
4. इनकी श्रेष्ठ कविताओं, कहानियों, एकांकी और निबन्धों के संकलन तैयार कराये जायें।
5. प्रत्येक भाषा–साहित्य के प्रामाणिक इतिहास ग्रन्थ तैयार कराये जाये।
6. इन्हें पाठ्यक्रम, शोध एवं समीक्षा में स्थान दिया जाये।
7. इनकी श्रेष्ठ कृतियों के प्रकाशन हेतु अनुदान तथा प्रोत्साहन पुरस्कार प्रदान किये जायें। इनके संरक्षण– संवर्द्धन का अर्थ होगा हिन्दी का सवांगीण विकास।

माघ अंधेरी सप्तमी, मेह बिज्ज दमकंत।
मास चारि बरसै सही, मत सौचें तू कन्त।।

यदि माघ बदी सप्तमी को बदली छाई हो और बिजली चमके तो आगामी बरसात में चार महीने अच्छी वर्षा होगी।

राजभाषा प्रभाग

हिंदी के प्रतिष्ठापन के प्रति सजग भाषा चिंतकः राजेन्द्र प्रसाद

उषा सिन्हा
आचार्य एवं अध्यक्ष (पूर्व), भाषा विज्ञान विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

स्वतंत्र भारत के प्रथम राष्ट्रपति, भारत रत्न डा. राजेन्द्र प्रसाद जी सच्चे देशभक्त, कुशल राजनीतिज्ञ, न्यायविद्, शिक्षाविद्, कर्मठ समाजसेवी और सहज भाषा प्रयोग व हिंदी के प्रबल समर्थक थे। उनके महान् व्यक्तित्व में सादगी, सरलता, शालीनता, संयम एवं सात्विकता का अद्‌भुत समन्वय था। विनम्रता की मूर्ति राजेन्द्र बाबू शांत स्वभाव के, निरभिमानी, सहनशील सौम्य एवं गंभीर प्रकृति के थे। उन्हे महामानव, महापुरुष देशरत्न, देशविभूति, राष्ट्रहितैषी, अजातशत्रु, हरिजनों के मसीहा, रचनात्मक कार्यकर्ताओं के मसीहा, मानवता के तीर्थ एवं मर्यादा पुरुषोतम आदि अनेकानेक सार्थक विशेषणों से विभषित किया गया। राजेन्द्र बाबू ने अपने जीवन में जो त्याग और राष्ट्र के साथ–साथ मानवता की जो सेवा की वह भारत के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में रहेगी। परिश्रम, प्रतिभा और पुरुषार्थ के बल पर वे प्रत्येक क्षेत्र में सर्वोपरि रहे।

महात्मा गांधी के सच्चे अनुयायी राजेन्द्र बाबू ने उन्हें सदैव अपना पथ–प्रदर्शक और नेता माना। महात्मा गांधी ने भी उनकी प्रशंसा करते हुए लिखा था–''मेरे साथ काम करने वालों में सबसे अच्छे लोगों में राजेन्द्र बाबू एक हैं..... उन्होंने अपने प्रेम से मुझे ऐसा अपंग बना दिया था कि उनके बिना मैं एक कदम भी आगे न रख सकता था। राजेन्द्र बाबू का त्याग हमारे देश के लिए गौरव की वस्तु है। नेतृत्व के लिए उन्हीं के समान आचरण चाहिए। उनका जैसा विनम्रतापूर्ण व्यवहार है और प्रभाव है, वैसा कहीं भी किसी भी नेता का नहीं। राजेन्द्र बाबू के पवित्र चरित्र को पढ़कर कौन कृतार्थ नहीं होगा। कम से कम राजेन्द्र एक ऐसे व्यक्ति हैं, जिन्हें मैं जहर का प्याला दूँ तो वह उसे निःसंकोच पी जाएँगे।''

राजेन्द्र बाबू के विषय में श्री जय प्रकाश नारायण ने लिखा था–''गांधी जी ने अपने दरबार में कई रत्न इकट्ठे किए थे। उनमें देशरत्न, राजेन्द्र बाबू ही कहे गए। उनमें बौद्धिकता, प्रखरता आदि सभी बेमिसाल थीं। महात्मा गांधी को छोडकर देश के नेताओं में शायद ही कोई दूसरा हो, जिसे हम भारतीयता की जीवित मुर्ति कह सकें। रूप–रंग से, वेश–भूषा से, रहन–सहन से, भीतर–बाहर से, दिल और दिमाग से, यानी हर प्रसाद हर प्रकार से वह भारतीय थे।''

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के प्रभावशाली व्यक्तित्व का चित्रण करते हुए श्रीमती सरोजनी नायडू ने लिखा था। "बाबू राजेन्द्र प्रसाद के भव्य व्यक्तित्व के बारे में स्वर्ण–लेखनी को मधु में डुबोकर लिखना होगा। उनकी असाधारण प्रतिभा, उनके स्वभाव का अनोखा माधुर्य, उनके चरित्र की विशालता और आत्मत्याग के उनके महान् गुणों ने संभवतः उन्हें हमारे सभी नेताओं से अधिक व्यापक, व्यक्तिगत रूप से प्रिय बना दिया है।'' युगपुरुष डॉ. राजेन्द्र प्रसाद का योगदान केवल स्वतंत्रता प्राप्ति आंदोलन में ही नहीं रहा बल्कि स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरांत भी संविधान के अध्यक्ष के रूप में संविधान के निर्माण और नवभारत के निर्माण में भी उनका महत्वपूर्ण योगदान रहा। राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त ने उनकी प्रशस्ति में लिखा था :

देश ने तुमको बनाया राष्ट्रपति श्रीमंत।
किंतु अपने आपको तुमने बनाया संत।।

राजेन्द्र प्रसाद जी का जितना समर्पण देश और राजनीति, भारतीय संस्कृति, शिक्षा और सामाजिक सरोकारों के प्रति था उतना ही भाषा के प्रयोग के प्रति और हिंदी के प्रतिष्ठापन के प्रति भी था। हिंदी के लिए उनकी निष्ठा उद्धरणीय है।

यद्यपि अंग्रेजी, फारसी एवं संस्कृत के विद्वान राजेन्द्र बाबू का आरंभ में हिंदी–ज्ञान उतना परिपक्व नहीं था। जैसा कि अपनी आत्मकथा' में उन्होंने लिखा है– ''हिंदी पढ़ने का तो कभी मौका ही नहीं आया। हिंदी का अक्षर – मात्र जानता था। परीक्षा में एक पर्चा आता था जिसमें अंग्रेजी से किसी देशी भाषा में और देशी भाषा से अंग्रेजी में उलथा करने को कुछ दिया जाता था। एंट्रेन्स और एम.ए. की परीक्षा में मैंने देशी भाषा के रूप में उर्दू ही ली थी। बी.ए. में पहुँचकर इच्छा हुई कि हिंदी ले लूँ। हिंदी में पास भी कर गया। हिंदी से संबंध इसी प्रकार आरंभ हुआ।''

(आत्मकथा (संक्षिप्त) पृष्ठ 68)

राजेन्द्र बाबू ने स्पष्ट किया है कि कलकत्ता प्रवास के दौरान वहाँ के लेखकों, साहित्यकारों, विद्वानों से उनका परिचय बढ़ता गया। कलकत्ता में हिंदी– साहित्य –परिषद् की स्थापना हुई जिसमें वे काफी रूचि लेने लगे। अनेक अधिवेशनों में, अनेक विद्वानों के साथ स्वयं भी समय–समय पर लेख लिखकर प्रस्तुत भी करते थे। अखिल भारत वर्षीय हिंदी– साहित्य– सम्मेलन आयोजित करने की योजना भी बनी और काशी में पहला अधिवेशन हुआ जिसमें मालवीय जी सभापति हुए थे। 1912 के दिसम्बर में कलकत्ता में पंडित बदरीनारायण चौधुरी 'प्रेमधन' की अध्यक्षता में हिंदी–साहित्य सम्मेलन संपन्न हुआ था। राजेन्द्र बाबू के भाषा–प्रेम का ही उल्लेखनीय उदाहरण है बिहार विद्यापीठ की स्थापना। इस प्रकार हिंदी के प्रचार–प्रसार के बुनियादी काम में उनकी सेवाएँ सदैव उपलब्ध रहीं।

राजेन्द्र प्रसाद जी ने सदैव सहज एवं बोधगम्य भाषा प्रयोग को प्राथमिकता दी। उन्होनें स्वयं अपने लेखों, पत्रों, डायरी–लेखन एवं भाषणों में सहज एवं संप्रेषणीय भाषा का प्रयोग किया। 17 अगस्त 1925 को काशी विद्यापीठ में दिए गए दीक्षांत भाषण, अनेक सार्वजनिक भाषणों तथा पटना विश्वविद्यायल में 28 फरवरी 1963 को प्रस्तुत दीक्षांत भाषण, भाषा– प्रयोग की दृष्टि से स्मरणीय है। उल्लेखनीय है कि अस्वस्थ होने के कारण पटना

में राजेन्द्र बाबू दीक्षांत भाषण स्वयं प्रस्तुत नहीं कर सके थे और उनकी अनुपस्थिति में बिहार विधान सभा के अध्यक्ष डॉ. लक्ष्मी नारायण सुधांशु जी ने उसे पढकर सुनाया था' संध्या को यह दीक्षांत समारोह हुआ और रात्रि में सवा दस बजे डॉ. राजेन्द्र प्रसाद का देहावसान हो गया था।

राजेन्द्र बाबू द्वारा लिखित कृतियाँ यथा–'आत्मकथा, साहित्य, शिक्षा, और संस्कृति भारतीय शिक्षा, बापू के कदमों में, खंडित भारत' आदि– सहज, बोधगम्य एवं प्रभावी भाषा की ज्वलंत उदाहरण हैं। डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी ने स्पष्ट लिखा है– 'पूज्य डॉ. राजेन्द्र प्रसाद सहज मानव होने के कारण ही सहज भाषा लिख और बोल सकते थे। उनकी भाषा से उनकी आंतरिक सच्चाई प्रकट होती थी। वे जो कहना चाहते थे वह स्पष्ट और सहजगम्य होता था। उनकी भाषा का यह गुण बहुत ही आकर्षक है..... । भाषा में बोलने वाले का व्यक्तित्व बोलता है। राजेंद्र प्रसाद के जैसी भाषा लिखने के लिए, पहले राजेन्द्र प्रसाद होना पड़ेगा.... । उनके भाषणों में उनका हृदय प्रतिबिम्बित होता था... । हिंदी के लिए यह गर्व और गौरव की बात है कि उसमें राजेन्द्र प्रसाद की अनुकरणीय शैली और आंतरिक सच्चाई की सहज अभिव्यक्ति हुई है।

(डॉ. राजेन्द्र प्रसाद : एक युग – स्मरण, पृष्ठ 134–135)

(मुख्य संपादक : वाल्मीकि चौधरी)

राजेन्द्र बाबू उन लोगों में थे जिनके कारण संविधान सभा ने हिंदी को मान्यता दी और जब तक वे राष्ट्रपति रहे, उन्होने अपने भाषणों में चाहे संसद में हो या विदेश में, सदैव हिंदी को प्राथमिकता दी। वे चाहते थे कि हिंदी राजभाषा बने। 02 अगस्त 1945 को उन्होंने श्री बनारसी दास चतुर्वेदी को लिखा था –

''अनेकानेक हिंदी– लेखक भी भाषा की जटिलता में ही उनकी सुंदरता देखते हैं। हम बहुधा भूल जाते हैं कि सादगी में सुंदरता और ओज भी है। इसलिए हिंदी को किसी भाषा से शब्दों को लेने में संकोच नहीं करना चाहिए। यद्यपि हम केवल फारसी–अरबी ही नहीं, अंग्रेजी इत्यादि यूरोपीय भाषाओं से भी शब्द लेते हैं और हमें लेने चाहिए, हम यह नहीं भूल सकते कि जहाँ पारिभाषिक शब्दों की जरूरत पड़ेगी, हमें अधिकाधिक संस्कृत पर ही भरोसा करना पड़ेगा और यह उर्दू वाले इसके लिए हमसे कुढ़ते हैं तो हम इससे नहीं डरते। पर हिंदी–उर्दू का झगड़ा केवल इतना ही नहीं है, उसमें कुछ साम्प्रदायिकता भी देखता हूँ। यह बात दोनों ओर से हो रही है और इसलिए जटिलता बढ़ती जा रही है। हिंदी के लिए कोई डर नहीं है क्योंकि उसकी नींव मजबूत है। यदि हिंदी वाले दूरंदेशी से काम लें तो हिंदी ही राष्ट्रभाषा बन सकती है अर्थात् हिंदी का वह रूप, जो मैं चाहता हूँ जिसमें बहिष्कार की नीति से काम नहीं लिया जाता। जिसमें किसी जाति अथवा भाषा के प्रति द्वेष का भाव नहीं है' और जो जनता के लिए जनता के लिए सुगम और सहज में समझ में आने वाली है। राष्ट्रभाषा बनने के लिए उसे प्रांतीय भाषाओं के निकट जाना होगा और वह तभी हो सकता है, जब उसमें देशी शब्दों की ही बहुतायत हो, विदेशी शब्दों की नहीं..... । जहाँ एक ओर अहिंदी भाषियों को हिंदी सिखाने का प्रयत्न हो रहा है, वहाँ उन लोगों से जो हिंदी के रूपांतर को अपनी भाषा मानते हैं और जो उसे बोलते हैं और लिखते हैं, हिंदी जटिल बनाकर छीन ली जा रही है। मैं इसमें बुद्धिमानी नहीं देखता।''

(डॉ. राजेन्द्र प्रसाद–एक युग संस्मरण– पृ. 174)

(मुख्य संपादक–वाल्मीकि चौधरी)

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद ने हिंदी के स्वरूप के संबंध में अपने अनेक भाषणों के माध्यम से संकेत किया था। उन्होने हिंदी के देश व्यापी प्रसार के लिए सरल शब्दावली के प्रयोग और अंग्रेजी या अन्य भारतीय भाषाओं के प्रचलित शब्दों को उदारतापूर्वक ग्रहण करने पर बल दिया। संस्कृत के क्लिष्ट अथवा अप्रचति शब्दों का प्रयोग न करने पर जोर दिया। अपने एक भाषण में उन्होंने कहा था–

'आज उर्दू लिखने वालों में एक चाल चल गई है कि फारसी और अरबी के बड़े–बड़े शब्द लाकर अपने लेखों को भर डालते हैं और हिंदी के लिखने वाले भी इस दोष से बचे नहीं हैं उनमें भी बहुतेरे, संस्कृत के बड़े–बड़े शब्द अपनी रचनाओ में भर देते हैं।'

(साहित्य, शिक्षा और संस्कृत–पृष्ठ 58–60)

इसी प्रसंग में हिंदी कवि 'हरिऔध' तथा उर्दू के शायर 'इकबाल' की रचनाओं में से सरल और क्लिष्ट भाषा के उदाहरण देते हुए उन्होंने उनकी सहज शब्दावली से युक्त रचनाओं की लोकप्रियता, संवेदनशीलता, और प्रवाह की ओर संकेत किया है।

(साहित्य, शिक्षा और संस्कृति– पृष्ठ 58–60)

राजेन्द्र बाबू ने अपनी पुस्तक 'साहित्य' शिक्षा और संस्कृति' में हिंदी के शब्द–भंडार की पूर्ति के लिए संस्कृति से शब्द– ग्रहण करने के साथ ही अन्य भाषा से सरल एवं सटीक अर्थयुक्त शब्द ग्रहण करने को भी स्वीकार किया। प्रांतीय भाषाओं की शब्दावली से, उनके प्रयोगों से और उनके अच्छे वाक्यों से हिंदी को भूषित करने को भी महत्व दिया। राष्ट्रभाषा के रूप में हिंदी के स्वरूप पर विचार करते हुए राजेन्द्र बाबू ने व्याकरण संबंधी कतिपय प्रयोगवात कठिनाइयों, हिंदी लिखने की भिन्न–भिन्न शैली एवं एक ही शब्द की कई वर्तनी की ओर ध्यान आकृष्ट करते हुए उसके निराकरण की दिशा में सार्थक विचार व्यक्त किए।

(भारतीय शिक्षा–पृ. 111, साहित्य शिक्षा और संस्कृति – पृ. 87 एवं पृ. 63)

हिंदी के प्रयोग एवं प्रचार–प्रसार के संदर्भ में एवं उसके स्वरूप के संदर्भ में राजेन्द्र बाबू का दृष्टिकोण अत्यंत उदार और राष्ट्रीय रहा है। उन्होंने अनुवाद की आवश्यकता और पारिभाषिक शब्दावली के प्रयोग के विषय में भी विचार व्यक्त किए। हिंदी साहित्य की समृद्धि के लिए उन्होंने मौलिक कृतियों के सृजन के साथ ही अन्य भाषाओं की महत्वपूर्ण कृतियों के अनुवाद को आवश्यक बताया। इसी संदर्भ में उन्होंने सफल अनुवाद के लिए लिखा है– 'अनुवादक को केवल उन दोनों भाषाओं का, जिनमें कि एक दूसरी में अनुवाद करना है, अच्छा ज्ञान होना अनिवार्य ही नहीं है, बल्कि उस विषय पर भी उसका अधिकार होना चाहिए, जिस विषय से वह अनुवाद किया जाने वाला ग्रंथ संबंध रखता है।

(साहित्य, शिक्षा और संस्कृति, पृ. 90)

राजभाषा प्रभाग

भारत और जनभाषा

हिंदी दिवस (14 सितम्बर) के अवसर पर प्रस्तुत भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉ. राजेंद्र प्रसाद के ऐतिहासिक लेख के महत्वपूर्ण अंश।

भारत के लिए एक जनभाषा की आवश्यकता है। यह निश्चित हो जाने पर प्रश्न यह उठता है कि यह कौन सी भाषा है जो सबके लिए उपयुक्त है। कुछ ग्रंथों में यह कहा गया है कि जब अंग्रेजी को यह स्थान पहले ही मिला हुआ है तो किसी भारतीय भाषा द्वारा उसे द्विस्थापित करने की क्या आवश्यकता है और उसे ही क्यों नहीं चलते रहना चाहिए। यह सच है कि वर्तमान समय में एक जनभाषा से जो आशा की जाती है और जो उसकी जरूरत है। वह अंग्रेजी कर रही है। अंग्रेजी से यह भी लाभ है कि उसके पास समृद्ध और लचीली शब्दावली है, वह दुनिया के बहुत बड़े भू–भाग में समझी जाती है और उसने अपना एक अंतर्राष्ट्रीय स्तर भी बना लिया उसकी उपयोगिता है और किसी एक राष्ट्रीय भाषा के लिए यह स्थान प्राप्त करना कठिन है।

इन सब विशेषताओं के होते हुए भी अंग्रेजी इस देश की भाषा नहीं है और जो राजकीय राजस्व उसे मिल रहा है, यदि यह हट जाता है तो उसकी व्यापक लोकप्रियता जो आज है यह समाप्त हो जाएगी। इसके अतिरिक्त कोई विदेशी भाषा देश में अजनबी रहती है और देश का कोई भी भाग उसे इस रूप में ग्रहण नही कर सकता जैसे उपनी भाषा का इसलिए अध्ययन तो होगा पर उसका अध्ययन एक कृत्रिम राजकीय सहायता के रूप मे कभी भी जड़ नही पकड़ सकेगा और यह देश के किसी भी भाग के जन समुदाय की भाषा नही बन सकती जबकि भारतीय भाषा देश के कुछ भाग की समस्त वर्ग की और देश के एक भाग के जनसमुदाय की भाषा रहेगी। उसका संबंध अन्य प्रांतीय भाषाओं से भी होगा और इस प्रकार वह अन्य प्रांतों की जनता द्वारा भी आसानी से ग्रहण की जा सकेगी। इस प्रकार हमारा निर्णय किसी भारतीय भाषा तक ही सीमित है। इसका यह मतलब नहीं है कि अंग्रेजी का सीखना पूरी तरह से बंद हो जाएगा। सारे अंतर्राष्ट्रीय प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी का अध्ययन होगा। जो उसकी साहित्यिक वैज्ञानिक दार्शनिक समृद्धि है उसके लिए भी उसका अध्ययन होगा पर इसका अध्ययन कुछ ही लोग करेंगे और उसकी महत्ता इस पर ही निर्भर करेगी, कि क्रिया विशेष कारण से वह उपयोगी है आज भी बहुत से भारतीय दूसरी विदेशी भाषा इसलिए सीखते है जिससे कि वह वैज्ञानिक और शोध पत्रिकाओं को पढ़ सके या ऐसे ही अन्य कारणों से। भारतीय भाषाओं में निश्चय ही हमारी दृष्टि हिंदी या हिंदुतानी की ओर है जो सबसे अधिक बोली या समझी जाती है और उसका नाम हम चाहे जो भी दें, उसमें अच्छा साहित्य है, उसमें विकास की योग्यता है और वह उत्तर भारत की समस्त भाषाओं से जुड़ी हुई हैं। वह इनमें से किसी भाषा के बोलने और जानने वाले लोगों द्वारा आसानी से सीखी जा सकती है। दक्षिण भारतीय भाषाओं में भी संस्कृत से व्युत्पन्न अनेक शब्द है, विशेषकर तेलगू, कन्नड़ और मलयालम भाषाओं में। यह बात स्वीकार की जानी चाहिए कि हिंदी या हिंदुस्तानी की शब्दावली को पर्याप्त समृद्ध करनी है जिससे कि इस प्रकार के आधुनिक विचार–वैज्ञानिक प्रशासनिक, राजनैतिक, अभियांत्रिकी और औद्योगिक को यह स्पष्ट कर सके यह स्थिति समस्त भारतीय भाषाओं की है। देश की जन भाषा को जहां तक संभव हो सके, आसान बनाना होगा जिससे की वह जिन क्षेत्रों में बोली और समझी नहीं जाती है, वहाँ भी लोग उसको स्वीकार कर सके। यह आवश्यक है कि हिंदी या हिंदुस्तानी शुद्धतावादी की दृष्टि से विदेशी और अस्पष्ट व्युत्पति वाले शब्दों के बहिष्कार की नीति न अपनाएं। नए भावों के लिए, नए शब्दों को गढ़ने के पहले, पहली कोशिश यह होनी चाहिए कि शब्द उपलब्ध है या जो शब्द आसानी से घुल–मिल सकता है उसे अपनाया जाए।

प्रांतीय भाषाए तो विकसित भाषाए है और वह भंडार के संदर्भ में हिंदी या हिंदुस्तानी की बहुत सहायता कर सकती है। इसलिए एक भावाभिव्यक्ति जो एक या एक से अधिक प्रांतीय भाषा में उपलब्ध है, उसे हिंदी या हिन्दुस्तानी में क्यों न स्वीकार किया जाए। केवल साहित्यिक अभिव्यक्ति में प्रयुक्त शब्द ही नहीं वरन लोकभाषाएं भी बहुत सहायता कर सकती है जैसा कि पंडित राम नरेश त्रिपाठी ने संकेत दिया है कि ग्रामीण बोलिया जीवित भाषाएं हैं और वे निरंतर आवश्यकताओं के अनुरूप उपयुक्त शब्द को गढ़ती रही हैं। मै एक उदाहरण द्वारा यह स्पष्ट करना चाहूंगा कि हिंदी भाषा क्षेत्र को बोलियों में किस प्रकार संज्ञाओं से क्रिया बनाई जाती है, जबकि साहित्यिक हिंदी में वही भाव दूसरी क्रियाओं को जोड़कर बनाया जाता है। इस प्रकार मिट्टी से बनी हुई क्रिया मटियाना बनी है जिसका अर्थ बर्तन मांजना धोना अथवा मिट्टी से ढकना है। इसी तरह से हाथ से हथियाना (हाथ में लेना) का अर्थ भी सामान्यतः किसी चीज को अलग ढंग से ले लेना है। इसी प्रकार से लात (पैर) से लतियाना का अर्थ पैर से ठोकर मारना है। यदि हम बैर्क्स शब्दकोष जैसे लोकप्रिय अंग्रेजी शब्दकोष से विभिन्न संस्करणों को, जो पिछले पचास वर्षों में प्रकाशित हुये है, देखे तो हमें ज्ञात होगा कि पचास वर्ष पहले प्रकाशित और आज प्रकाशित हुए शब्दकोष में बहुत बड़ा अंतर है। वस्तुतः शब्दकोष के मूल भाग में जोड़े गए शब्दों के अतिरिक्त हर संस्करण में एक परिशिष्ट है जिनमें शब्दों की बहुत बड़ी संख्या ऐसी है, जिनका भाषा में आत्मीकरण अभी नहीं हुआ है किंतु वे प्रचलन की प्रक्रिया में हैं।

इसलिए हिंदी या हिंदुस्तानी का अत्याधिक उदार नीति का आश्रय लेते हुए शब्दों को ग्रहण ग्रहण करना चाहिए चाहे उसका स्रोत कोई भी हो। समय के प्रवाह में शब्दों की अर्थ छायाए विकसित होगी। इसलिए जनभाषा के विकास के लिए यह मूल सिद्धांत बना देना आवश्यक है कि वह विदेशी व्युत्पत्ति वाले शब्दों का बहिष्कार न करके, जो विदेशी शब्द भारत या भारत के बाहर दूसरी भाषाओं में प्रचलित है, उन्हें स्वीकार करेगी। इस प्रकार यह विवाद व्यर्थ है कि भाषा हिंदी हो या हिंदुस्तानी। व्याकरण और संरचना जो भाषा को एक विशिष्टता प्रदान करते हैं, वह हिंदी और हिंदुस्तानी दोनों की एक ही है। दोनों में जो अंतर है वह इतना कम है कि उसकी आसानी से उपेक्षा की जा सकती है। अंतर केवल शब्दावली का है और यदि हम बहिष्कार के बदले स्वीकृति को अपना लें तो वाद–विवाद का कोई अर्थ ही नहीं रह जाएगा।

(डॉ. राजेंद्र प्रसाद कोरसपोन्डेस एंड सेलेक्ट डॉक्यूमेंट्स खंड 9, पृष्ठ 344–346 से उद्धत)

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

अंतरिक्ष प्रजनन द्वारा फसल सुधार

आशुतोष कुमार मल्ल, वरूचा मिश्रा, मुकेश कुमार, बी. डी. सिंह एवं अश्विनी दत्त पाठक
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

यह एक पुनर्प्राप्ति योग्य उपग्रह या पुनर्प्राप्ति योग्य अंतरिक्ष यान पर अंतरिक्ष में बीजों या सूक्ष्मजीवों की भेजने की तकनीक है। यह एक अत्याधुनिक विज्ञान है जो कृषि तथा वन विज्ञान के साथ अंतरिक्ष यात्रा को जोड़ती है। पृथ्वी पर अंतरिक्ष यान लौटने पर उत्परिवर्ती बीजों में चयन किया जाता है, उन बीजों का रोपण किया जाता है जिसमें उच्च वांछनीय गुण पाये जाते है। इस प्रजनन प्रणाली के पीछे का तथ्य यह है कि इससे उच्च उत्पाकदता मिलना, रोग प्रतिरोधक पौधों की प्रजातियाँ मिलना, जैविक प्रतिबल प्रतिरोधकता पूर्ण प्रजातियों का मिलना, अजैविक प्रतिबल प्रतिरोधकता पूर्ण प्रजातियों का मिलना तथा कई अन्य वांछनीय गुणों की प्राप्ति होती है। इस प्रजनन प्रक्रिया के सफलतापूर्वक होने के लिए यह प्रक्रिया कई कारकों पर निर्भर करती है जिनमें से मुख्य निम्नलिखित हैं–

1. उच्च उर्जा आयन– विकिरण
2. सूक्ष्म गुरूत्वाकर्षण (माईक्रोग्रैविटी)
3. अंतरिक्ष चुंबकीय क्षेत्र
4. अल्ट्रा वैक्यूम
5. अन्य शारीरिक प्रतिबल

कृषि के क्षेत्र में अंतरिक्ष प्रजनन एक उच्च तकनीक है। इसका तात्पर्य यह है कि वैक्यूम पर्यावरण (लौकिक किरणों, माइक्रोगैविटी अत्यधिक वैक्यूम तथा विनिमेय चुबंकीय क्षेत्र, इत्यादि) के द्वारा लौटे हुए उपग्रह में तथा बीजों का पृथ्वी पर चयनात्मक रोपण से भिन्नताद प्राप्त होती है जिसके फलस्वरूप बीजों की नवीन किस्में, गुण तथा नयी सामग्री प्राप्त होता है। अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी द्वारा उत्पन्न की गई किस्मों में जीन सुरक्षा, रेडियो धर्मिता, उच्च विकरण खुराक व हानिकारक पदार्थों संबधी कोई भी समस्या नहीं है। इससे बने खाद्य पदार्थ लोगों के सेवन के लिए सुरक्षित है। इसके अतिरिक्त इसका सेवन करने से कोई भी वंशानुगत प्रभाव नहीं होता है।

अंतरिक्ष प्रजनन कार्यक्रम

चीनी शोधकर्ताओं ने 1980 के दशक में अंतरिक्ष प्रजनन को आरम्भ किया था जब बीजों को सर्वप्रथम एक उपग्रह से जुड़ी कक्षा में अंतरिक्ष में भेजा गया था। हांलाकि बीजों को अंतरिक्ष में भेजना 1990 के दशक में भी जारी रहा परन्तु इस तरह से प्रजनन करने की प्रक्रिया में गति हाल के वर्षों में प्राप्त हुई है। पिछले कई वर्षों में चीनी सरकार ने चीनी विज्ञान अकादमी के कृषि विज्ञान में अंतरिक्ष प्रजनन शोध केन्द्र के तत्वाधान में किए गए अंतरिक्ष प्रजनन कार्यक्रम में अपने निवेश को दोगुना कर दिया है जिसके फलस्वरूप इस प्रक्रिया द्वारा उत्पादित नवीन बीजों की किस्मों की संख्या मात्र 20 से 110 तक बढ़ चुकी है।

अंतरिक्ष बीज प्रजनन कार्यक्रम के द्वारा पहली किस्म हूहांगा नामक चावल की किस्म थी जो आमतौर के अपेक्षा चार प्रतिशत अधिक उत्पादन देती है। इस क्रम में कुछ नवीन गेंहू की किस्मों को चीन में व्यावसायिक स्तर पर उगाया जा रहा है। अंतरिक्ष प्रजनन प्रणाली द्वारा विकसित टाईकोंग 6, एक टमाटर की किस्म, आमतौर की किस्मों के अपेक्षा पोषण तत्वों से तथा प्रोटीन से भरपूर्ण पायी गयी है। अंतरिक्ष प्रजनन कार्यक्रम से उत्पादित बीजों के क्रम में एक नवीन सोयाबीन की किस्म है जो आमतौर के अपेक्षा 11 प्रतिशत अधिक उपज प्रदान करती है। इसके अतिरिक्त अधिक वजन वाली मिर्चा, विशालकाय कद्दू, अत्यधिक आकार वाले खीरे तथा टमाटर जिनमें शर्करा की मात्रा अधिक पायी गयी व जिनका स्वाद नारंगी की तरह पाया गया।

यह अभी भी चीनी वैज्ञानिकों के लिए एक रहस्य है कि कैसे अंतरिक्ष में एक संक्षिप्त निवास पौधों के आकार या उर्वरता को बदल सकता है परन्तु इसका सबसे लोकप्रिय विवरण यह है कि पृथ्वी की तुलनाद में बीज अंतरिक्ष में विकिरण के उच्च स्तर का व गुरूत्वाकर्षण का निचला स्तर का सामना करते हैं। कुछ अन्य विशेषज्ञों के अनुसार न तो विकिरण व न ही कम गुरूत्वाकर्षण बीजों के आनुवंशिक गुणों को बदल सकते है क्योकि सुखे बीज निष्क्रिय होते है जिन पर विकिरण कोई प्रभाव नहीं डालता है।

अमेरिका भी इस अंतरिक्ष प्रजनन कार्यक्रम से दूर नहीं रहा। 12 मिलियन टमाटर के बीजों को उसने अंतरिक्ष यान में अंतरिक्ष में भेजा जो करिबन पाँच वर्षो तक अंतरिक्ष में रहकर पृथ्वी पर लौटा। जब इन टमाटरों के बीजों का रोपण किया गया तो उसमें आमतौर के अपेक्षा कोई भी अंतर नहीं देखा गया। चीन व अमेरिका के अंतरिक्ष प्रजनन कार्यक्रम में अंतर यह है कि चीन प्रजनन कार्यक्रम में बीजों को अंतरिक्ष में लगभग 6 दिनों तक रखा गया जब कि अमेरिका के कार्यक्रम में बीजों को अधिक समय तक अंतरिक्ष में रखा गया। अधिक समय तक रखने के बावजूद भी इन बीजों से फलों के उत्पादन में कोई भी वृद्धि नहीं देखी गयी अतंरिक्ष प्रजनन उद्योग ने शोध अनुसंधानों में तीव्रता से वृद्धि की है जिसमें चीन के पास आज 60 अंतरिक्ष प्रजनन शोध अनुसंधान है।

अंतरिक्ष प्रेरित उत्परिवर्तन तकनीक न केवल नई फसल की

कृषि संबधी फसलों में अंतरिक्ष प्रजनन कार्यक्रम का महत्व

बीजों में प्राकृतिक परिवर्तन।

उत्परिवर्तन प्रजनन तकनीक का विस्तार।

किसी भी प्रकार के आनुंवशिक संशोधन को शामिल न करना।

उत्पादन में भिन्नता।

नवीन प्रजाति/किस्में व गुणों का उत्पादन होना।

अजैविक तथा जैविक प्रतिबलों के अन्तर्गत बेहतर उपज के लिए किस्मों का विकसित होना।

आने वाले समय में भोजन (खाद्य) का नया व समृद्ध स्त्रोत प्रदान करना

इसके साथ ही यह हमारे फल व सब्जियों के लम्बे समय को पूर्ण करना।

धान	हांगयू 1, हूहांग 1, इरयूहांग 1, टीयूहांग 1, यूईहांग 1, जही 101, यूयू 1, टीयू 175, हूआज्यांग 7 आदि।
गेंहू	टाईकोंरा 5, टाईकोंग 6, लोंगफूमाई 15, हांगमाई 96, लोंगफूमाई 17, लूयान 301
रूई	झाँगमिन्सुओ 42 व झाँगमिन्सुओ 52
तिल	झोंगजी 11 व झोंगजी 11 व झोंगजी 13
काली मिर्च	यूजीआओ 1, यूजीआो 2, यूजीआओ 3, यूजीआओ 4 लोंगीजीआओ 9
टमाटर	यूफान 1, यूफान 2
अल्फा–अल्फा	लोंगीन्ज 1

किस्मों को विकसित करने के लिए प्रभावी ढंग से एक नया तरीका है अपितु इस प्रक्रिया से दुर्लभ म्यूटेंट प्राप्त करने की भी पूर्ण संभावना है जिससे फसल के महव्वपूर्ण आर्थिक पात्रों जैसे उपज व गुणवत्ता में वृद्धि होती है जो आमतौर से प्रजनन प्रक्रिया से नहीं मिलती। जमीन पर अन्य प्रजनन के तरीकों के अपेक्षा अंतरिक्ष प्रेरित उत्परिवर्तन तकनीक को लागू कर शोध को इस संदर्भ में मजबूत करने की आवश्यकता है। बड़े निवेश व अच्छे तकनीकी समर्थन के कारण से यह विधि सीमित है लेकिन अंतरिक्ष पर्यावरण कारकों के द्वारा जमीन पर फसलों में अधिक पोषक तत्व, उपज व गुणवत्ता बनाने के लिए महत्वपूर्ण है।

चैते गुड़ बैसाखे तेल।
जेठ क पंथ असाढ़ क बेल।।
सावन साग न भादों दही।
क्कार दूध नहिं कातिक मही।।
अगहन जीरा पूसै धना।
माघै मिश्री फागुन चना।

चैत में गुड़, बैसाख में तेल, जेठ में रास्ता चलना, आसाढ़ में बेल, सावन में साग, भादों में दही, क्वार में दूध, कातिक में मट्ठा, अगहन में जीरा, पूस में धनिया, माघ में मिश्री और फागुन मे चना हानिकारक हैं।

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

भारत के उपोष्ण क्षेत्रों में गन्ने की नवीन सस्य तकनीक

आदित्य प्रकाश द्विवेदी, वेद प्रकाश सिंह, विनय कुमार सिंह, के.के. सिंह एवं मनोज कुमार त्रिपाठी

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

पिछले अंक से जारी

जल प्रबन्धन

गन्ने की फसल की जल मांग सिंचाई के द्वारा अन्य फसलों की तुलना में अधिक होती है। उपोष्ण क्षेत्र में गन्ने की वार्षिक जल मांग 1400–1500 मिमी. होती है। वैज्ञानिक विधि व समय से सिंचाई करके गन्ने की सिंचाई उपभोग क्षमता 30–45 प्रतिशत तक बढ़ाई जा सकती है। कुछ ऐसे वैकल्पिक सिंचाई व जल प्रबन्धन की विधियाँ हैं, जैसे– स्किप फरो विधि, टपक सिंचाई पद्धति एवं जल मांग की क्रांतिक अवस्थाओं एवं सूखी पत्ती की मल्चिंग, अपनाकर उत्पादन में वृद्धि की जा सकती है एवं जल (पानी) की बचत की जा सकती है।

स्किप फरो विधि

इस विधि में प्रत्येक एकान्तरित अंतर पंक्ति में सिंचाई की जाती है। इसके लिए, बीजांकुरण के बाद 45 सेमी. चौड़ी व 15 सेमी. गहरी कूंड़ एकान्तरित रूप से बनाई जाती है। इस प्रकार इस बनाई गयी कूंड़ में ही सिंचाई से जाती है, न कि पूरे खेत में बुआई हेतु बनाई गयी कूंड में। इस विधि में फ्लड रूप से सिंचाई की गयी फसल की तुलना में कम ही पानी में पूरी सिंचाई हो जाती है व सिंचाई दक्षता बढ़ने के साथ–साथ पानी की बचत, श्रम की बचत व लागत में कमी आती है। इस प्रकार 35–40 प्रतिशत सिंचाई जल की बचत, 60–65 प्रतिशत जल उपयोग क्षमता होती है। लाभ : लागत अनुपात 1.95 तक प्राप्त होती है।

टपक सिंचाई

गन्ना चूंकि दूर–दूर बोई जाती है, जिस कारण टपक सिंचाई पद्धति, सिंचाई के लिए उपयुक्त है। इससे जल जैसे महत्वपूर्ण निवेश की बचत होती है और अधिक उत्पादन प्राप्त होता है। सतही टपक सिंचाई हेतु, लेटेरल प्लास्टिक गन्ने की पाइप दो लाइनों के बीच में बिछा दी जाती है जिसमें छोटे–छोटे छिद्र होते हैं। उचित दबाव पर जब पानी दी जाती है, तो इन पाईप के माध्यम से बूंद–बूंद कर पौधे के जड़ के पास सिंचाई जल पंहुचता है। इस पाईप के माध्यम से बराबर रूप से सिंचाई जल के साथ उर्वरकों के घोल को भी प्रयोग किया जा सकता है, जिसे फर्टिगेशन कहते हैं। इस विधि से 40–50 प्रतिशत सिंचाई जल की बचत होती है और तत्व (उर्वरक) उपयोग क्षमता में फ्लड़ सिचाई की तुलना में 30 प्रतिशत की वृद्धि होती है। इससे लाभः लागत अनुपात 2.17 तक प्राप्त होती है। देश की कई राज्य सरकारें इस विधि को बढ़ावा देने के लिए भारी भरकम अनुदान देती है। एक बार इस विधि को लगा देने पर एवं मुख्य फसल व दो पेंड़ी की फसल (यानी तीन वर्षों तक) आसानी से ली जा सकती है, जो लागत : लाभ दृष्टि से उपयुक्त होती है।

फसल की क्रांतिक बढ़वार की अवस्था पर सिंचाई

जिन गन्ना क्षेत्रों में जल की सीमित सम्भावनाएं हैं, वहां पर फसल बढ़वार के लिए सिंचाई जल का क्रांतिक अवस्थाओं पर ही उचित सिंचाई विधि का प्रयोग किया जाना चाहिए। गन्ने में सिंचाई जल के आधार पर क्रांतिक अवस्थाएं मुख्यतः जो निर्धारित की गयी हैं, वो हैं; अंकुरण के समय (45 दिन बाद), कल्ले निकलने की प्रथम अवस्था (बुआई के 65 दिन बाद), कल्ले निकलने की द्वितीय अवस्था (बुआई के 85 दिन बाद), कल्ले निकलने की तीसरी अवस्था (बुआई के 105 दिन बाद), मुख्य रूप से हैं। इस प्रकार सिंचाई जल की उपलब्धता होने पर उपरोक्तानुसार ही सिंचाई प्रबन्धन करना चाहिए।

सूखी पत्तियों का बिछावन

गन्ने की फसल सबसे अधिक मात्रा में सूखी पत्ती उत्पादित करती है। ये पत्तियां किसानों को तो एक समस्या के रूप में दिखाई देती हैं और इसकी महत्ता को समझने बिना ही खेत में जला देते हैं। ऐसा कदापि नहीं करना चाहिए। ये पत्तियां कार्बनिक पदार्थ वा पोषक तत्वों के लिए एक अच्छा स्रोत का काम करती हैं। इन पत्तियों को एक मल्च के रूप में प्रयोग किया जाना चाहिए, जो खरपतवारों को उगने से रोकती हैं, साथ ही साथ मृदा में जल संरक्षण को बढ़ावा देने के साथ पोषक तत्वों का भण्डार भी होती हैं। सूखी पत्ती (10 टन 1 हे.) को पूरे खेत में बराबर तरह से या एक पंक्ति छोड़कर एकान्तरित रूप में 7–10 सेमी. मोटाई की तह में मृदा सतह पर समान रूप से फैला देनी चाहिए जिससे उपरोक्तानुसार लाभ प्राप्त हो सके। इस प्रकार ऐसा करने से 40–45 प्रतिशत सिंचाई जल की बचत हो जाती है और लाभ : लागत अनुपात 2–4 तक प्राप्त होती है।

पोषक तत्व प्रबंधन

गन्ने की फसल, मृदा से अधिक मात्रा में मृदा से पोषक तत्वों का दोहन करती है। भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ के प्रतिवेदन के अनुसार, 100 टन प्रति हे. गन्ने के उत्पादन प्राप्त करने में 208 किग्रा. नत्रजन (N), 53 किग्रा. फास्फोरस (P), 280 किग्रा. पोटेशियम (K), 3.4 किग्रा. आयरन (Fe), 1.2 किग्रा. मैगनीज (Mn), 0.6 किग्रा. जिंक (Zn), 0.2 किग्रा. कापर (Cu) एवं 30 किग्रा. सल्फर (S) प्रति हे. खर्च होता है। भारत में उत्तर पूर्वी क्षेत्र को छोड़कर, लगभग सभी मृदाओं में नत्रजन (N) की कमी देखी गयी है। इसके अतिरिक्त 50 प्रतिशत मृदा में फास्फोरस (P) एवं 20 प्रतिशत मृदाओं में पोटैशियम (K) की कमी होती है। अतः क्षेत्र विशेष के लिए संतुलित पोषक तत्व प्रबन्धन से गन्ने की उपज को बढ़ाया जा सकता है। उत्पादन में वृद्धि के साथ–साथ उत्पादकता में स्थिरिता रखते हुए उत्पाद गुणवत्ता को भी बढ़ाने में मदद मिलती है। उचित पोषक तत्व

प्रबंधन गन्ने से गन्ने की वृद्धि, गन्ने के रस की गुणवत्ता एवं चीनी की मात्रा का गन्ने में संचयन में मदद मिलती है। गन्ने में कल्ले निकलते समय पोषक तत्व का उपयोग एवं पूर्ति बहुत ही अहमियत रखती है, जिससे मिलेबल केन का उत्पादन एवं उसकी गुणवत्ता निर्धारित होती है। अधिकतम गन्ना उत्पादन के लिए 1.95–2.0 प्रतिशत नत्रजन की सांद्रता, कल्ले निकलते समय नियत की गयी है। नत्रजन प्रबंधन, पोषक तत्व प्रबन्धन के अन्तर्गत अधिक गन्ना उत्पादन हेतु बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान रखता है। नत्रजन, गन्ने में मिलेबल केन की संख्या एवं गन्ने का भार दोनों ही बढ़ता है। उपोष्ण क्षेत्र में विभिन्न प्रयोगों के आधार पर इसकी मात्रा 120 से 200 किग्रा. प्रति हे. निर्धारित किया गया है। सधन कृषि प्रणाली एवं खराब मृदा स्वास्थ के प्रबन्धन को ध्यान में रखते हुए औसतन 150 किग्रा. नत्रजन प्रति हे. की दर मुख्य गन्ना फसल एवं 225 किग्रा./ हे. की दर से पेड़ी फसल के लिए प्रयोग किया जाता है। नत्रजन प्रबन्धन में इस बात का खास ध्यान रखने योग्य महत्वपूर्ण पहलू यह है कि कल्ले निकलने समय नत्रजन की कमी नहीं होनी चाहिये। उत्तर प्रदेश एवं बिहार में नत्रजन की पूरी मात्रा कूंड़ में ही गन्ना गेड़ी के नीचे दे देते हैं या 2–3 बार में बुआई के बाद 90 दिन के अन्दर दे देते हैं। जबकि पंजाब व हरियाण में 50 प्रतिशत नत्रजन की मात्रा को बुआई के समय ही कूड में गन्ना गेड़ी के नीचे व शेष आधी मात्रा अप्रैल से जून तक पौधों को या लाइन में दे देनी चाहिए। शरद्कालीन गन्ना बुआई के अन्तर्गत उत्तरी भारत में 1/3 नत्रजन की मात्रा बुआई के समय व शेष 2/3 मात्रा बराबर–बराबर भग में मार्च, अप्रैल व मई में दे देनी चाहिए। वर्षा आधारित क्षेत्रों में 75 किग्रा. नत्रजन प्रति हे. की दर से देनी चाहिए, जिससे हमें वांछित उपज प्राप्त हो जाती है।

यही सही सलाह होगी कि फास्फोरस का प्रयोग मृदा नमूनों की जांच के ही आधार पर दिया जाय, जिससे प्रयोग किये गये फास्फोरस का अधिकधित मात्रा प्राप्त हो सके गन्ने की फसल फास्फोरस को 20–25 प्रतिशत तक कल्ले निकलते समय तक उपयोग कर लेता है, जबकि शेष 75–80 प्रतिशत फास्फोरस गन्ने की बढ़वार तक प्राप्त होता रहता है। गन्ने की लम्बाई, मोटाई, संख्या व उपज बहुत हद तक फास्फोरस के प्रयोग पर निभर करती है अथवा हम यह कह सकते हैं कि फास्फोरस के उचित प्रयोग से उपज के उपरोक्त विभिन्न कारक निर्धारित होते हैं और गन्ने की उपज को प्रभावित करते है। साथ ही नत्रजन के अधिक प्रयोग को भी फास्फोरस नियंत्रित करता है। तुलनात्मक रूप से फास्फोरस को उर्वरक उपलब्धता के आधार कर DAP >SSP>MOP के रूप में देनी चाहिए। हल्की से भारी मृदा में फास्फोरस का प्रयोग कूंड़ में आधी मात्रा गन्ने की गेड़ी के बगल में अथवा नीचे देनी चाहिए। आल्सन फारस्फोरस की तुलनात्मक फास्फोरस तुल्यांक धनात्मक सहसम्बन्ध, पत्ती की चौड़ाई व लम्बाई पर निर्भर करती है। गन्ने के रस एवं चीनी की मात्रा व गुणवत्ता फास्फोरस की सांद्रता जो 300 पी.पी.एम. P_2O_5 है, उचित होती है यह चीनी के दाने बनने एवं रंग के लिए भी अच्छा होता है।

पोटेशियम का महत्व गन्ने में प्रोटीन एवं शर्करा के संश्लेषण एवं स्थानान्तरण में सहायक होता है। साथ ही साथ शर्करा के संचयन में भी मददगार होता है। एक टन गन्ना पैदा करने के लिए मृदा से 3.4 किग्रा. पोटैशियम (K_2O) का दोहन होता है। यद्यपि भारतीय मृदा सामान्यतः पोटैशियम की दृष्टिकोण से परिपूर्ण है परन्तु राज्य व क्षेत्रानुसार इसकी मृदा में मात्रा एवं उपलब्धता परिवर्तित होती है इस लिए मृदा जांच के आधार पर ही इसकी संस्तुति की जानी चाहिए। चूंकि पोटैशियम का महत्व पौधे व जल के सम्बन्ध में बहुत ही अधिक महत्ता रखती है इसलिए इसकी खड़ी फसल में पर्णीय प्रयोग की संस्तुति फसल के बढ़वार के अन्तिम चरण में भी संस्तुत की जाती है, जिससे सूखे की स्थिति में फसल को पानी की कमी के कारण होने वाले नुकसान से बचाया जा सके। पोटैशियम की संस्तुति क्षेत्रवार क्रमशः उत्तरी, दक्षिणी, पश्चिमी व पूर्वी क्षेत्र; 40–90, 75–190, 120–150 एवं 60–120 किग्रा./हेक्टेयर की दर से की जाती है। सल्फेट आयन पोटैशियम, क्लोराईड आयन युक्त पोटैशियम से अच्छी होती है क्योंकि पोटैशियम सल्फेट का प्रभाव, कल्ले निकलने में, प्राइमरी इन्डेक्स, सर्करा का संचयन एवं गन्ने के उत्पादन पर अपेक्षाकृत अच्छा प्रभाव पड़ता है। पोटैशियम का प्रयोग एक ही बार में बुआई के समय करना अच्छा होता है अपेक्षकृत बार–बार खड़ी फसल में करने से। पोटैशियम की अधिक मात्रा के प्रयोग से कोशिकाओं में पानी की मात्रा बनी रहती है जो सूखे से पड़ने वाले विपरित प्रभाव को सहन करने में सहायक होती है। साथ ही साथ रस की मात्रा में भी वृद्धि होती है। परन्तु ध्यान देने वाली बात यह है कि पोटैशियम की अत्याधिक एवं असंतुलित मात्रा भी गन्ने के रस से चीनी बनने में बाधक होती है और चीनी की मात्रा मोलेसेस में चली जाती है जिससे कम चीनी प्राप्त होता है।

द्वितीय पोषक तत्वों में सल्फर तत्व, नाइट्रोजन के नाइट्रेट रिडक्टेजेज एक्टीवीटी को बढ़ाता है, जिससे नाइट्रोजन की उपयोग क्षमता बढ़ती है। अतः सल्फर की कमी वाली मृदा में 30 किग्रा. सल्फर/हेक्टेयर की दर से प्रयोग करना लाभदायक सिद्ध हुआ है। मैंगनीज की कमी वाले क्षेत्रों में पत्तियों में पीलापन की समस्या देखने को मिलती है। प्रयोगों में पाया गया है कि केन्द्रीय उ.प्र. की मृदा में मैंगनीज की कमी पायी गयी है। सघन कृषि के साथ–साथ अन्य सूक्ष्म पोषक तत्व जैसे– जिंक, आयरन व कापर की भी कमी देखी जा रही है। सूक्ष्म पोषक तत्वों का पर्णीय छिड़काव, उत्तर प्रदेश एवं पंजाब में लाभकारी सिद्ध हुआ है। बिहार में, जिंक, मैंगनीज व आयरन की 25 किग्रा. मात्रा (प्रत्येक तत्व की) प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करना चाहिए। साथ ही साथ कैल्केरियस मृदा में गोबर की सड़ी खाद के साथ 5 किग्रा. बोरेक्स प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग लाभकारी होता है।

कार्बनिक खाद एवं उर्वरक के बीच एक सही सम्बंध स्थापित करने में जैव उर्वरक का महत्वपूर्ण स्थान है। गन्ने में ग्रेडेड नाईट्रोजन के प्रयोग के अन्तर्गत एजोटोबैक्टर के साथ–साथ प्रायोग करने से 9.3 टन प्रति हेक्टेयर एवं एजोस्पाइरिलम के साथ–साथ प्रयोग करने से 1.34 टन प्रति हेक्टेयर तक गन्ने के उत्पादन में वृद्धि देखी गयी है। एक नये सूक्ष्म जीव ग्लूकोनेसिटोवेक्टर डायजोट्राफिक्स का प्रयोग गन्ने में उत्कृष्ठ नत्रजन स्थीरीकरण करता है। यह इन्डोफाइट बैक्टेरियम, जो गन्ने के जड़ क्षेत्र, स्टाक, पत्ती एवं सूखी पत्ती में जाया जाता है, एक अच्छी मात्रा में नाइट्रोजन पौधे का प्राप्त कराता है। शुगर फैक्ट्री के अन्य उत्पाद, जैसे – प्रेस मड एवं

डिस्टीलरी से निकलने वाले पानी, गन्ने में अतिरिक्त पोषण प्रदान करता है। प्रेस मड, जिसमें प्रचुर मात्रा में पोषक तत्व जैसे– नत्रजन (1-2 प्रतिशत), फास्फोरस (4 प्रतिशत), पोटैशियम (0.5-1.5 प्रतिशत) होता है, मृदा के भौतिक, रासायनिक एवं जैविक गुणों में वृद्धि करता है। इसके कारण विभिन्न पोषक तत्वों की उपलब्धता एवं उपयोग को बढ़ाता है, परिणाम स्वरूप गन्ने का उत्पादन एवं रस की गुणवत्ता बढ़ती है। बिहार में सल्फीटेशन युक्त प्रेसमड (SPM) खली के अकार्बनिक उर्वरकों के साथ प्रयोग करने से वांछित उपज प्राप्त होती पायी गयी है, बल्कि गोबर एवं सूखी पत्ती तैयार कम्पोस्ट की खाद प्रयोग करने से भी तुलनात्मक उपरोक्त सल्फीटेशन युक्त प्रेसमड का प्रयोग किया जाय तो बेहतर होगा। डिस्टीलरी से प्राप्त इफ्लयूएन्ट कार्बनिक पदार्थ भी पौधे के पोषण में वांछित परिणाम देते हैं। शुगर मिल के इफ्लयूएन्ट का 800 क्यूविक मीटर/हेक्टेयर का प्रयोग किसी प्रकार का विपरीत प्रभाव नहीं डालता है, जबकि यह गन्ने में कल्ले निकलने में सहायक होता है व गन्ना उत्पादन 10–15 प्रतिशत एवं कल्ले निकलने में 7–10 प्रतिशत तक बढ़ोत्तरी होती है।

खरपतवार प्रबन्धन

अन्य फसलों की भांति गन्ने की फसल में खरपतवार से नुकसान होता है। इसकी बजह से 10 प्रतिशत से लेकर पूरी फसल के फेल होने तक नुकसान हो सकता है। गन्ने की धीमी अंकुरण होने के कारण खरपतवारों के बीज एवं अन्य भागों द्वारा प्रसार व अंकुरण होने में सहायक होती है। गन्ने में खरपतवारों का प्रबन्धन यांत्रिका, कल्चरल एवं रासायनिक तीनों विधियों का प्रयोग खरपतवारों के प्रकार व प्रवृति के अनुसार करना चाहिए। यांत्रिक विधि से खरपतवार नियंत्रण के साथ–साथ मृदा की भौतिक अवस्था भी सुधरती है, जो गन्ने की बढ़वार के लिए लाभदायक होता है। यांत्रिक विधि में हाथ द्वारा खुरपी से या कुदाल से बैल चालित यंत्र से कर्षण क्रियाएं प्रमुखता से अपनायी जाती है। कल्चरल एवं यांत्रिक विधियाँ अपनाने से मुख्यतः गन्ने की फसल में उगने वाले वार्षिक खरपतवार नियंत्रित/प्रबंधित हो जाते हैं। उपोष्ण क्षेत्रों में फसल–खरपतवार की प्रतियोगी क्रांतिक अवस्था खरपतवार के आने से ही प्रारम्भ हो जाती है। अतः कल्चरल एवं यांत्रिक विधि से खरपतवार प्रबंधन अपनाने से गन्ना उत्पादन पर होने वाले नुकसान से बचा जा सकता है। यांत्रिक विधि से होईंग 30, 60, 90 दिन पश्चात करने पर उपज के नुकसान को कम किया जा सकता है। यद्यपि खुरपी से खरपतवार निकालने से द्विबीजपत्रीय, मोथा व दूब का नियंत्रण प्रभावी नहीं है। कल्चरल विधि के अंतर्गत सूखी पत्ती का बिछावन एवं अन्तरावर्तीय फसलों से खरपतवार का प्रभावी प्रबंधन होता है। गन्ने की फसल के लाइनों के बीच अन्य फसलें जैसे चना, मटर, अरहर (शरदकालीन गन्ने में) व मूंग, लोबिया (बसंतकालीन गन्ने में) उगाने से खरपतवारों से गन्ने की फसल व उक्त अन्तरासस्यन फसलों से प्रतियोगिता कम हो जाती है व खरपतवार की वजह से होने वाले नुकसान को कम किया जा सकता है। स्ट्राइगा नामक खरपतवार के प्रबन्धन में ट्रैप क्राप जैसे– कोलम एवं पास्पेलम स्पेसिज के फसलों को लगाने से गन्ने के खेत में स्ट्राइगा पर प्रभावी नियंत्रण/प्रबन्धन किया जा सकता है। इस ट्रेप फसलों की बुआई करने से स्ट्राइगा को नष्ट किया जा सकता है।

यांत्रिक व कल्चरण विधि के साथ–साथ, रासायनिक विधियों का भी प्रयोग आवश्यकतानुसार करना चाहिए, जिससे और अधिक प्रभावी खरपतवार प्रबन्धन किया जा सके। खरपतवार के जमने से पहले एट्राजीन नामक दवा का 2 किग्रा. सक्रिय तत्व प्रति हेक्टेयर की दर से व बआई के 60 दिन पश्चात् 2,4 –डी का 1.00 किग्रा. सक्रिय तत्व प्रति हेक्टेयर की दर से उचित मात्रा में पानी के साथ घोल बनाकर फ्लेट फैन नाजल वाले स्प्रेयर से छिड़काव करने से खरपतवारों के अधिक क्षति के स्तर को बनाये रख कर प्रभावी नियंत्रण किया जा सकता है। वांईडिंग खरपतवार (लपेटने वाले खरपतवार) जैसे– काक्सिनिया, आईपोमिया एवं हिरनखुरी, पूर्वी उत्तर प्रदेश व बिहार के तराई वाले क्षेत्रों में गन्ने के उपज को बुरी तरह प्रभावित करते हैं। इसके प्रभावी नियंत्रण के लिए मेट्रीव्यूजीन नामक दवा का 1.25 किग्रा. सक्रिय तत्व मात्रा प्रति हेक्टेयर की दर से खरपतवारों के उगने से पहले प्री–इमरजेंस के रूप में प्रयोग करने से प्रभावी प्रबन्धन/नियंत्रण हो जाता है। एक विधि के प्रयोग से बेहतर है कि सभी संभव खरपतवार प्रबन्धन/नियंत्रण के विधियों का प्रयोग किया जाय। उदाहरण स्वरूप खरपतवारों के जमने से पहले मेट्रीव्यूजीन नामक दवा का प्रयोग, इसके पश्चात 2,4 –डी का गन्ने की बुआई के 60 दिन बाद प्रयोग व एक होईंग बुआई के 90 दिन पश्चात करने से केवल रासायनिक विधि से प्रबंधन की तुलना में बेहतर परिणाम मिलते हैं।

सारांश

गन्ने की फसल से अधिक उत्पादन में वृद्धि करने, मृदा की स्थायी उर्वरता बनाये रखने एवं किसानों की आय में बढ़ोत्तरी करने में यदि अच्छे सस्य प्रबन्धन/क्रियाओं का उपयोग किया जाय तो काफी अच्छे परिणाम मिल सकते हैं। कुछ ऐसे जलवायुवीय कारक हैं, जैसे – गर्मी में प्रतिकूल तापमान, सर्दी के मौसम में कम तापक्रम, पौधे की बढ़वार पर विपरीत प्रभाव डाल रहे हैं। किसानों द्वारा अच्छे उन्नत सस्य विधियों का प्रयोग न करना (जानकारी एवं जागरूकता के अभाव के कारण,) जैसे– गन्ने की पत्ती का पुनः खेत में उपयोग न करना, संतुलित उर्वरकों का संस्तुतियों एवं मृदा परीक्षण के आधार पर प्रयोग न करना, मृदा स्वास्थ्य प्रबन्धन का ध्यान न रखना, जल उपयोग क्षमता बढ़ाने हेतु उचित सिंचाई पद्धति का प्रयोग न करना, उचित जल निकास का ध्यान न रखना, गन्ने की कटाई का उचित समय सारणी न अपनाना एवं साथ–साथ एकीकृत कीट एवं रोग प्रबन्धन की जानकारी न होना और इसे न अपनाना, ये सब गन्ने की कम उत्पादकता एवं उत्पादन के प्रमुख कारण हैं। उपोष्ण जलवायुवीय क्षेत्रों में गर्मी के दिन में अत्यधिक तापमान का होना, जाड़े के दिनों में वांछित तापक्रम से नीचे लम्बे समय तक ठंढ़ रहना, जिस समय गन्ने की फसल पकने के लिए होती है, एक महत्वपूर्ण कारक हैं, जिससे गन्ने का उत्पादन विपरीत रूप से प्रभावित हो रहा है। अतः अच्छी संस्तुत सस्य प्रबन्धन क्रियाओं का प्रयोग व उचित प्रजातियों के चयन, साथ ही साथ उपरोक्त लेख में दी गयी जानकारी के अनुसार गन्ने की खेती करने से गन्ने का उत्पादन बढ़ाया जा सकता है एवं उचित शर्करा की मात्रा को बनाये रखते हुए अधिक लाभ कमाया जा सकता है।

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

गन्ने में मार्कर से कितना फायदा?

राघवेन्द्र कुमार, संगीता श्रीवास्तव एवं अश्विनी दत्त पाठक
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

मिठास के लिए सबसे उपयुक्त फसल गन्ना है, जो आए दिन किसान तथा शर्करा उद्योग को आर्थिक रूप से प्रभावित करता है। एक नकदी फसल होने के कारण इसके उत्पादन को बढ़ाने के लिए लगातार प्रयास किए जा रहे हैं। उत्पादकता वृद्धि में सबसे महत्वपूर्ण है,उन्नतशील, शर्करावान तथा रोगमुक्त गन्ने की प्रजातियों का विकास, जो कृषि वैज्ञानिकों के लिए यह एक चुनौती भरा कार्य है।

यह सर्वविदित है कि खेतों में उगाए जाने वाला सामान्य गन्ना मूल रूप से तीन कल्टीवेटेड गन्ने की स्पेशीज़, *सैकेरम ऑफिसिनेरम, से. बारबेरी, से. साइनेन्स* तथा दो जंगली जातियाँ *से. स्पॉन्टेनियम* तथा *से. रोबस्टम* के आपसी संकरण संयोग से विकसित हुआ है। इस पौधे की विभिन्न प्रजातियाँ (किस्में) विश्वभर में लोकप्रिय है। वस्तुतः गन्ना हेट्रोजॉयगस प्रकृति के घास कुल का पौधा है और कोशिकानुवंशकी दृष्टिकोण से विविधतापूर्ण गुणसूत्रों के कारण अधिक महत्वपूर्ण है। इनमें सामान्यतः 70 से 130 संख्या में गुणसूत्र पाए जाते है। आनुवंशिक जटिलता की वजह से इनके प्रजनन कार्य तथा प्रजातियों के विकास में अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।

गन्ने को ज्वार तथा अन्य मिलते–जुलते पौधों से प्रजनन कराने में प्रजनक वैज्ञानिकों को अभूतपूर्व सफलता मिली है। किन्तु प्रजनन (क्रॉसिंग) से लेकर व्यावसायिक प्रजाति के विमोचन करने के दरम्यान लम्बी अवधि बीत जाने, तथा प्रक्षेत्र प्रयोगों में कई बार निरीक्षण तथा आँकड़ों में आई त्रुटियों के कारण वांछित कृन्तक/जीवद्रव्य से समुन्नत प्रजातियों के चयन में अशुद्धता आ जाती है। ऐसी स्थिति के समाधान हेतु 19वीं शताब्दी के अंत में गन्ने के जैव आणविक स्वरूप, जीनोमिक्स तथा जैव प्रौद्योगिकी के सामंजस्य से आनुवंशिक मार्कर का उपयोग किया जा रहा है। मार्कर से गुणसूत्र में विद्यमान विभिन्न प्रकार के गुणों तथा लक्षणों (ट्रेट) को प्रभावित करने वाले जीन की पहचान सुगमतापूर्व की जाती है। जीन के आनुवंशिक अणु जैसे डीएनए (डी ऑक्सीरिबोन्यूक्लिक एसिड), आरएनए (रीबोन्यूक्लिक एसिड) तथा प्रोटीन के कोड –ढूँढ़ लिए जाते है। बाद में सार्थक जैविक सूचना को कम्प्यूटरीकृत साँख्यिकी के माध्यम से नित नई–नई प्रजातियों के विकास के उपयोग में लाया जाता है। इसे मार्कर सहायक चयन (मार्कर एसीस्टेड सेलेक्शन/एमएसएस) के नाम से जाना जाता है। गन्ना प्रजनन कार्यक्रम में जैव प्रौद्योगिकी के उपयोग से शोधकार्य में जहाँ एक ओर व्यय धन तथा समय की बचत होती है, वहीं दूसरी तरफ जैव सूचना विज्ञान के माध्यम से इनके आनुवंशिक अनुक्रमों के डाटाबेस सुरक्षित रखने में मदद मिलती है।

आज के दौर में गन्ना फसल को सबसे अधिक नुकसान, शर्करा के प्रतिशत मात्रा में ह्रास, लाल सड़न रोग, बेधक नाशीकीट, सूखा तथा जल भराव इत्यादि से होता है। ऐसी दशा में गन्ने की नई–नई विमोचित प्रजातियाँ प्रायः अपना अस्तित्व पाँच से दस वर्षों में खो देती हैं। इस प्रतिकूल दशा के समाधान तथा यथायोग्य प्रजाति उन्नयन के लिए प्रजातियों के प्रजनक में आणविक मार्कर का उपयोग किया जाता है। विश्व के प्रगतिशील राष्ट्र जैसे दक्षिण अफ्रीका, आस्ट्रेलिया तथा अमेरिका में गन्ने की प्रजातियों के सुधारक जीनों के लाभकारी मार्कर से सम्बन्धित शोध परियोजनाओं का श्रीगणेश हुआ जो इन दिनों काफी लोकप्रिय हो रहे हैं।

क्या है आनुवंशिक मार्कर?

आनुवंशिक मार्कर को प्रपांतरण रीति तथा विकासवादी

गतिकी के आधार पर तीन प्रमुख वर्गों में बाँटा जाता है–रूपात्मक, जैव रासायनिक तथा आणविक मार्कर।

- रूपात्मक (मॉर्फोलॉजिकल) मार्कर, जो सामान्य नजरों से देखा परखा जाता है। गन्ने के विभिन्न गुण (ट्रेट) जैसे विभिन्न प्रजातियों में पाए जाने वाले रंग, लम्बाई, पत्ती विन्यास, गांठ के स्वरूप इत्यादि रूपात्मक गुणों की व्याख्या की जाती है। इसकी सहायता से पारम्परिक प्रक्षेत्र प्रजनन–कार्य में आशानुकूल सफलता मिलती है। इसे दृश्य (वीजुअल) मार्कर भी कहा जाता है।
- जैव रासायनिक (प्रोटीन) मार्कर, ये वस्तुतः समउत्प्रेरक (आइसोजाइम) होते हैं। इलेक्ट्रोफोरेसिस के दौरान मार्कर के कोड जीन (आरएनए) पादप लोसाई (खास तरह के जीन के मिलने की जगह) को आत्मसात करके तुलनात्मक रूप से अल्प मात्रा में पॉलीमार्फिज्म बनाते हैं, अतः सार्थक तथ्य ठीक उजागर नहीं होते। गन्ने में शर्करा उत्पादन तथा रोग प्रतिरोधक जैविक सूचना का आकलन सम्यक ढंग से नहीं होने के कारण से प्रोटीन मार्कर का उपयोग बहुत कम किया जाता है। कुछ विशेष ट्रेट जैसे अजैविक कारक सूखा अथवा अन्य पारिस्थितिकीय सम्बन्धों वाले जीन को उजागर करने में आइसोजाएम के व्यापक उपयोग किए जाते हैं।
- वस्तुतः आणविक मार्कर, जैविक अणु, डीएनए के खास हिस्से (फ्रेगमेन्ट्स) होते हैं जो जीनोम के किसी विशेष स्थान पर अज्ञात डीएनए के अनुक्रम (सिक्वेन्स) को उजागर करने में सहायता प्रदान करते है। समस्याग्रस्त जीन को चिन्हित करने में इनका बहुमूल्य योगदान है। प्रायः मार्कर डॉमिनेन्ट तथा को-डॉमिनेन्ट प्रकृति के होते है, जिन्हें उपयोगिता के आधार पर तीन प्रमुख वर्गों में बाँटा गया है। इन्हें प्रथम, द्वितीय तथा नई पीढ़ी के आणविक मार्कर कहते हैं। इनकी सहायता से कई प्रकार के आनुवंशिक गुण (एलिल) तथा लक्षण (ट्रेट) का आनुवंशिक प्रतिचित्रण (मैपिंग) किया जाता है। किसी भी जीनोम में आनुवंशिक मार्कर के खास विश्लेषण में दो स्थिति में मैपिंग की जाती है।

पहली दशा में गुणसूत्रों के खास समूह के भौतिक रूप को दर्शाना तथा दूसरे स्थिति में उनके गुणसूत्र के आनुवंशिक कड़ी श्रृंखला (लिकेंज) को सप्रमाण प्रस्तुत करना है। इस प्रकार मार्कर के लिकेंज को जीन के पॉलिमॉर्फिक स्वरूप में दर्शाया जाता है, जो वस्तुतः न्यूक्लियोटाइड (एक विशेष प्रकार के जैविक केंद्रीय अम्ल) के अनुक्रम को परिभाषित करता है। पॉलिमॉर्फिक पहचान के जरिए वैज्ञानिक किसी विशिष्ट जाति, प्रजाति अथवा इसके जीवद्रव्य के डीएनए के अनुक्रम तथा उनके बीच के परिवर्तनशीलता (वेरिएबिलिटी) को आनुवंशिक मैपिंग की मद्द से प्रतिपादित करते हैं। एक या एक से अधिक गुण तथा लक्षण को पहचानने वाले मार्कर को मार्कर सहायक चयन में इस्तेमाल किया जाता है। इससे प्रजनक संततियों को आनुवंशिक गुणों के आधार पर चयनित करने में सुगमता प्राप्त होती है।

आणविक मार्कर की सहायता से फायलोजेनेटिक सम्बन्धों को सफलतापूर्वक निरूपित किया जाता है। इनमें डीएनए फिंगरप्रिंटिग तथा विविधता विश्लेषण अत्यन्त प्रमुख है जिसके द्वारा खास पादप वर्ग, जाति तथा समुदाय का वर्गीकरण, तुलनात्मक मैपिंग, क्वांटिटेटिव ट्रैटलोसाई (क्यूटीएल) इत्यादि प्रयोजन प्रमुख हैं। मार्कर से चिन्हित डीएनए तथा प्रोटीन (एन्जाइम्स) को पॉलीमेरेज चेन रिएक्सन (पीसीआर) की सहायता से अध्ययन के पश्चात् जेल इलेक्ट्रोफोरेसिस के उपरान्त लाभकारी जैविक अणु को बैण्ड के रूप में चिन्हित करके उनके कोडोन की जैविक सूचना जमा कर ली जाती है।

विविधता विश्लेषण

गन्ना में आनुवंशिक विविधता विश्लेषण के लिए रेस्ट्रीक्टेड फ्रेग्मेन्ट लेन्थ पॉलीमार्फिज्म (आरएफएलपी), रैन्डम एम्प्लिफायड पॉलीमार्फिक डीएनए (आरएपीडी), एम्प्लिफायड फ्रेग्मेन्ट लेन्थ पॉलीमार्फिज्म (एएफएलपी) तथा कुछ विशेष माईक्रोसेटेलाईट्स (सिम्पल सिक्वेन्स रिपिट्स या एसएसआर तथा सिम्पल टेन्डम रिपिट्स या एसटीआर) मार्कर का उपयोग व्यापक रूप से किया जाता है। इनमें विशेष रूप से एसएसआर अथवा एसटीआर द्वारा किसी प्रजाति अथवा समुदाय की जेनेटिक विविधता को पहचानने में सुगमता होती है।

किसी पादप समष्टि (पॉपुलेशन) में आणविक मार्कर को प्रजातियों के विकास के आधार पर दो प्रमुख भागों में वर्गीकृत किया जाता है–जीन लक्षित मार्कर (जीन टारगेटेड मार्कर या जीटीएम) तथा कार्यात्मक मार्कर (फंक्शनल मार्कर या एफएम)।

जीन लक्षित मार्कर से जीन के अन्दर पॉलीमार्फिजम वाले अनुवादित स्थान को सुगमतापूर्वक प्रदर्शित किया जाता है और इससे विशेष स्वरूप (ट्रेट) से सम्बन्धित मार्कर की लाईब्रेरी बनाने में सफलता मिलती है। उदाहरण स्वरूप गन्ने के विभिन्न प्रजाति तथा जीवद्रव्य पौधों में शर्करा बनाने वाले जीन जो गुणसूत्र के खास लोसाई (स्थान) पर केन्द्रित होते है, को पहचान करने वाले मार्कर का विकास किया जा सकता है। ऐसे मार्कर के प्राईमर डिजान के संयोग से उपलब्ध जैव अनुक्रम सूचना (खास प्रकार न्यूक्लियोटाइड कोडोन) को सुरक्षित रखा जाता है। बाद में इन्हें प्रजनन कार्य में उपयोग लाया जाता है। दूसरी ओर कार्यात्मक

मार्कर से कार्य सम्बन्धित स्वरूप (ट्रेट) जैसे रोग प्रतिरोधकता, सहनशीलता इत्यादि कार्यों में मदद मिलती है।

जीन टैगिंग तथा मैपिंग

आणविक स्तर पर गन्ने के अनेक उपयोगी जीन जैसे रोग प्रतिरोधी, शर्करा निर्माण में सहायक तथा अन्य अजैविक प्रतिकूल परिस्थितियों से मुकाबला करने वाले सहायक जीन इत्यादि गुणसूत्र के खास स्थान (लोसाई) पर केन्द्रित रहते हैं। ऐसे जीन को विशेष प्रकार के आण्विक तथा जैव रासायनिक मार्कर के मदद से टैगिंग किया जाता है। इस कार्य में आरएफएलपी, आरएपीडी, एएफएलपी, एसएसआर, सिंगल न्यूक्लियोटाइड पॉलीमार्फिज्म (एसएनपी) को उपयोग किया जाता है।

क्वान्टिटेटिव ट्रेट लोसाई के महत्व

प्रसिद्ध जैव आण्विक वैज्ञानिक गेल्डरमैन ने पहली बार क्वान्टिटेटिव ट्रेट लॉसी (क्यूटीएल) के माध्यम से अनेक ट्रेट यानी गुणों वाले जीनोम क्षेत्र के बारे में बतलाया था। जीनोमिक्स से प्राप्त परिणाम के आधार पर ऐसा देखा गया है कि पादप प्रकृति में ढ़ेर सारे उपयोगी गुण तथा लक्षणों से लैस क्यू टी एल उस पादप प्रजाति अथवा समष्टि कृन्तक (क्लोन्स पॉपुलेशन) में छुपे पड़े होते हैं। क्यूटीएल से मात्रात्मक लक्षणों को सुनिश्चित करने के लिए प्रभावी आणविक मार्कर में उपस्थित विशेष लिकेंज का उपयोग होता है। इस लिंकेज की मदद से उस पॉपुलेशन का सम्यक मैप तैयार कर लिया जाता है। इस प्रकार क्यूटीएल से ट्रेट की पहचान में निम्नलिखित चरण होते हैं–

- सम्यक पैतृक से सम्यक मैपिंग पॉपुलेशन विकसित होती है।
- विशेष एवं प्रभावी आणविक मार्कर से किसी विशेष लिकेंज मैप को संतृप्त किया जाता है।
- किसी सार्थक मैपिंग पॉपुलेशन से विश्वसनीय फीनोटॉइपिंग किया जाता है।
- इसको स्टैटिस्टिकलएनालिसिस पैकेज की सहायता से क्यूटीएल की पहचान में उपयोग किया जाता है।

महत्वपूर्ण उपलब्धियाँ

- सन् 1996 में डाएग्रोइस और उनके साथियों ने ब्राजील के गन्ना प्रजाति आर 570 में एएफएलपी/बीएसए (बल्क सेंग्रीगेन्ट एनालिसिस) तकनीक द्वारा रस्ट (पकसिनिया मेलानोसिफेला) बीमारी से सम्बन्धित जीन ब्रू–1 का पता लगाया गया।
- बार्नस, शदरफोर्ड एवं बोथा ने सन् 1997 में गन्ने की समुन्नत प्रजातियों के विकास के लिए विशेषकर रोग तथा नाशीकीट के लिए विशिष्ट ट्रेट लिंक्ड मार्कर के उपयोग की चर्चा की। उन्होंने एल्डाना, मोसाएक और स्मट के लिए 54 पॉलीमॉर्फिक आरएपीडी मार्कर भी प्रतिपादित किए थे।
- अमेरिका तथा ब्राजील के दो प्रसिद्ध जैव आणविक वैज्ञानिक, डीसिल्वा और ब्रेसियानी ने सन् 2005 में गन्ने के संभ्रांत जीवद्रव्यों में शर्करा जीन के क्यूटीएल टैगिंग के लिए ईएसटी द्वारा आरएफएलपी मार्कर का उपयोग किया। इस की सहायता से उन्होंने शर्करा जीन से सम्बंधित सुक्रोज सिन्थेज प्रोटीन के जीन के एकल डोज मार्कर को प्राप्त किया जिसकी सम्भावना दर α=0.01 है तथा इसकी सहायता से अन्य ईएसटी होमोलोग्स को भी गन्ना प्रजाति प्रजनन कार्यक्रम में प्रयोग कर सकते हैं।
- आजकल शोध द्वारा माईक्रो आरएनए चिन्हित किए जा रहे है। इसके जैविक तथा अजैविक क्रास की प्रतिरोधी क्षमता विकसित करने वाले जीन के एक्सप्रेशन में मुख्य योगदान होता है। गन्ने में लगभग 50 से अधिक माईक्रो आरएनए सूखा, 11 माईक्रो आरएनए लवणीयता, लगभग 240 माईक्रो आरएनए रोग तथा अन्य कई सम्बन्धित फसलों में शुगर ट्रेट के लिए पहचाने गए है। इस दिशा में अनेक उत्कृश्ट शोध कार्य सम्पन्न हुए हैं। लेकिन वस्तुतः गन्ना के पॉलीप्लाइड हेट्रोजायगस फसल होने के कारणवश चुनौतियाँ भी अधिक हैं। नवीन सिक्वेसिंग तकनीकी, कम्प्यूटेशनल सुविधा तथा कम्पेरेटिव जेनोमिक्स के द्वारा इन समस्याओं का समाधान प्रभावी ढंग से किया जाता है।
- ट्रांसजेनिक तकनीकी की मदद से इन दिनों दूसरे किसी जीव के लाभकारी जीनों (जैसे सूखा तथा जलप्लवन सहनशीलता, तथा रोग प्रतिरोधी इत्यादि) उपयोग में लाया जाता है। इस क्रम में इसके सहायता से 'बेट–ए' जीन जो राइजोबियम मेलिलोटी जीवाणु से ग्लाएसिन–बेटेनिक के रूप में मिला है, की सहायता से सूखा सहनशील, ट्रांसजेनिक गन्ना प्रजाति विकसित करने में अभूतपूर्व सहायता प्राप्त हुई है।

गन्ना प्रजनन के उपरान्त जीवद्रव्य उत्पादन

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ में गन्ना मार्कर शोध कार्य

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ के फसल सुधार विभाग में ईएसटी मार्कर संसाधन में बढ़ोत्तरी करने के उद्देश्य से पहली बार लगभग 26000 ईएसटी विकसित किये गये, जो गन्ना के लोकप्रिय प्रजातियों जैसे कोएस 767 (सामान्य), को 1148 (सूखा तथा लाल सड़न रोग), कोएस 8118 (जल भराव प्रतिरोधक), के क्रास ट्रेट से प्राप्त किए गए थे। ईएसटी संसाधन द्वारा संस्थान ने 351 नॉवेल ईएसटी–एसएसआर मार्कर विकसित किए हैं। इनमें 227 ईएसटी गन्ना, ज्वार तथा अन्य सम्बन्धी अनाज फसल में स्थानांतरणीय (क्रॉस ट्रान्सफेरेवल) प्रकृति के पाए गए हैं। लाल सड़न (रेड रॉट) रोग के मार्कर सहायक चयन हेतु 4 एसोसिएटेड मार्कर विकसित किए गए हैं। रोग प्रतिरोधी जीन (आर जीन) के संदर्भ में 34 प्यूटेटिव रेजिस्टेन्ट जीन एनालॉग्स (आरजीए) की पहचान की गई है। इसके अन्तर्गत न्यूक्लियोटाइड बाइन्डिंग साईट/ल्यूसिन रिच रिपिट्स (एनबीएस/एलआरआर) जीन अनुक्रम तथा विशिष्ट प्रतिरोधी प्रोटीन, एमआरएनए अनुक्रम का आणविक मिलान गन्ना, ज्वार तथा अन्य सम्बंधी फसल के प्रजातियों से किया गया है। गन्ने के कैंसर रोग रेड–रॉट तथा स्मट (कंडुवा रोग) के पहचान के लिए भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ के फसल सुधार विभाग में इन बीमारियों के कारक के जीन अनुक्रम (डाटाबेस) उजागर करने वाले 'आणविक मार्कर' पहचान (डायग्नोस्टिक) किट का विकास किया गया है। गन्ना घासी प्ररोह बीमारी के लिए जिम्मेदार, सूक्ष्मजीवी, फाइटोप्लाज्मा जो संवाहक कीट से फैलता है, के आणविक स्तर पर पता लगाने के लिए पीसीआर आधारित जाँच पद्धति विकसित करने में सफलता हासिल की गई है।

गन्ने के व्यावसायिक प्रजातियों के संभ्रान्त तथा गुणवान जीवद्रव्य तथा सेकरम के उच्च जाति के जीवद्रव्य के लगभग 150 गन्नों की डीएनए फिंगरप्रिन्टिग एसएसआर, आरएपीडी तथा एसएसआर मार्कर द्वारा की गई है। गन्ने के 92 जीवद्रव्यों से एसएसआर मार्कर के माध्यम से लगभग 60 मार्कर ट्रेट एसोसिएशन (एमटीए) की पहचान की गई। लगभग 108 गन्ना जीवद्रव्यों के 15 ट्रेट से सम्बद्ध मार्कर की पहचान की गई है। विश्व में पहली बार संस्थान ने गनने के लिए कन्जर्व्ड इन्ट्रॉन स्पेसिफिक प्राइमर्स (सीआईएसपी) मार्कर विकसित किए। इसके मदद से जेनेटिक डायवर्सिटी तथा जीन टैगिंग के उद्देश्य में सफलता मिली है। गन्ने में एसएसआर मार्कर की वर्धित प्रतिदर्शिता वाले पॉलीमॉर्फिक लोसी के संदर्भ में सिंगल स्टैण्ड कन्फर्मेशनल पॉलीमॉर्फिज्म मार्कर विकसित किये गये। अंतर्जातीय संकरित गन्ना पौधों में प्रजनकों द्वारा प्रदत्त उत्तरदायी गुणसूत्रों की पहचान के लिए स्वउद्दीपित अविस्थापित संकरण (फ्लोरेसेन्ट इनसिटु हाईब्रिडाईजेशन) को कारगर कोशिकीय आणविक मार्कर के रूप में उपयोग किया गया है।

ट्रांसजेनिक तकनीकी की मद्द से इन दिनों दूसरे किसी जीव के लाभकारी जीनों को उपयोग में लाया जाता है। इस क्रम में उष्ण कटिबंधीय गन्ना प्रक्षेत्र में उगाए जाने वाले लोकप्रिय प्रजाति कोलख 8102 में तना बेधकनाशी से संक्रमण को रोकने के लिए क्राई 1 एबी जीन का स्थानान्तरण किया गया है। वर्तमान में गन्ने के विकास एवं शर्करा जीन, जैविक व अजैविक क्रास की सहनशीलता हेतु जीन तथा गन्ने के कटाई उपरान्त शर्करा क्षय को रोकने हेतु आरएनए सेक तकनीक द्वारा ट्रांसक्रिप्टोम विश्लेषण पर शोध कार्य जारी है। आजकल शोध द्वारा माईक्रो आरएनए चिन्हित किए जा रहे है। इनका जैविक तथा अजैविक क्रास की प्रतिरोधी क्षमता विकसित करने वाले जीन के एक्सप्रेशन में मुख्य योगदान होता है। इस दिशा में आगे शोध कार्य की आवश्यकता है परन्तु गन्ना के पॉलीप्लाइड हेटराजायगस फसल होने के कारणवश चुनौतियाँ भी अधिक हैं।

भविष्य की संभावनाएँ

विश्व में कृषि क्षेत्र में प्रजातियों के उन्नयन में लगातार प्रयास किए जा रहे हैं। गन्ना प्रजनन के अलावा ऐसे मार्कर से अनेक आनुवंशिक समस्याओं के समाधान में सफलता मिलती है। फिंगरप्रिंटिंग से गन्ने के विविध प्रजातियों के पहचान सम्बन्धित सभी वैज्ञानिक सूचनाओं (जैविक डाटाबेस) को आसानी से सुरक्षित रखा जाता हैं। जीनोटाइपिंग तथा डाटा माइनिंग में मार्कर बहुत ही कारगर साबित हो सकता है। जिनोमिक्स के अन्तर्गत विभिन्न प्रकार के आणविक तथा जैव रासायनिक मार्कर सम्बन्धित ज्ञान को विश्व स्तर पर लोकप्रिय बनाने के उद्देश्य से भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् के दो प्रमुख संस्थान (भाकृअनुप–गन्ना प्रजनन संस्थान, कोयम्बटूर तथा भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ) में सराहनीय कार्य निष्पादित किए जा रहे है। वह दिन दूर नहीं जब गन्ने को जानने तथा पहचानने के लिए विश्व को मार्कर का एक डिजिटल 'आधार' जारी करने की जरूरत पड़ जाए।

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

गन्ना खेती का आधुनिक स्वरुप

नरेन्द्र सिंह
कृषि विज्ञान केन्द्र, नगीना, बिजनौर

परम्परागत खेती में किसान भाई जहाँ गन्ना–पेड़ी–गेहूँ, गन्ना–पेड़ी–गेहूँ फसल चक्र अपना रहे है उसमे यथाशीघ्र परिर्वतन की आवश्यकता है क्योंकि इस प्रणाली को अपनाने से किसान भाइयों को दोहरी हानि हो रही है एक ओर गेहूँ काट कर देर से गन्ने की बुवाई होती है तो गन्ने की उपज बहुत कम प्राप्त होती है (औसतन 375 क्वि./हे.) साथ ही देर से (जनवरी के अन्त मे) बुवाई करने पर गेहूँ की पैदावार औसतन 25 क्वि./हे. प्राप्त होती है जो काफी कम है वही दूसरी ओर अधिक पैदावार लेने के प्रयास में किसान भाई अधिक मात्रा मे खाद, बीज का प्रयोग करके उत्पादन लागत बढ़ा रहे है परिणामस्वरुप किसान भाईयों को दोहरी हानि का सामना करना पड़ रहा है। ऐसी परिस्थितयों में यह आवश्यक है कि हम नये स्वरुप में खेती करना प्रारम्भ करें जिसके लिए आवश्यक है कि हम सर्वप्रथम अपने फसल चक्र में परिवर्तन करें।

जिस खेत में गन्ना बोना है उसमें रबी की फसल काटनें के उपरान्त किसान भाई ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई करके खेत का सौर्यीकरण करें उसमें ढ़ैचा की हरी खाद लें तत्पश्चात हरी खाद को खेत मे पलटकर अच्छी तरह मिक्स करें सितम्बर के प्रथम सप्ताह में तापमान को दृष्टिगत रखते हुए गन्ने की बुवाई करें इस समय बोये गये गन्ने का जमाव अच्छा होता है और बढ़वार तेज गति से होती है अच्छी तरह से देखभाल किए गये गन्ने से अगले वर्ष फरवरी माह में औसतन 1000–1450 क्वि./हे. की दर से उपज ली जा सकती है यहाँ किसान भाईयों के मन में यह प्रश्न आना लाजमी है कि हमारी खरीफ एवं रबी की दो फसलों (धान–गेहूँ) का नुकसान हो रहा है लेकिन अनुसंधान के परिणामों के अनुसार :– यदि खरीफ में धान की फसल लेने पर औसत पैदावार 50 क्वि./हे. मिलती है तथा रबी में गेहूँ से औसत पैदावार 50 क्वि./हे. मिलती है।

और वही हम अच्छी देखभाल करके यदि

गन्ने की औसत पैदावार प्राप्त करते है =1,200 क्वि. प्रति हे., विक्रय मूल्य रु. 300/क्वि.
गन्ने से प्राप्त आय हुई रु. =1200 x 300=360,000.00
गन्ने की औसत उत्पादन लागत रु. = 145,000.00
शुद्ध लाभ हुआ रु. =360,000.00–145,000 = 215,000.00

अब किसान भाइयों के मन में दूसरा प्रश्न आता है कि हमें परिवार के उपयोग के लिए धान – गेहूँ की फसल भी चाहिए तो हमारा सुझाव है कि आप अपने खेत को इस प्रकार विभाजित करें कि आवश्यकता के अनुरुप आपको धान – गेहूँ एवं दूसरी फसल भी मिल जाये, उत्पादन लागत भी घटे और प्रति इकाई भूमि से अधिकतम पैदावार भी मिल जाये, तभी हम खेती को लाभकारी बना सकते है अन्यथा आप समझ गये होंगे कि अधिक उत्पादन लागत लगाकर भी हमें शुद्ध लाभ के रुप में मात्र रु. 87,500 की आमदनी होती है और जबकि कम लागत से 2,15,000 रु0 की आमदनी मिल सकती है।

ट्रेन्च विधि से सितम्बर माह में गन्ना बुवाई करने से सामान्य प्रचलित विधि की तुलना में 40–45 प्रतिशत अधिक उपज प्राप्त की जा सकती है।

बुवाई का समय 15 सितम्बर से 30 अक्टूबर

बीज गन्ना का चुनाव

उत्पादन बढ़ाने में बीज की बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका है इसलिए बीज का चयन बहुत ही सावधानीपूर्वक करना चाहिए। लगभग 8–10 माह की रोग व कीटों से मुक्त फसल जिसे पर्याप्त मात्रा में पोषक तत्व दिया गया हो तथा गन्ना गिरा हुआ न हो का

धान की फसल लेने पर औसत पैदावार 50 क्वि./हे., विक्रय मूल्य रु. 1500/क्वि.
गेहूँ की फसल लेने पर औसत पैदावार 50 क्वि./हे., विक्रय मूल्य रु. 1500/क्वि.
धान एवं गेहूँ की फसलों से कुल आमदनी रु. = 100 x 1500 = 150,000.00
फिर देर से गन्ना बोने पर औसत पैदावार = 375 क्वि./हे., विक्रय मूल्य रु. 300क्वि.
गन्ना से आमदनी हुई = 375 x 300 = रु. 1,12,500.00
धान + गेहूँ + गन्ना से कुल आमदनी रु. =150,000.00 + 112,500.00 = 262,500.00
गेहूँ की औसत उत्पादन लागत रु. = 35,000.00
धान की औसत उत्पादन लागत रु. =40,000.00
गन्ने की औसत उत्पादन लागत रु. =100,000.00
कुल उत्पादन लागत रु. =1,75,000.00
शुद्ध लाभ हुआ दो वर्ष में रु. = 262,500–175,000 = 87,500

बीज के लिए चुनाव करें। बीज हेतु कभी भी पतले गन्ने का प्रयोग नहीं करना चाहिए, जड़ बाले हिस्से का बीज में प्रयोग ना करें तथा जिस खेत से बीज लेना हो उसमें सिंचाई के उपरान्त यूरिया का प्रयोग करना चाहिए। गन्ना काटते समय ध्यान रखें कि दो आँख के टुकड़े तेज धार बाले हथियार से सावधानी पूर्वक काटें जिससे आँख को किसी प्रकार की क्षति न हो।

टुकड़ों का आकार केवल दो आँख के टुकड़े।

बीज उपजार

बीजोपचार हेतु कार्बेनडाजिम की 200 ग्राम मात्रा को 100 लीटर पानी में घोल बना कर टुकड़ों को 25–30 मिनट तक डुबोना चाहिए। साधारणतः किसान भाई टुकड़ों को पानी में भिगोते हैं और तुरन्त ही निकाल लेते हैं जो सही तरीका नहीं है क्योंकि इतने कम समय में दबा टुकड़ों में समाहित नहीं हो सकती।

बीज दर 50–60 क्वि./हे. बीज प्रयाप्त होता है ।

खेत की तैयारी

ट्रेन्च विधि से बुवाई हेतु पहली जुताई 20–25 सेमी. गहरी अवश्य की जानी चाहिए, मिट्टी की किस्म के अनुसार 3–4 जुताई हैरो एवं कल्टीवैटर से करके पाटा लगाकर मिट्टी को भुरभुरा व खेत समतल कर लेना चाहिए।

ट्रेन्च खोलना

सामान्यतः 120–150 सेमी. की दूरी पर 20–25 सेमी. गहरी नाली ट्रेन्च डिगर से बनाना चाहिए।

गन्ना बुवाई

ट्रेन्च विधि में आज कल बुबाई दो तरह से की जाती है :–

1. चौड़ी आकृति बाली ट्रेन्च में बीज टुकडों की दो लाइनों की सामानान्तर बुबाई करना
2. वी आकार बाली ट्रेन्च में बीज टुकड़ों की सिंगल लाईन में बुबाई करना

दो आँख के टुकडों को जमाव वर्धक दवा से उपचारित करने के बाद लम्बवत इस प्रकार डालें कि उनकी आँखें अगल–बगल में रहें। दीमक व अंकुर बेधक के नियंत्रण हेतु बुवाई के समय टुकडों के ऊपर रीजेन्ट 25 किग्रा या फोरेट 25 किग्रा/हे. या क्लोरपाइरीफास 20 ई.सी. 6.25 ली./हे. को 1875 लीटर पानी में घोल बनाकर टुकडों पर छिड़काव करें। टुकडों की ढ़काई सावधानी पूर्वक इस प्रकार करें कि उनके ऊपर 2–3 सेमी से अधिक मिट्टी न गिरने पायें।

पोषक तत्व प्रबंधन

मृदा परीक्षण के आधार पर अथवा मृदा उर्वरतानुसार कुल 180–200 किग्रा नत्रजन, 60–80 किग्रा फास्फोरस, 40–60 किग्रा पोटाश, 25 किग्रा जिंक सल्फेट व 18–20 किग्रा फैरस सल्फेट/हे. तथा बुवाई के समय नाली में जैविक खाद (प्रेसमड सड़ी 50 क्वि./हे. या गोबर कम्पोस्ट 100–150 क्वि./हे.) एवं बुवाई के समय कुल नत्रजन की 1/3 मात्रा तथा फास्फोरस, पोटाश की पूरी मात्रा नाली में डालकर मिट्टी में मिलायें। शेष नत्रजन को 3–4 बार में पर्याप्त नमी में टापड्रेसिंग करें साथ ही जिंक सल्फेट का प्रयोग अन्तिम जुताई के साथ ही कर लेना लाभकारी रहता है।

सिंचाई

- बुवाई के समय नमी की कमी या देर बसन्त की दशा में पहली सिंचाई बुवाई के तुरन्त बाद करें।
- पर्याप्त नमी की दशा में बुवाई की गयी हो तो पहली सिंचाई 10 दिन के अन्दर करना चाहिए।
- मिट्टी के अनुसार ग्रीष्मकाल में 10–15 दिन के अन्तराल पर सिंचाई करना आवश्यक है।
- वर्षाकाल में 20 दिन तक वर्षा न होने की दशा में सिंचाई अवश्य करें। नाली में सिंचाई करने से प्रति सिंचाई 60 प्रतिशत पानी की बचत होती है।
- नाली में सिंचाई करने से समय कम लगता है, जिससे ईधन/डीजल की बचत की जा सकती है।

खरपतवार नियंत्रण

आज के समय में खेती में कार्य करने हेतु श्रमिक मिलना बहुत कठिन हो गया है और युवा वर्ग खेती करना नहीं चाह रहा है ऐसी परिस्थिति में उचित समय पर खरपतवार नियंत्रण यांत्रिक विधि अथवा रसायानिक विधि से सुगमतापूर्वक किया जा सकता है, यांत्रिक विधि में ट्रैक्टर चालित कल्टीवेटर अथवा पावर टिलर का प्रयोग कर सकते हैं इसके लिए यह आवश्यक है कि किसान भाई गन्ना बोते समय अपने फार्म पर उपलब्ध यंत्रों के हिसाब से गन्ने की दो पंक्तियों के मध्य की दूरी का व्यवस्थापन कर लें अथवा यंत्रो को पंक्तियों की दूरी के अनुसार समायोजित कर लें। गन्ने में इस तरह के कार्यों हेतु छोटे ट्रैक्टर का प्रयोग करना आर्थिक रुप से लाभकारी रहता है। रसायानिक विधि से खरपतवार नियंत्रण हेतु मेट्रीब्युजीन 725 ग्राम तथा 2,4–डी सोडियम साल्ट 1.25 किग्रा को 1000 लीटर पानी में घोल बना कर प्रति हैक्टर की दर से 30 दिन के अन्तराल पर दो बार छिड़काव करना चाहिए।

मिट्टी चढ़ाना

मई–जून (फसल बुवाई के अनुरूप) में बैल चालित डेल्टा या ट्रेन्च ओपनर से भी गन्ने के थानों में जड़ों पर मिट्टी चढ़ाना चाहिए। इससे नाली की जगह पर मेड़ व मेड़ की जगह पर नाली बन जाती है जो वर्षाकाल में जल निकास का काम करती है।

गन्ना बँधाई

इस विधि में अपेक्षाकृत गन्ने लम्बे व मोटे होते हैं जिसके

कारण वर्षाकाल में गन्ना गिरने की सम्भावना रहती है। अतः जुलाई के अन्तिम सप्ताह में पहली, अगस्त में दूसरी व आवश्यकतानुसार तीसरी कैंचीनुमा बँधाई करनी चाहिए।

फसल सुरक्षा

मार्च से मई–जून तक अंकुर बेधक व चोटी बेधक कीटों से प्रभावित गन्ने को काटकर निकालना तथा जून के अन्तिम सप्ताह से जुलाई के प्रथम सप्ताह के बीच पर्याप्त नमी होने की दशा में गन्ने की जड़ों के पास 33 किग्रा/हे. की दर से फ्यूराडान का प्रयोग करना चाहिए तथा जुलाई से सितम्बर माह तक 15 दिन के अन्तराल पर ट्राईकोकार्ड 2–5 कार्ड/हे. की दर से प्रत्यारोपण करना चाहिए।

ट्रेन्च विधि के लाभ

- इस विधि में गन्ने का जमाव 80–90 प्रतिशत तक होता है जबकि परम्परागत विधि से बुवाई करने पर जमाव 35–40 प्रतिशत तक प्राप्त होता है एवं 30–40 प्रतिशत तक मृत्यु दर होती है जबकि ट्रेन्च विधि में मृत्यु दर बहुत कम होती है।
- प्रति सिंचाई 60 प्रतिशत तक पानी की बचत होती है ।
- उर्वरकों के सदुपयोग क्षमता में वृद्धि होती है।
- गन्ना अपेक्षाकृत कम गिरता है।
- मिल योग्य गन्ने एक समान मोटे व लम्बे होते हैं जिसके कारण परम्परागत विधि की तुलना में 35–40 प्रतिशत अधिक उपज प्राप्त होती है।
- 0.2–0.5 प्रतिशत तक अधिक चीनी परता प्राप्त होता है।
- सामान्य विधि की तुलना में इस विधि से पेड़ी गन्ना की पैदावार 20–25 प्रतिशत तक अधिक होती है।
- भूमिगत कीट– ह्वाइट ग्रव एवं दीमक का अपेक्षाकृत कम प्रकोप होता है।
- इस विधि द्वारा गन्ने के बाद गन्ना प्रचलन के कुप्रभाव को कम किया जा सकता है क्योंकि पेड़ी के बाद जहाँ गन्ना नहीं होता है वहाँ पर गन्ने की बुवाई की जा सकती है।
- उत्तर भारत में उपज क्षमता व वास्तविक उपज में 35–40 प्रतिशत का अन्तराल है जिसे इस विधि द्वारा आसानी से पूरा किया जा सकता है।
- क्षेत्रफल में बिना वृद्धि किये गन्ने की उत्पादकता बढ़ाने में यह विधि उपयुक्त है।
- बुवाई उपरांत टुकड़ों के ऊपर केवल 3–5 सेमी. मिट्टी डाली जाती है।
- खेत में नमी की कमी होने की दशा में ट्रेन्च विधि से बोये गन्ने में तत्काल सिंचाई की जा सकती है।
- अन्तः फसल हेतु विशेष उपयोगी है क्योंकि गन्ने की दो पंक्तियों के मध्य दूरी अधिक होने के कारण आपस में प्रतिस्पर्धा बहुत कम होती हैं जिसके कारण दोनों फसलों से अच्छी उपज प्राप्त होती है।
- इस विधि में गन्ने की बुवाई नाली में तथा अन्तः फसलों की बुवाई मेड़ों पर होती है जिसके कारण दोनों फसलों में प्रतिस्पर्धा कम होती है।
- इस विधि में आलू की 1 या 2 पंक्ति, लहसुन की 4–5 पंक्ति, मटर व राजमा की 2–2 पंक्ति, लाही की 2 पंक्ति, गेहूँ की 3 पंक्ति आसानी से ली जा सकती है जिसका गन्ने की फसल के ऊपर कोई दुष्प्रभाव नहीं पड़ता है।
- बसन्तकालीन गन्ने के साथ मूँग, उर्द व भिण्डी की दो पंक्ति आसानी से उगाकर प्रति इकाई आय बढ़ाई जा सकती है।
- सामान्य विधि से गन्ने की उपज 600–800 क्वि. प्रति हे. प्राप्त होती है जबकि ट्रेन्च विधि से गन्ने की उपज 1200–1400 क्वि. प्रति हे. तक प्राप्त की जा सकती है। बिजनौर जनपद में कुछ प्रगतिशील कृषकों के द्वारा सितम्बर माह में बुबाई करके 1800–2100 क्वि. प्रति हे. तक उपज प्राप्त की गयी है।

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

गन्ना बीज की प्रचलित मात्रा को कम करने तथा शीघ्र बीज गुणन हेतु अन्तरालित रोपण (एसटीपी), पॉलीबैग एवं बडचिप विधि

राधा जैन, अजय कुमार साह एवं चन्द्र पाल सिंह

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

गन्ने की व्यवसायिक खेती हेतु 6–8 टन/हे. बीज की आवश्यकता होती है जोकि कुल उत्पादन का लगभग 10 प्रतिशत भाग होता है। बीज की अधिक मात्रा के कारण बीज शोधन, परिवहन, तथा भंडारण में एक बड़ी समस्या के साथ–साथ बीज कलिकाओं की जीवन क्षमता में कमी हो जाती है जिसके परिणाम स्वरूप बीज का अंकुरण कम होता है। नवीनतम उन्नत प्रजातियों के गन्ना बीज की अधिक मात्रा, परिवहन तथा बीज बहुगुणन की धीमी दर (अनुपात 1:8 से 1:10), बीज कार्यक्रम में एक बड़ी समस्या है। बीज की कम मात्रा, गुणवत्ता तथा बीज के द्रुत गति से गुणन हेतु एसटीपी, पॉलीबेग एवं बडचिप तकनीकें सटीक विकल्प हैं। इन तकनीकों हेतु गन्ना बीज की नर्सरी उगाई जाती है जिसमें जीवंत कालिका और रूट प्राइमोर्डियल युक्त स्कूप्ड बडचिपधसिगल बड सेट्स को बीज के रूप में उपयोग किया जाता है और इसे फफूंदीनाशक (0.1% बाइविस्टीन) तथा वृद्धि नियामक रसायनों (एथेफोन, 100 पीपीएम) के घोल में 20 मिनट तक भिगोने के बाद उपयोग किया जाता है। गन्ने की फसल को उगाने के लिए रोपाई हेतु 25 दिनों के अंदर सेटलिंग्स तैयार हो जाती है। बुआई की विभिन्न विधियों में उपयोग किए जाने वाले अलग–अलग प्रकार के बीजीय सामाग्री के अनुसार बीज की आवश्यकता निम्नलिखित सारणी संख्या–1 में दी गई है। तीन कलिकाओं वाले सेट्स से गन्ना की बुआई हेतु 6–8 टन/है. बीज की आवश्यकता होती है, जिसमें कलिकाओं का जमाव 30 प्रतिशत के आस–पास होता है, इसकी तुलना में एसटीपी में लगभग 2.0 टन/है., पॉली बैग में 2.0 टन/है. और बड चिप विधि में 1.0 टन/है. बीज की आवश्यकता होती है जो कि अपेक्षाकृत बहुत कम है और इसमें कलिकाओं का प्रस्फुटन अधिक (80–90:) होता है। परंपरागत विधि से बीज गुणन की दर, 1:10 की तुलना में इन तकनीकों में यह दर बहुत अधिक, एस टी पी में 1 रू. 40 पैसा, पॉली बैग में 1 रू. 50 पैसा तथा बडचिप विधि में 1 रू. 60 पैसा होती है। इन तकनीकों से फसल में एकःपता तथा गन्ने का औसत वजन अधिक होने के साथ–साथ गन्ने के कीमती बीज की भी बचत होती है और ईष्टतम प्रारम्भिक प्ररोह संख्या एवं पिराई योग्य गन्नों की संख्या (एनएमसी) सुनिश्चित होती है। बडचिप विधि में बचे हुए गन्नों को पिराई के लिए उपयोग किया जा सकता है क्योंकि इसमें बडचिप के स्कूप्ड हिस्से के अतिरिक्त पूरा गन्ना शेष बचा रहता है। इन तकनीकों को अपनाकर गन्ना किसान गन्ने का उत्पादन बढ़ाने के साथ साथ अपनी आय को भी बढ़ा सकते हैं।

एसटीपी तकनीक

आईसीएआर– भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ ने एक साथ किल्ले निकलने तथ गन्ने के अति शीघ्र बहुगुणन हेतु एसटीपी विधि विकसित की है इससे बीज गुणन अनुपात 1:10 से बढ़कर 1:40 तक हो जाता है। कई स्थानो पर नवीनतम विकसित प्रजातियों के तेजी से फैलाव में इस विधि ने उल्लेखनीय योगदान दिया है।

एस टी पी तकनीक में नर्सरी उगाने के लिए गन्ने के एक आँख के टुकड़े को गांठ के तुरंत ऊपर से और गांठ के नीचे 8–9 सेमी. पोर को छोड़कर काट लेते हैं। बीज टुकड़ों को 0.2 प्रतिशत कार्बेण्डाजिम तथा 0.2 प्रतिशत एसिटिक एसिड के घोल में 30 मिनट तक भीगोने के बाद तैयार क्यारी में टुकड़ों को कालिका और :टबैंड को भूमि की सतह से ऊपर रखते हुए ऊर्ध्वाकर (गन्ने की मोटाई के हिसाब से 600–800 टुकड़े) स्थिति में लगा देते हैं और टुकड़ों के ऊपर पॉलीथीन बिछा देते हैं। अधिकांश कलिकाएँ 3–4 सप्ताह में उग आती हैं जोकि 3–4 पत्तियों युक्त होती हैं।

सेटलिंग्स की रोपाई से पूर्व इनको सावधानीपूर्वक उखाड़कर उसकी पत्तियों के सिरों को कैंची से काट लें। कूँड़ खोलकर उसमें सेटलिंग्स की रोपाई कर दें। 90x60 सेमी. अन्तराल हेतु 9000 सेटलिंग्स तथा 75x45 सेमी. हेतु 29000 सेटलिंग्स की आवश्यकता होती है। रोपित सेटलिंग्स के प्ररोह को जमीन की सतह से 5 सेमी. ऊपर छोडकर मिट्टी से ढक देना चाहिए और हल्की सिंचाई कर दें। यदि कहीं अन्तराल रह जाए तो रोपाई के 10 दिन बाद इस अन्तराल को नर्सरी से भर दें। सामान्यतः रोपित सेटलिंग्स की मृत्यु दर 5–10% तक होती है। अन्तःकर्षण क्रियाएँ तथा उर्वरकों का अनुप्रयोग वैसा ही किया जाता है जैसा कि क्षेत्र विशेष में परंपरागत रूप से संस्तुत किया गया हो। क्षेत्र के लिए संस्तुत समेकित पादप सुरक्षा उपायों को अपनाया जाना चाहिए। समय से मिट्टी चढ़ाई जाय ताकि फसल

सारणी 1: बुआई की विभिन्न विधियों में उपयोग किए जाने वाले भिन्न–भिन्न प्रकार की बीज सामाग्री के अनुसार बीज की आवश्यकता

बीजीय सामाग्री	बुआई की विधि	बीज की आवश्यकता (ट./है.)	पंक्ति अन्तराल (सेमी.)	बीज दर (हजार/है.)
तीन बड युक्त सेट्स	समतल बुआई	6.0	90	38–40
		7.2	75	46–48
		9.0	60	58–60
	नाली में जुड़वां पंक्ति में बुआई	9.0	90:30	59–60
	छ्ल्लाकर गड्ढे में बुआई	15–18	75/90(परिधि) तथा 30 सेमी. गहराई	तीन कलिकायुक्त 22 सेट्स/ गड्ढा 75 सेमी. पर 9,000 गड्ढे/है.
	फर्ब विधि से बुआई	8.0	80 सेमी.	44
सेटलिंग्स	एसटीपी	2.0	90x60 सेमी	सेटलिंग्स– 19
			75x60 सेमी.	सेटलिंग्स–22
	पॉलीबैग	1.5–2.0	90x45 सेमी	25–30
	बडचिप	1.0	90x30 सेमी.	सेटलिंग्स–30
			75X30 सेमी.	40–सेटलिंग्स

की बंधाई की लागत को बचाया जा सके।

तकनीक से लाभ

इस विधि में गन्ने के बीज की 4 टन/है. दर से बचत होती है। पिराई योग्य गन्नों की अपेक्षाकृत अधिक संख्या (>1.2 लाख/है.) अनुरक्षित रहती है। गन्नों का औसत वजन अधिक होता है। गन्ने की फसल में कीट व रोग कम लगते हैं और यह गिरती भी कम है। गन्ने के उत्पादन में सुधार होने कारण बीज गन्ने से मिलने वाले गन्नो का अनुपात 1:10 से 1:40 हो जाता है अन्य विधिओं से उगाई गई फसल की अपेक्षा पूर्ववर्ती एस टी पी से उगाई गई मुख्य फसल की पेढ़ी से भी अधिक उपज प्राप्त होती है। इस विधि से मौद्रिक लाभ लगभग रु 16,200 प्रति हे. होता है।

सिंगल बड सेट्स की बुआई

सिंगल बड सेट्टलिंग्स

एसटीपी विधि से प्राप्त रोबस्ट क्लम्प

चित्र–1: अन्तरालित रोपण तकनीक

पॉलीबैग तकनीक

इस विधि में सेटलिंग्स को पॉलीबैग में उगाया जाता है और पॉलीथीन को हटाकर सेटलिंग्स को मिट्टी में इस तरह से रोप दिया जाता है कि मूलतन्त्र में कोई गड़बड़ी न हो जो कि सेटलिंग्स को शीघ्र प्रस्थापित होने में मदद करती है। इस पहल से गन्नों के पौधों में अगेती ओज, तनों की संख्या व वजन में बढ़ोत्तरी के परिणाम स्वरूप अंततः उपज में वृद्धि होती है। जलमग्न क्षेत्रों में धान की कटाई के बाद गीली मिट्टी और गेहूं की कटाई के बाद देर से बुआई किए जाने की दशा में पॉलीबैग सेटलिंग्स का उपयोग किया जा सकता है।

पॉलीबैग तकनीक के लाभ

गन्ने की बेहतर फसल उगाने और अच्छी उपज हेतु प्रारम्भिक प्ररोह संख्या के निर्धारण, बेहतर टिलरिंग और पिराई योग्य गन्नों की अधिक संख्या के लिए सिंगल बड सेट्लिंग्स की रोपाई की जाती है। पेडी फसल में रिक्त स्थानों की प्रतिपूर्ति के लिए भी इन सेट्लिंग्स का उपयोग किया जा सकता है। इस विधि से मौद्रिक लाभ ~रु 14,000 प्रति हे. होता है।

पॉली बैग तकनीक

बडचिप तकनीक

बड चिप विधि में हस्तचालित बडस्कूपर यंत्र की सहायता से बडचिप को स्कूप्ड (काट) कर लेते हैं तथा इसकी पौध प्लास्टिक कप, ट्रे, या प्रक्षेत्र दशाओं में तैयार के जाती है। तथा बाद में उन्हे पुनरोपन किया जाता है।

एक हेक्टेयर क्षेत्रफल हेतु बडचिप सेट्लिंग्स को उगाने के लिये ~1.0 टन गन्ने की आवश्यकता होती है और इसको उगाने के लिए 10 वर्ग मीटर क्षेत्रफल भूमि पर्याप्त होती है। बुआई से पूर्व बड चिप्स को पौध वृद्धि नियामक (एथेफोन 100 पी पी एम) घोल में 2 घंटों तक भीगो कर रखें। इसके बाद फफूंदीनाशक (0.2% बाइविस्टीन) मिश्रण से 20 मिनट तक उपचारित करें। एक समान अनुपात वाले मिट्टी, कार्बनिक खाद और बालू के मिश्रण से परिपूर्ण तथा जल निकास हेतु तली में छिद्रयुक्त प्लास्टिक के कपों या ट्रे में पहले से उपचारित इन कालिका चिप्स को ऊर्ध्व स्थिति में लगा देना चाहिए। वर्तमान में बड चिप्स पौध को मिनी प्लॉट में लगाने से ज्यादा लाभकारी पाया गया। नियमित सिंचाई के साथ अंकुरण के बाद तीसरे सप्ताह में पोषक तत्वों एवं पी जी आर का हजारे से छिड़काव करें। रोपाई के लिए खेत की तैयारी परंपरागत तरीके से तैयार किए गए खेतों के समान ही होती है। खरपतवार से मुक्त खेत में दीमक से बचाव हेतु 5 लीटर/है. दर से क्लोरपाइरीफॉस नमक कीटनाशी का कूँड़ों में प्रयोग करें। कूँड़ों को रोपाई के दिन ही खुलवाना चाहिए तथा रोपाई से पूर्व इनमें सिंचाई कर लें। उचित आयु (लगभग 25–30 दिन) की स्वस्थ सेटलिंग्स की रोपाई से फसल की अच्छी वृद्धि तथा बेहतर टिलरिंग के कारण इसकी अच्छी उपज सुनिश्चित होती है। रोपाई वाले कूँड़ खरपतवार मुक्त एवं सिंचित होने चाहिए। सेटलिंग्स के अच्छी तरह से लग जाने के बाद गन्ने की फसल जैसी परंपरागत सामान्य कर्षण विधियाँ अपनायीं जा सकती हैं। गन्ने की फसल में अच्छे ओज और बेहतर टिलरिंग को सुनिश्चित करने के लिए शरदकालीन रोपाई हेतु अक्टूबर का सप्ताह तथा बसंतकालीन रोपाई हेतु फरवरी का अंतिम या मार्च का प्रथम सप्ताह सबसे उपयुक्त समय होता है। बेहतर टिलरिंग तथा एक समान गन्नों की संख्या वाली फसल प्राप्त करने के लिए शरदकालीन रोपाई हेतु 90x30 सेंटीमीटर तथा बसंतकालीन रोपाई हेतु 75x30 सेंटीमीटर का कूँड़ से कूँड़ एवं पौधे से पौधे का अन्तराल रखते हैं। गन्ने की परम्परागत फसल के समान फास्फोरस एवं पोटाश की सम्पूर्ण मात्रा 80–80 किग्रा./हे. की दर से क्रमशः P_2O_5 एवं K_2O के रूप में तथा नत्रजन की 1/3 मात्रा (50 किग्रा./है.) का अनुप्रयोग रोपाई के समय करें। नत्रजन की शेष 2/3 मात्रा को N के रूप में दो किश्तों में मिट्टी चढ़ने से पूर्व मई एवं जून के माह में खड़ी फसल में डालना चाहिए। गन्ने में प्रारम्भिक ओज तथा टिलरिंग की पहल हेतु सेटलिंग्स और पंक्तियों के बीच खरपतवारों के प्रबंधन के लिए परंपरागत विधि से श्रमिकों द्वारा गुड़ाई के साथ–साथ यांत्रिक तरीके से खरपतवार नियंत्रण कार्यक्रम को प्रभावी ढंग से लागू करना चाहिए। उपोष्ण भारत में खेत में सिंचित कूँड़ों में सेटलिंग्स की रोपाई की जाती है। इस विधि में गन्ने की सेटलिंग्स की प्रारम्भिक प्रस्थापना और मानसून में टिलरिंग पूर्व सिंचाई की क्रांतिक अवस्था होती है। अतरू जूस की अच्छी गुणवत्ता के साथ अच्छी टिलरिंग एवं उपज हेतु मानसून से पूर्व 5 सिंचाइयों की आवश्यकता होती है। फसल की कटाई परिपक्वता की किस अवस्था पर और कब की जाय, यह एक महत्वपूर्ण कारक होता है जिससे गन्ने की गुणवत्ता और उपज प्रभावित होती है। कलिकाचिप्स से उगाई गई शरदकालीन फसल की कटाई नवंबर तथा बसंतकालीन फसल की फरवरी में करना चाहिए। कटाई में देरी करने से फसल अधिक परिपक्व हो जाती है और चीनी परता में कमी आ जाती है।

बडचिप विधि के लाभ

गन्ना उत्पादन में लागत को कम करने में कालिकचिप्स आर्थिक दृष्टि से सक्षम एवं वैकल्पिक तकनीक है। परंपरागत

प्रणाली में 30–35% तक अंकुरण की तुलना में बडचिप कलिकाओं का अंकुरण अधिक (90%) होता है। कालिकचिप्स का उपयोग करके वजन के हिसाब से लगभग 80 प्रतिशत बीज सामाग्री को बचाया जा सकता है क्योंकि इस विधि में लगभग 1.0 टन प्रति हेक्टेयर से भी कम बीज लगता है जबकि गन्ने की खेती की परम्परागत प्रणाली में 6–8 टन/हे. बीज की आवश्यकता होती है। परम्परागत बीज गुणन के अनुपात (1:10) की अपेक्षा इस विधि में उच्च बीज गुणन अनुपात (1:60) पाया जाता है। अतरू नवीनतम विमोचित प्रजातियों के बीज बहुगुणन में यह तकनीक सबसे अधिक उपयुक्त है। गन्ना बीज का शोधन बहुत कम लागत में एवम प्रभावकारी होता है। पारंपरिक विधि की तुलना (67 टन/हे. गन्ना उपज) में इस विधि में उच्च टिलरिंग, गन्ने का अधिक वजन तथा लंबाई के कारण गन्ना उपज अधिक (100टन/हे.) प्राप्त की जा सकती है। बचे हुए शेष गन्ने को जूस/चीनी या गुड बनाने में उपयोग किया जा सकता है। इससे मौद्रिक लाभ ~ रु 12960 हे$^{-1}$ होता है।

सारांश

नर्सरी प्रबन्धन हेतु विकसित उत्पादन तकनीक, सेटलिंग्स रोपण विधि एवं समय, पौधों से पौधों में अन्तराल, खरपतवार नियंत्रण, पोषक तत्वों की आवश्यकता, सिंचाई की समय सारणी तथा गन्ने की सही समय पर कटाई के अनुप्रयोग के साथ अन्तरालित रोपण (एस टी पी), पॉलीबैग एवं बड चिप विधि से किसानों के खेत पर गन्ने की अच्छी (>100 टन/हे.) उपज प्राप्त हो सकती है और परंपरागत विधि (3 बडसेट्स) में बीज गुणन का अनुपात लगभग 1:10 है जबकी सिंगल बड गन्ना बीज से बीज गुणन अनुपात बहुत अधिक होता है यह बीज गुणन एस टी पी से 1:40, पॉली बैग से 1:50 तथा बड चिप विधि से 1:60 से होता है। बीज बचत एवम अधिक गन्ना उत्पादन से, किसानो की आय निश्चित रूप से बढ़ाई जा सकती है।

बडचिप्स और बचे हुए गन्ने

मिनी प्लॉट में उगाई गई बड चिप सेटलिंग्स

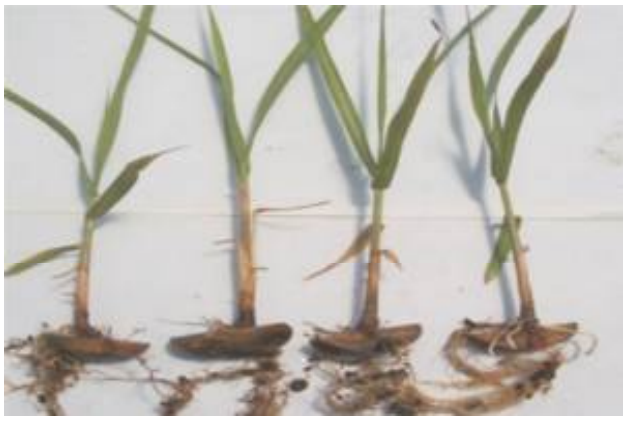

प्रचुर जड़ों के साथ सेटलिंग्स

बडचिप सेटलिंग्स से उगाई गन्ना फसल

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

परखनली से गन्ना बीज उत्पादन

संगीता श्रीवास्तव, राघवेन्द्र कुमार एवं देवेन्द्र राम मालवीय

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

गन्ना (सेकेरम ऑफिसिनेरम) घास कुल पोएसी का महत्वपूर्ण नकदी फसल है जिसे विश्व भर में उष्णकटिबंधीय तथा उपोष्णकटिबंधीय प्रक्षेत्र में शर्करा तथा इथेनॉल उत्पादन के लिए उगाया जाता है। जैविक विविधता के फलस्वरूप इसे दो प्रमुख विधियों, लैंगिक (फूल से प्राप्त बीज जो सामान्यतः प्रजनन कार्य में) तथा अलैंगिक (कलिकायुक्त तने के टुकड़े जिन्हें 'सेट्स' कहा जाता है) विधि से उगाया जाता है। खेती–किसानी में जुड़े लोग गन्ना की सम्मुनत प्रजातियों का उत्पादन सेट्स के माध्यम से करते हैं। हमारे देश में गन्ना की फसल 10 माह से लेकर 13 माह में परिपक्व हो जाती है, तो वि व के कई देशों में विशेष रूप से हवाई (अमेरिका) में 24 माह के बाद कटाई करते हैं। व्यावसायिक खेती के लिए बड़े पैमाने पर बीज की आवश्यकता पड़ती है, जो इस फसल के उत्थान में सबसे बड़ी बाधा है। कृषि वैज्ञानिकों ने शस्य वैज्ञानिक परीक्षण के माध्यम से यह सुनिश्चित किया है कि गन्ने के रोपण के लिए प्रति हेक्टेयर लगभग 75000 दो गाँठ युक्त सेट्स की आवश्यकता होती है। रोपाई के उपरान्त देखा गया है कि अंकुरण मात्र 20 से 35 प्रतिशत हो पाता है, जिसके फलस्वरूप पैदावार में कमी आती है। दूसरी तरफ निम्न अंकुरण दर तथा कम पादप–स्थापन होने के कारण खाली पड़े भू–भाग का सम्यक उपयोग नहीं हो पाता है। ऐसा भी देखा गया है कि बीज के रूप में उपयोग में लाए जा रहे गन्ने के सेट्स में कई प्रकार के गम्भीर पादप रोग (लाल सड़न) तथा नाशी कीट (बेधक कीट) इत्यादि तथा, जैविक एवं अजैविक कारकों (जैसे सूखा, जल प्लावता, लवणीय मृदा इत्यादि) के कारण फसल की व्यापक आर्थिक क्षति होती है। इन जटिल जैविक तथा अजैविक कारक के निदान हेतु कृषि वैज्ञानिक गन्ना के परम्परागत खेती में सुधार करने के उद्देश्य से जैव प्रौद्योगिकी का समावेश करने का सुझाव देते हैं। इसके अन्तर्गत पादप ऊतक संवर्धन तकनीकी से सम्मुन्नत प्रजातियों के स्वस्थ गन्ना का बीज उत्पादन प्रयोगशाला में परख नली के अन्दर करके तदोपरान्त पॉलीथीन के थैलों (पॉलीबैग) में स्थानान्तरित करके, किसानों को खेत में उगाने के लिए उपलब्ध कराया जाता है।

इस तकनीक के मदद से पुरानी तथा लुप्तप्राय गन्ना प्रजातियों को पुनरूत्पादित और पुनःनया करने में कारगर सफलता प्राप्त होती है। प्रजनन संबंधी गहन शोध कार्य के लिए अनमोल जीवद्रव्य/क्लोन को कम समय में उगाने तथा संरक्षण के लिए भी इस तकनीक का व्यापक महत्व है।

ऊतक संवर्धन तकनीक के बारे में सबसे पहले सन् 1902 ई. में आस्ट्रियन बॉटेनिस्ट, गोट्टलिएब हेबरलेन्ड्ट ने पत्तियों के ऊतक को कृत्रिम माध्यम में उगाने में कामयाबी हासिल की थी। भारत में पहली बार गन्ना में ऊतक संवर्धन तकनीकी की शुरूआत 20वीं शताब्दी के अंत में भाकृअनुप–गन्ना प्रजनन संस्थान, कोयम्बटूर में तथा भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ में की गई। इस तकनीकी से आगे चलकर कृषकों को भरपूर लाभ पहुँचने की सम्भावना है। इस विधि का महत्व नाभिकीय बी उत्पादन में अत्यधिक है क्योंकि परखनली में उगाये पौधों को सीधे फसल उत्पादन के लिए प्रयोग में लाने की संभावना कम होने के कारण इसे एकबार खेत में लगाकर प्रजनक बीज बनाने के बाद ही फसल उत्पादन हेतु प्रयोग में लाना चाहिए।

माइक्रोप्रोपगेशन ऊतक संवर्धन तकनीकी के मायने क्या?

माइक्रोप्रोपगेशन (सूक्ष्मप्रसारण) ऊतक संवर्धन तकनीकी की महत्वपूर्ण तकनीक है, में सर्वप्रथम स्टॉक यानी मातृ पौधों को अत्याधुनिक पौधशाला (ग्रीन हाउस) में सामान्य परम्परागत तरीके से गन्ने के सेट्स के माध्यम से उगाया जाता है। इस प्रक्रिया में पौधों के रोपाई से लेकर कटाई तक समस्त शस्य क्रियाएँ उच्च मानक के अनुरूप अपनाई जाती है। पादप रोग, नाशी कीट उर्वरक, सिंचाई इत्यादि आवश्यक प्रक्षेत्र क्रियाओं को विधिवत नियंत्रण में रखा जाता है। फफूँदीनाशक, जीवाणुनाशक तथा कीटनाशक रासायनिक दवाओं के उपचार का विशेष ध्यान रखा जाता है ताकि गन्ने के स्वस्थ पौधों की प्राप्ति हो सके। प्रयोगशाला में इस तकनीक से पादप संवर्धन के लिए विभिन्न प्रकार के प्रोटोकॉल का अध्ययन करने के उपरान्त ही शोध कार्य परियोजना को अंजाम दिया जाता है।

गन्ने के सभी महत्वपूर्ण वानस्पतिक भाग जैसे शीर्ष प्ररोह, शिखर विभजक (एपिकल मेरिस्टेम), कक्षा कलिका (एक्जिलरी बड), जड़ का सिरा (रूट टिप), पत्तियाँ, फूल, बीजांड (ओव्यूल), बीजपत्र (कोटीलेडन), इत्यादि के कोमल ऊतक को संवर्धन कार्य हेतु उपयोग में लाया जाता है, और इन्हें वैज्ञानिक भाब्दावली में 'एक्सप्लांट' कहते हैं।

गन्ना में सामान्यतः एक्सप्लांट के रूप में शिखर विभजक का ऊतक संवर्धन व्यापक रूप से होता है, क्योंकि इनसे तैयार गन्ने के नन्हें नवसृजित पौधे जिन्हें 'प्लांटलेट' कहते है, से इनके मूल स्वरूप में किसी प्रकार की जैविक विकृति नहीं देखी जाती है। एक्सप्लांट के नन्हें–नन्हें कोमल ऊतक के टुकड़े प्रायः 0.07 से 2 मिलीमीटर के आकार के होते है ताकि इनमें विषाणु का संक्रमण को नियंत्रित किया जा सके। इसके लिए विभिन्न प्रकार के सूक्ष्मजीवीनाशक दवाएँ जैसे कैल्शियम हाईपोक्लोराईट, हाईड्रोजन पेरॉक्साइड, मरक्यूरिक क्लोराईड, इथेनॉल इत्यादि को विभिन्न सांद्रता ग्रेड में उपचार हेतु उपयोग में लाया जाता है।

तत्पश्चात् उपचारित एक्सप्लांट को परखनली में खास प्रकार के कृत्रिम भोजन जो पौधों के त्वरित विकास के लिए अत्यन्त लाभकारी होता है, में स्थानान्तरित किया जाता है। ऐसे कृत्रिम भोजन को एमएस (मुरशिगे और स्कूज) मीडिया जो खास प्रकार के एग्रोज तथा संवृद्धि हार्मोन्स रसायन इत्यादि के संयोग से प्रयोगशाला में विशेष संक्रमणमुक्त वातावरण में तैयार किए जाते हैं, में स्थानान्तरित कर दिया जाता है। ऊतकों की कोशिकाओं में वृद्धि प्रक्रिया तीव्र गति से शुरू होने लगती है, जिसे बाद में काँच की पारदर्शी बोतल में स्थानान्तरित किया जाता है। नन्हें कोमल पौधों की अवस्था के अनुसार इनके भोज्य पदार्थ के स्वरूप में विशेष बदलाव भी किया जाता है।

कालान्तर में विकास की अवस्थाओं को आत्मसात करते हुए कोमल नन्हें पौधों (प्लांटलेट्स) को प्रयोगशाला के नियंत्रित वातावरण से अलग करके पॉलीबैग में विशेष रूप उपचारित मिट्टी में स्थानान्तरित कर दिया जाता है। कुछ दिनों के बाद पॉलीबैग में तैयार ऐसे पौधे खेतों में रोपाई के लिए उपयुक्त होते हैं।

संक्षेप में कहा जाए तो इस तकनीकी की सफलता में तीन प्रमुख कारक महत्वपूर्ण होते हैं। पहला कृत्रिम भोज्य पदार्थ में पादप पोषक तत्वों (नत्रजन, फॉस्फोरस पोटाश तथा अन्य सूक्ष्म तत्व) की प्रचुरता, दूसरा प्रकाश संश्लेषण हेतु प्रयोगशाला में नियत अवधि के लिए कृत्रिम रोशनी की व्यवस्था तथा तीसरा कारक भोज्य पदार्थ में मानक के अनुरूप पादप वृद्धि नियंत्रणकारी हार्मोन्स (ऑक्सिन, जिबरेलीन, साइटोकाईनिन इत्यादि) का समावेश अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इसके अलावा जैसा कि पहले भी बतलाया गया है ऊतक संवर्धन प्रयोगशाला स्थापित करने के लिए सबसे अनिवार्य शर्त है संक्रमण मुक्त वातावरण का होना। इसके लिए एक आदर्श प्रयोगशाला में अत्याधुनिक ऑटोक्लेव, लेमिनार फ्लोरेसेन्ट, इन्क्यूवेटर, माइक्रोवेव ओवन, डीप फ्रीजर, कम्प्यूटर इत्यादि जरूरी उपकरण को रखना जरूरी है। साथ ही, दक्ष तथा कौशलधारी मानव संसाधनों के प्रतिबद्ध टीम भी बहुत जरूरी है जो प्रयोगशाला सम्बन्धित तमाम गतिविधियों पर सकारात्मक सोच रखते हों तो दूसरी तरफ उत्पादित गन्ना प्लांटलेट्स के विपणन तथा आर्थिक संजाल पर पैनी नजर रखते हों ताकि उत्पादित बीज सामग्री को बाजार में उचित समय में लाभकारी कीमत प्राप्त हो जाए।

भविष्य की संभावनाएँ

ऊतक संवर्धन तकनीकी विशेष कर माइक्रोप्रोपगेशन, कृषि जगत में क्रान्तिकारी परिवर्तन लेकर आई है। एक वैज्ञानिक अध्ययन से साबित हुआ है कि गन्ने के एक छोटे, कोमल तथा शीर्ष प्ररोह के मदद से लगभग 18520 पौधों (प्लान्टलेट) का नव सृजन किया जा सकता है, जबकि उतनी ही संख्या में पौधों को उगाने में लगभग 3.0 टन गन्ना बीज (सेट्स के रूप में) की आवश्यकता होती है। इस तकनीकी से गन्ने के बीज समाग्री की बचत होती है, तो साथ ही खाली पड़े प्रक्षेत्र के भू–भाग के सम्यक उपयोग हेतु नियत स्थान पर रोपाई (स्पेस ट्रांसप्लांटिंग) तथा सहफसली जैसे कृषि उपाय को अपनाया जाता है।

इस तकनीकी के समेकित प्रबंधन से किसानों को भरपूर लाभ मिलने की संभावना है। नियत संसाधन में इस प्रकार के विशिष्ट तकनीकी तथा कुशल प्रक्षेत्र प्रबंधन के इस्तेमाल से समुन्नत एवं स्वस्थ बीज की उपलब्धता होती है। इन दिनों विश्व के अनेक देश ऊतक संवर्धन तकनीकी के महत्व को आत्मसात कर रहें हैं जिसके फलस्वरूप गन्ने की खेती के परम्परागत तरीकों में बदलाव आ रहा है। गिरते भूजल स्तर, ग्लोबल वार्मिंग के खतरों तथा मानव संसाधनों में कमी अनेक कारक इन दिनों कृषि कार्य को आर्थिक रूप से प्रभावित करते हैं।

विभिन्न शोध पत्रिका में छपे रिपोर्ट के अनुसार गन्ने के एकल शीर्ष प्ररोह से क्रमशः 10000 समतुल्य प्लांटलेट लगभग 4 से 5 माह तथा 75600 प्लांटलेट लगभग 8 माह अवधि में उगाने में कामयाबी हासिल हुई है। इस तरह के आशाजनक वैज्ञानिक दावों का कृषि जगत में बड़ा महत्व है और इनके आर्थिक महत्व को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। साथ ही इस तकनीकी की मदद से किसानों की आमदनी को दो गुना करने में निःसंदेह सफलता मिलेगी।

ऊतक संवर्धन से गन्ने का बीजोत्पादन

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

नीलगाय का महत्व तथा इनसे फसल की सुरक्षा के उपाय

यीतेश कुमार[1], अभिषेक कुमार सिंह[2], पंकज भार्गव[1], वाय. के. यदु[1], अनुप्रिया चंद्राकर[3], ए. के. साह[2] एवं अश्विनी दत्त पाठक[1]

[1]इन्दिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय, रायपुर
[2]भाकृअनुप– भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ
[3]जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

परिचय

नीलगाय (*बोसिलेफस ट्रैगोकेमिलस*) एक सामान्य वृहद स्तनपायी मृग है, जो कि कम घने, खुले–खुले झाड़ी युक्त वनस्पतियों के मध्य तथा वन्य जीव अभ्यारण्य के चारों ओर रहना पसंद करते हैं व घनें जंगलों से दूर रहते हैं। नीलगाय लम्बें पैरों वाला महाकाय द्विखुरीय बेढंगा सा दिखने वाला एक स्तनपायी हैं। इस जीव का नाम इनके नर के रंग पर आधारित है, क्योंकि इसके वयस्क नर के शरीर पर लौह धुसर रंग का तह होता हैं।

नीलगाय (*बोसिलेफस ट्रैगोकेमिलस*)

नीलगाय का झुंड (नर, मादा और शिशु)

यह भारत वर्ष का सबसे बड़ा मृग होने के साथ ही साथ एक बीहड़ जानवर हैं, जो कि सुखे तथा जल की कमी वाले क्षेत्रों में भी सफलता पूर्वक जीवित रह सकते हैं। वर्तमान समय में इस जीव का प्राकृतिक आवास बहुत ही दयनीय स्थिति में है, क्योंकि जैव हस्तक्षेप से इनके विस्तार–सीमाओं में बहुत तेजी से कमी आयी हैं। **वर्तमान में आई० यू० सी० एन० ने नीलगाय को अपनी लाल किताब (रेड डाटा बूक) में विलुप्तप्राय प्रजातियों मे शामिल किया हैं, जो पृथ्वी वासियों के लिए एक चिंता का विषय हैं।** इस संस्था के अनुसार यह जीव नेपाल व बांग्लादेश से विलुप्त हों चुकी हैं तथा पाकिस्तान में इन जीवो की गिनती दुर्लभ प्रजातियों में की जाने लगी हैं। अगर ऐसा ही चलता रहा तो पृथ्वी का यह अनोखा जीव बहुत ही जल्द विलुप्त हो जायेगा और हम अपनी पारिस्थितिक तंत्र की एक कड़ी खो देंगे, जो हमारे पर्यावरण के लिए बहुत ही घातक सिद्ध हो सकता हैं। इसका मुख्य कारण कृषि जोत में लगातार वृद्धि और जंगलों का घटता क्षेत्रफल तथा विदेशी जंगली प्रजातियों की दखल–अन्दाजी है, फिर भी हमारी मानव जाति इन भोले जीवों पर यह आरोप लगा रही है कि यह खेतों और बागों का विनास कर रहे हैं। यह एक ऐसी जंग है, जो मानव तथा इन जंगली व प्राकृतिक जीवों के मध्य युगों से चली आ रही है तथा जिसमें हमने अपने बाहुबल का अनुचित प्रयोग कर इनके आवास को नष्ट कर अपने स्वार्थ पूर्ति हेतु स्वयं के उपयोग में लाये हैं। अतएव ये बेचारे जीव जायें तो जायें कहां, आखिर इन्हें भी भोजन व आवास की जरूरत है, इसलिए अब इन जीवों की दखलअंदाजी हमारे कृषि क्षेत्रों व बागों में बढ़ती जा रही है। हम सभी जानते है कि ये जंगली जीव कृषि के लिए पूरे देश भर में यत्र–तत्र फैले, एक गंभीर पीड़क हैं।

अतः हमें कृषि फसल तथा किसानों के हित के साथ–साथ इन जीवों की सुरक्षा का भी ध्यान रखते हुए इनके उचित प्रबंधन पर ध्यान केंद्रित करने की आवश्यकता हैं।

नीलगाय का वितरण

नीलगाय का विस्तार मानचित्र

नीलगाय का स्थानीय घर/उत्पत्ति केन्द्र हमारा भारत है। इस जीव का विस्तार हमारे देश के उत्तर में हिमालय के तराई भाग से लेकर दक्षिण में कर्नाटक प्रान्त तक है, जिसमें यह मुख्यतः हरियाणा, राजस्थान, गुजरात, मध्यप्रदेश और उत्तर प्रदेश में भारी संख्या में पाये जाते है। देश के पूर्वी क्षेत्र, उत्तर– पूर्वी क्षेत्र तथा पश्चिमी क्षेत्र व सीलन में यह जीव नही पाये जाते।

रंग रूप व शारीरिक संरचना

मादा– सामान्यतः मादा नारंगी रंग के होते हैं।

नर– वयस्क नर गहरे नीले भूरे रंग की तह लिए हुए होते हैं तथा केवल नर में ही सींग पाये जाते हैं।

नीलगाय को इस तरह पहचान सकते है कि इसका पीठ ढलाउ होता है तथा नाक गहरा व गले पर सफेद धब्बा होता है। गले व कन्धें के पास थोड़े लम्बे बाल होते है तथा चेहरे, कान, गाल व होठों पर दो धब्बे होते हैं।

आर्थिक क्षति स्तर / क्षति सीमा

यह जीव शाकाहारी जीवन के लिये सर्वाधिक अनुकूलित हैं। हाल ही में राजस्थान, हरियाणा और पंजाब में नीलगाय द्वारा कृषि फसलों को क्षति पहुंचाना एक मुख्य समस्या बन गया हैं। नीलगाय द्वारा फसलों की क्षति स्थिति केवल सर्वेक्षण तथा सांख्यिकीय आंकडों पर आधारित हैं। नीलगाय द्वारा फसल क्षति का प्रथम रिर्पोट 1994 में जगदीश चंद्रा, ग्रेट इडियन बस्टर्ड (जी.

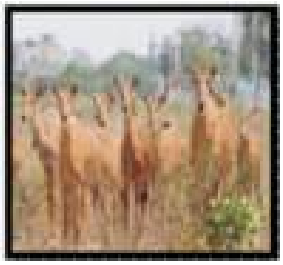

मादा नीलगाय तथा मादाओं का झुण्ड

नर नीलगाय तथा नरों का झुण्ड

नर व मादा नीलगाय एक साथ उपस्थित (काला रंग और सींग वाला– नर तथा पीला भूरा रंग का सींग रहित– मादा)

आई. बी.) अभ्यारण्य, करेंरा, मध्यप्रदेश द्वारा प्रकाशित किया गया। जिसमें इन्होने हरियाणा के विभिन्न जिलों में नीलगाय द्वारा क्षति का ब्योरा दिया। इनके अनुसार हरियाणा के खेती वाले जिलों जैसे – सिरसा, हिसार, भिवानी और महेन्द्रगढ़ में नीलगाय की लगभग 7000 की भारी आबादी पायी गयी। जो वहां मुख्यतः चना, गेंहू और मूंग को भारी क्षति पहुंचा रहें थे तथा कपास की फसल उन्हें छुपने के लिए सर्वोत्तम स्थिति प्रदान कर रही थी। जी. आई. बी., 1994 के अनुसार नीलगाय हरियाणा में 10–75 प्रतिशत फसल को चौपट कर जाते हैं। हरियाणा के कुछ स्थानों पर इस संस्था ने नीलगाय द्वारा 100 प्रतिशत फसल क्षति का रिर्पोट दिया हैं। इस संस्था ने औसतन 50–58 प्रतिशत फसल क्षति का रिर्पोट दर्ज किया हैं। कृषि विभाग और सहकारी फसल प्रभाग, कृषि मंत्रालय, भारत सरकार, 2009 के अनुसार नीलगाय द्वारा उत्तर–प्रदेश में 50–70 प्रतिशत तथा गुजरात में 10–20 प्रतिशत क्षति का आकलन किया गया।

देश के विभिन्न क्षेत्रों में नीलगाय मुख्य तौर पर रबी एवं खरीफ की फसलों जैसे – चना, गेंहू, मुंग, गन्ना, मोंठ, ग्वार, ज्वार, बाजरा, तिल, जीरा, धनिया और विभिन्न प्रकार की सब्जियां (मुख्यतः धनिया) तथा फलों में बेर, नीबू, पपीता, अमरूद और अनार इत्यादि को भारी मात्रा में क्षति पहुंचाता हैं।

नीलगाय के झुण्ड द्वारा फसल का भक्षण व रौंद कर क्षति पहुँचाना

एक वयस्क नीलगाय लगभग 13–15 किलोग्राम प्रतिदिन की दर से पौधे के शाकीय भागों का भक्षण कर जाती हैं। ये लगभग 1000 या इससे भी अधिक की संख्या के समूह में खेत में प्रवेश कर फसल को भारी क्षति पहुंचाते हैं।

क्षति की प्रकृति

नीलगाय हर तरह की वनस्पतियों को अपना आहार तो बनाते हैं, साथ ही साथ सभी प्रकार की फसलों को भी अपना निशाना बनाते हैं। परंतु अधिकांश नुकसान धान, गेंहू, सरसो, उड़द, मूंग, मसुर, गन्ना एवं अरहर इत्यादि फसलों को पहुंचाते हैं। चूंकि ये स्वभाव से रात्रिचर हैं, अतः इनका फसलों पर आक्रमण शुरुआती अवस्था में शाम या तड़के सुबह के समय होता हैं। कभी–कभी ये दिन में भी फसलों को नुकसान पहुंचाते दिखाई देते हैं। इन जीवों के साथ सबसे बड़ी समस्या यह है, की फसल चट करने के साथ– साथ फसलों को रौंद कर भी भारी नुकसान पहुंचाते हैं। ये फसल को किसी भी अवस्था में पूर्ण–रुपेण बर्बाद करने की क्षमता रखते हैं। इन जीवों का एक खास स्वभाव यह है की ये एक ही स्थान पर मल का त्याग करते हैं।

नीलगाय का प्रबंधन

विडीयो या स्वर वाद्य केसेट की चमकीली रील का उपयोग

केसेट रील (बाड़ लगाने हेतु)

सामान्यतः पाया गया हैं, कि नीलगाय चमकदार वस्तुएं जो प्रकाश का परावर्तन करती हैं, उनसे ये डरते है और दूर भागते हैं। इस हेतु विडीयो या वाद्य केसेट की रील को खेत के चारों ओर बांस की पतली डंण्डियों से बांध देते है जिससे ये हवा में लहराते हुए चमकीली दीप्ती उत्पन्न करते हैं, जो दिन व रात में इन जानवरों को खेतों से दूर रखतें हैं।

काकभगोड़ा

काकभगोड़ा या ओडाका का उपयोग

यह एक अत्यन्त सृजनात्मक तकनीक है, जो प्रायः देश के किसानों द्वारा सर्वाधिक उपयोग किया जाता हैं। जिसमें इंसानी पुतले सदृश्य आकृति का उपयोग किया जाता है। ऐसी मान्यता है कि पक्षी तथा जानवर, इन्सानों से भयभीत होकर दूर भागते है, क्योंकि प्रकृति ने इन्हें संकोची तथा डरपोक प्रवृत्ती प्रदान किया हैं। नीलगाय सामान्यतः सुनसान इलाकों वाले खेतों में जहां मानव की उपस्थिति न हो, अधिक नुकसान पहुंचाते हैं। अतः इंसानी पुतले काकभगोड़ा का निर्माण कर खेतों में स्थापित करने से इन स्तनपायी जीवों को खेतों से दूर रखा जा सकता हैं। इस हेतु 5 फुट लम्बा तथा 2 फुट चौड़ा लकड़ी की डंडियों को क्रिस–क्रास अर्थात धन की शैली (+) में बांध देते हैं, तत्पश्चात इस संरचना को धोती–कुर्ता तथा पगड़ी या औरत की आकृति में साड़ी से सज्जित कर देते हैं और खेत में जगह जगह स्थापित कर देते हैं। इस संरचना से नीलगाय डरकर खेतों से अपनी दूरी बनाये रखते हैं। यह अत्यंत सस्ती व स्थानीय निवासियों द्वारा सामान्यतः उपयोग की जाने वाली अत्यंत प्रभावी तकनीक हैं।

लेखक की सोच के अनुसार किसान भाई अगर चाहें तो इस प्रतिमा में ध्वनि उत्पन्न करने वाले यंत्र स्थापित कर सकते हैं, जो जीवों को भागने वाली अलग–अलग आवाज उत्पन्न करती हों और यह यंत्र सोलर बैटरी से संचालित हो तो अत्यंत उपयुक्त होगी। इस हेतु किसान को अलग–अलग आवाज की विभिन्न तीव्रता आवृत्ति को यंत्र में रिकार्ड कर बजाना होगा। ध्यान रहे कि एक ही तीव्रता व समान प्रकार की आवाज रिकार्डर से उत्पन्न नहीं होना चाहिए क्योंकि इस प्रकार के एक लय के आवाज में पशु–पक्षी संवेदना उत्पन्न करना बन्द कर देते हैं अर्थात वे संवेदन रहित हो जाते हैं तथा डरते नहीं। अतएव भिन्न–भिन्न समयान्तराल व भिन्न–भिन्न आवृति की अलग–अलग आवाजों को रिकार्डर में रिकार्ड कर बजाना चाहिए।

घंटी बजाना

वर्तमान समय में सरकार ने वन्यजीव की सुरक्षा हेतु कड़े कानून बनाये है, जिसके तहत इन जीवों को हानि पहुंचाने पर हमें कारावास भी हो सकता हैं। अतः हमें अत्यंत ही सुरक्षित उपायों की जरूरत हैं, जिसमें इन जीवों को हानि न पहुंचे।

धातु के बने ड्रम पीटना या टिन से निर्मित तेल के डिब्बो को खोखला कर उसमे पत्थर या धातु का पिंड लटकाकर उनको हिलाकर आवाज उत्पन्न करने की विधि है, जिसमे इन जीवों को खेत से दूर भगाया जाता हैं।

इस ध्वनि प्रतिकर्षण विधि में विभिन्न जगहों में स्थापित घंटियों के आवाज उत्पन्न करने वाले पिण्डक के छोर को रस्सियों से जोड़कर एक केंद्र मे गूँथ कर केवल एक डोर बना लेते हैं। अतः एक रस्सी के हिलाने से सभी घंटियां बज उठती हैं। रात्रि में सोते समय किसान इस रस्सी को अपने पैरों से बांध ले, जिससे कि जब किसान सोते हुए जब इधर–उधर हिलेंगे तो सभी घंटियां अपने आप बजने लगेंगे।

लेखक की राय है कि किसान चाहें तो किसी छोटे इंजीनियर से विद्युत चालित दोलन यंत्र का निर्माण कराकर उपयोग कर सकते हैं, जिसमें घुमने वाले मोटर को दोलन करने वाली ईकाई में रूपान्तरित कर इनका उपयोग घंटी बजाने हेतु कर सकते हैं। बाजार में वैसे आजकल ऐसे यंत्र इलेक्ट्रानिक दूकानों में उपलब्ध रहते हैं।

एक तरीका यह भी है कि लकड़ी की दों डण्डियों को जमीन में गाड़ दें और उसमें कपड़ा बांध दें तथा उसमें मंदिर में लगने वाली हल्की घंटियों को लटका दें, जिससे कि हवा में इन कपड़ो के हिलने से घंटी भी हिलेंगे और अपने आप बजेंगे। इसको मुख्यतः खेत की किनारों पर अर्थात मेड़ के पास स्थापित करें, जिसकी आवाज से नीलगाय का झुंड डरकर दूर भागेंगे।

सजीव बाड़ का स्थापन

इस विधि में कंटीले लताओं या पौधों को खेत के चारों ओर सघनता से रोपित कर देते हैं, जिससे यह स्वतः ही वृद्धि कर बाड़ पर सघन रूप से आच्छादित हो जाती है और एक मजबूत घेराव का निर्माण करती हैं। जिसकों इन जीवों के द्वारा पार कर पाना दुर्गम हो जाता है। तमिलनाडू, आंध्रप्रदेश, तेलंगाना तथा छत्तीसगढ के अबुझमाड क्षेत्रों में इस तरह के बाड़ का प्रयोग किया जाता हैं।

इस हेतु कैक्टस (प्रिकली पियर : अपुन्सिया प्रजाति), थोंर या पत्तों की सेंद (भारतीय स्पर्ज पेड़–युफोरबिया नेरीफोलिया), कुछ झाड़ी पौधे जैसे–विलायती बबूल, विलायती खेजा या विलायती किकर और वेंलवेट मसक्वाइट (प्रोसोपिस जुलीफ्लोरा) बाड़ के लिए अत्यंन्त ही उपयुक्त पौधे हैं।

कैक्टस के पौधे का बाड़

विलायती खेजा (प्रोसोपिस जुलीफ्लोरा) का बाड

थोंर या भारतीय स्पर्ज पेड़ का बाड़

इसी तरह अन्य पौधे जैसे– अगेव पौधा, अकेंसिया कोनसिन्ना, बम्बूसा अरूणडिनेंसिया, डेन्ड्रोकेलेमस स्ट्रीक्टस, रतनजोत (जट्रोफा कुरकास) इत्यादि का प्रयोग बाड़ के रूप में कर सकते हैं।

***अकेंसिया कोनसिन्ना* का बाड**

बाँस के पौधे की प्रजाति *बम्बूसा अरूणडिनेंसिया* का बाड

रतनजोत का बाड

जानवरों के मल का प्रयोग

काफी लम्बें समय से किसानों द्वारा अवलोकित किया गया है कि नीलगाय की किसी एक झुण्ड द्वारा उत्सर्जित मल, दूसरे झुण्ड के नीलगायों को प्रतिकर्शित अर्थात दूर करती हैं।

इसका व्यवहारिक कारण यह है कि जब किसी एक झुण्ड का नीलगाय मल का उत्सर्जन करता है, तो इस मल की गंध अन्य झुण्ड के नीलगायों को संदेश देता है कि यहां नीलगायों का एक झुण्ड पहले से उपस्थित है, इस संदेश उपरान्त उक्त नीलगायों का झुण्ड उस क्षेत्र को छोड़कर अन्य क्षेत्र में प्रवास कर जाता हैं। नीलगायों के इस व्यवहार का प्रयोग किसान इन्हें फसल से दूर भगाने में कर सकते हैं। इस हेतु नीलगाय के मल को खेतों से एकत्रित कर पानी के साथ घोलकर किसी पात्र में एकत्र कर लें व पूरे फसल प्रक्षेत्र में इसका छिड़काव कर दे, विशेषतः पूरे खेत के फसल की चारो ओर मेड़ों के किनारो में। इस छिडकाव से उत्पन्न अप्रिय गंध नीलगायों को उपचारित प्रक्षेत्र से दूर भागने में विवश कर देते हैं।

गधा का मल, गाय का मूत्र और सड़ी–गली सब्जियों के मिश्रण का भी उपयोग इन्हें भगाने हेतु कर सकते हैं, क्योंकि इससे बहुत ही गन्दी बदबू आती है, जो नीलगाय को पसंद नही आते।

पटाखों का उपयोग

यह एक अत्यन्त प्रभावी विधि हैं, जिसमे पटाखों के तेज आवाज व रात्रि में इनके चमकदार प्रकाश से ये जीव डरकर दूर भाग खड़े होते हैं। परन्तु यह एक खर्चीला एवं प्रदषण युक्त विधि हैं।

फोरेट जैसे अप्रिय तीव्र गंध वाले कीटनाशकों का उपयोग

फोरेट एक सामान्यतः उपयोग की जाने वाली ऐसी कीटनाशी है, जो बाजार में आसानी से दानेदार रूप में उपलब्ध हो जाती हैं। इस हेतु कुछ मिटटी के बने द्रोण/कटोरा/प्याला जैसे पात्र लें और उसमें फोरेट की थोड़ी–थोड़ी मात्रा रख दें और उक्त पात्र को खेत के विभिन्न स्थानों पर स्थापित कर दें। फोरेट से उत्पन्न होने वाली अप्रिय तेज गंध नीलगाय को 10–15 दिन के लिये फसल से दूर रखती हैं।

फिनायल की घोल का छिड़काव

नीलगाय को खेत से दूर रखने का यह एक प्रभावी तरीका है। इस विधि में फिनायल के घोल का छिड़काव खेत के चारों ओर या फसल के बीच–बीच में करने से इनके गन्ध से सामान्यतः 10 दिनों तक नीलगाय उक्त प्रक्षेत्र से अपनी दूरी बनाये रखते है अर्थात उक्त क्षेत्र में प्रवेश नहीं करते।

प्राकृतिक दुश्मन

जंगली कुत्तों का प्रभावित क्षेत्र में स्थापन तथा संवर्धन करें। क्योंकि जंगली कुत्ते इन जीवों के प्राकृतिक परभक्षी होते है, जो इनकी जनसंख्या को नियंत्रण में रखती हैं।

ग्रीनहाऊस शेड का बाड़ के रूप में प्रयोग

उन्नाव (उत्तरप्रदेश) के आस–पास के किसान ग्रीनहाउस संरचना में लगने वाले हरे रंग के चमकदार शेड का प्रयोग बाड़ लगाने में करते हैं, इनका मानना है कि इस शेड से परावर्तित चमकदार प्रकाश नीलगाय को दूर भगाती हैं।

गेंदा के पौधे मेड़ पर रोपना

गेंदा के पौधे रात मे कुछ शाल या कपड़े लपेटे मानव जैसे आकृति प्रतीत होते हैं और गेंदा के फुलों से नीलगाय भ्रमित हो जाते हैं, जिस वजह से वह खेतों से दूर ही रहते हैं। अतः खेत की मेड़ों पर उपयुक्त अन्तराल मे गेंदा का रोपण करें। गेंदा का रोपण दलहन एवं तिलहन में बहुत ही उपयोगी पाया गया हैं।

सड़े अंडे के घोल का छिड़काव

किसानों को सड़े अंडे के घोल का भी छिड़काव करना चाहिए। इसका प्रभाव फसल पर 8–10 दिनों तक बना रहता हैं। यह एक प्रतिकर्षक के रूप में कार्य करता है। प्रायः शाम या सुबह के वक्त ही सड़े अंडे के घोल का छिड़काव करना चाहिए, क्योंकि तेज धूप में छिड़काव से जर्दी से निकलने वाले रसायनों की हानि जल्दी हो जाती हैं।

नीलरतन का उपयोग

नीलगाय के नियंत्रण हेतु किसान "नीलरतन" नामक रसायन का प्रयोग कर सकते हैं। इसका छिड़काव खड़ी फसल में करने से इसका प्रभाव पत्तियों पर 10–12 दिनों तक बना रहता हैं। कम्पनी का दावा हैं कि जैसे ही नीलगाय, नीलरतन उपचारित पत्ती को खाता है तो दवा मे उपस्थित रसायन उसके मुँह का जायका खराब कर देता हैं। जिससे नीलगाय, नीलरतन उपचारित फसल को नुकसान नही पहुँचा पाता।

प्रशिक्षित कुत्तों का रखवाली मे प्रयोग

अत्यधिक नीलगाय प्रकोपित स्थानों में कुत्ते का पालन–पोषण करे व उनको नीलगाय को भगाने हेतु प्रशिक्षित करें। जिससे कि कुत्ते नीलगाय को भौंककर व दौड़ाकर प्रक्षेत्र से दूर खदेड़ सके।

विद्युत बाड़ का प्रयोग

विद्धुत बाड़ एक प्रभावी विधि हैं, जिससे हम नीलगाय को सफलता पूर्वक खेत से दूर रख सकते हैं। इस तरह के बाड़ बाजार में ए० सी० बिजली व डी० सी० बिजली (सौर ऊर्जा चालित) से चलने वाली आसानी से उपलब्ध हो जाते हैं।

सूती या टेरिकोट के कपड़े का बाड़ के रूप मे उपयोग

सीतापुर (उत्तर–प्रदेश) के किसान सूती या टेरिकोट के बने धोती या कपड़े को खेत के चारों ओर बाँस के डंडियों के सहारे जमीन से चिपके हुए लगा देते हैं। इस बाड़ को नीलगाय फांद नही पाते अर्थात इसके ऊपर से वो छलांग नही लगा पाते और जिससे हमारा फसल इनके प्रकोप से सुरक्षित रह जाता हैं। इस विधि के प्रयोग से सीतापुर के किसानो ने सफलतापूर्वक अपने फसल को नीलगाय के प्रकोप से बचाया है। जो आज कृषि

विज्ञान केंद्र, सीतापुर के पीड़क नियंत्रण कार्यक्रमों में सफलतम प्रयासों में से एक हैं।

सुगंधीय फसलों को मेड़ पर उगाना

कृषि विभाग और सहकारी फसल प्रभाग, कृषि मंत्रालय, भारत सरकार, 2009 के अनुसार, सुगंधीय फसलों जैसे– तुलसी (ओसिमम बासिलिकम), पुदीना (मेंथा पाइपेरिटा), जिरेनियम (पेलारगोनियम प्रजाति), अफीम (पपेवर सोमनीफेरम), लेमन ग्रास (सीम्बोपोगान साइट्रेटस), सिट्रोनेल्ला (सीम्बोपोगान विंटेरिएनस), पाम–रोसा (सीम्बोपोगान मारटीनी) इत्यादि को खेत के किनारे अर्थात मेड़ पर उगाना चाहिए। इन सुगंधीय पौधों के कारण नीलगाय मुख्य फसल को क्षति नही पहुँचाते हैं।

कामधेनु जैव–पीड़कनाशक का प्रयोग

कृषि विभाग और सहकारी फसल प्रभाग, कृषि मंत्रालय, भारत सरकार, 2009 के अनुसार, कामधेनु नामक जैव–पीड़कनाशक के प्रयोग से भी हम अपने फसल को नीलगाय के प्रकोप से बचा सकते हैं। इसे किसान घर पर ही विभिन्न वस्तुओं के उचित मिश्रण से बना सकते हैं, जो इस प्रकार हैं:–

- 20 लीटर गाय का मूत्र,
- 05 किलोग्राम नीम (एजाडिरेक्टा इंडिका),
- 05 किलोग्राम धतूरा (दतुरा स्ट्रेमोनियम),
- 500 ग्राम तंबाकू की पत्ती (निकोटियाना टबेकम),
- 250 ग्राम लहसुन की पत्ती (एलियम सटाइवम) और
- 1.5 किलोग्राम मिर्च (कैप्सिकम एनम)

उक्त मिश्रण को 40 दिनों के लिए अच्छे से डिब्बाबंद कर दे और उपयोग करे।

चमकीली झिल्ली की पट्टियों को खेत के चारों ओर मेड़ में तार की सहायता से लटकाना

बाजार में उपहार को बांधने या पैक करने वाली रंग–बिरंगी झिल्लियाँ सस्ते दामो में मिल जाती हैं। इन झिल्लियों को 10–15 सेंटीमीटर की चौड़ाई तथा 45–60 सेंटीमीटर कि लंबाई में तैयार कर ले और खेत के चारों ओर बम्बू या बाँस की डंडियो की सहायता से स्थापित तार की तीन क्षैतिज पंक्तियों में इन चमकीली झिल्ली की पट्टियों को एक निश्चित अंतराल की दूरियों पर (औसतन 0.5 मीटर की दूरी पर) जगह–जगह तार की ऊपर की पंक्ति से लेकर नीचे की पंक्तियों तक लपेट दें या इन लम्बी पट्टियों को जगह–जगह निश्चित अंतराल पर ऊपर व नीचे की तार की पंक्तियों में बांधने से उक्त प्रक्षेत्र में नीलगाय के प्रकोप में कमी आती हैं। भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ के वैज्ञानिकों ने अवलोकित किया हैं, कि इन चमकीली झिल्ली की पट्टियों के उपयोग से नीलगाय, उक्त प्रक्षेत्र या खेत में प्रवेश नही करते व उस स्थान से दूर रहते हैं।

पटाखों का उपयोग

शिकारी जंगली कुत्ते

गेंदा के पौधों का मेड़ पर उपयुक्त अन्तराल मे रोपाई

सड़े अंडे के घोल का प्रतिकर्षक के रूप में उपयोग

प्रशिक्षित कुत्तों का फसल की रखवाली में उपयोग

विद्युत बाड

सूती तथा टेरिकोट के कपड़े या धोती का बाड़ के रूप मे प्रयोग

चमकीली झिल्ली की पट्टियों को खेत के चारों ओर मेड़ में तार की सहायता से लटकाना

नीलगाय रोकने के कुछ प्रमुख उपायः

1. नीलगाय को खेतों की ओर आने से रोकने के लिए 4 लीटर मट्ठे में आधा किलो छिला हुआ लहसुन मिलाकर इसमें 500 ग्राम बालू डालें। इस घोल को पांच दिन बाद छिड़काव करें। इसकी गंध से करीब 20 दिन तक नीगाय खेतों में नहीं आएगी। इसे 15 लीटर पानी के साथ भी प्रयोग किया जा सकता है।
2. बीस लीटर गोमूत्र, 5 किलोग्राम नीम की पत्ती, 2 किग्रा धतूरा, 2 किग्रा मदार की जड़ फल–फूल, 500 ग्राम तंबाकू की पत्ती 250 ग्राम लहसुन,150 लालमिर्च पाउडर को एक डिब्बे में भरकर वायुरोधी बनाकर धुप में 40 दिन के लिए रख दें। इसके बाद एक लीटर दवा 80 लीटर पानी में धोलकर फसल पर छिड़काव करने से महीना भर तक नीलगाय फसलों को नुकासान नहीं पहुंचाती है। इससे फसल की कीटों से भी रक्षा होती है।
3. खेत के चारों ओर कंटीली तार, बांस की फंटियां या चमकीली बैंड से घेराबंदी करें।
4. खेत की मेड़ों के किनारे पेड़ जैसे करौंदा, जेट्रोफा,तुलसी खस, जिरेनियम, मेथा, एलेमन ग्रास, सिट्रोनेला, पामारोजा का रोपणा भी नीलगाय से सुरक्षा देंगे।
5. खेत में आदमी के आकार का पुतला बनाकर खड़ा करने से रात में नीलगाय देखकर डर जाती हैं।
6. नीलगाय के गोबर का घोल बनाकर मेड़ से एक मीटर अन्दर फसलों पर छिड़काव करने से अस्थाई रूप से फसलों की सुरक्षा
7. नीलगाय के गोबर का घोल बनाकर मेड़ से एक मीटर अन्दर फसलों पर छिड़काव करने अस्थाई रूप से फसलों की सुरक्षा की जा सकती है।
8. एक लीटर पानी में एक ढक्कन फिनाइल के घोल के छिड़काव से फसलों को बचाया जा सकता है।
9. गर्धों की लीद, पोल्ट्री का कचरा, गोमूत्र, सड़ी सब्जियों की पत्तियों को घोल बनाकर फसलों पर छिड़काव करने से नीलगाय खेतों के पास नहीं फटकती।
10. देशी जीवनाशी मिश्रण बनाकर फसलों पर छिड़काव करने से नीलगाय दूर भागती हैं।
11. कई जगह खेत में राम के वक्त मिट्टी के तेल की डिबरी जलाने से नीलगाय नहीं आती है।

मुख्य संदेश

लेखक द्वारा सभी को यह सलाह दी जाती हैं, कि नीलगाय के प्राकृतिक आवास की सुरक्षा करें, जिससे नीलगाय अपने प्राकृतिक आवास मे बने रहेंगे व वे कृषि क्षेत्र से दूर रहेंगे।

अगर नीलगाय का प्रकोप खेत में अत्यधिक बढ़ जाये तो उनको पकड़ कर खेतों से दूर उनको उनके प्राकृतिक आवासों में छोड़ दे, जिससे कि फसल तथा यह सुंदर स्तनपायी जीव दोनों ही सुरक्षित रहेंगे।

लेखक द्वारा बतायी गयी उपरोक्त विधियाँ विभिन्न स्थानीय व्यक्तियों के ज्ञान संदर्भ तथा पुस्तकीय आलेखों में उपलब्ध जानकारियों पर आधारित हैं। जो कि यहाँ पर एक सम्मिलित संकलन के रूप में प्रस्तुत करने का एक प्रयास मात्र हैं।

नीलगाय को जंगल में छोड़ने हेतु जाल मे पकड़ना

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

मसूर की उन्नत उत्पादन तकनीक

पंकज कुमार सिंह, राजीव कुमार सिंह एवं रामजीत

कृषि विज्ञान केन्द्र, सोहांव, बलिया

नरेन्द्र देव कृषि एंव प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज फैजाबाद

मसूर रबी दलहन वाली जल्दी पककर तैयार होने वाली मुख्य फसल है। इसका पौधा करीब 25 सेन्टीमीटर उँचा होता है इसमे अन्य दलहनी फसलो की अपेक्षा सूखा सहन करने की क्षमता अधिक होती हैं। इसमें 25 प्रतिशत प्रोटीन, 60 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेड, 1.8 प्रतिशत वसा के अतिरिक्त प्रर्याप्त मात्रा में कैल्शियम, लोहा, थियामीन एंव नियासीन भी पाये जाते है। इसका प्रयोग दाल, खडी दाल, सूप के रूप में एंव नमकीन इत्यादि के लिए किया जाता है। मसूर फसल मृदा क्षरण कम करने मे सहायक होती है तथा मसूर फसल का भूसा पशुओं के लिए प्रयोग किया जाता है। मसूर फसल का समावेश फसल चक्र में करने से मृदा की रसायनिक, भौतिक एंव जैविक गुणो में सुधार होता है। मसूर फसल से कम लागत में अधिक उत्पादन प्राप्त होता है।

भूमि का चुनाव एवं तैयारी

दोमट से भारी भूमि इसकी खेती के लिए अधिक उपयुक्त है, धान के बाद खाली खेतो में मसूर विशेषकर वोयी जाती है। पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से तथा 2, 3 जुताई देशी हल से करके पाटा लगाना चाहिए या रोटावेटर से खेत की जुताई कर तैयारी करनी चाहिए।

उन्नतशील प्रजातियों का विवरण

प्रजाति	अवधि दिनों में	उपज क्वि./हे.	विशेष गुण
पन्त मसूर – 406	130 – 135	15 – 20	छोटा दाना
पन्त मसूर – 4	130 – 135	15 – 20	छोटा दाना
पन्त मसूर – 639	130 – 135	15 – 20	छोटा दाना
पन्त मसूर – 5	130 – 135	18 – 20	बहुरोगरोधी, बडा दाना
डी. पी. एल. – 62	130 – 135	15 – 20	बडा दाना
मल्लिका (के.–75)	120 – 125	14 – 16	मध्यम दाना, गेरूआ एंव उकठा रोधी
डी. पी. एल. – 15 (प्रिया)	135 – 140	20 – 22	बडा दाना
नरेन्द्र मसूर – 1	135 – 140	20 – 22	मध्यम दाना एंव उकठा रोधी
नरेन्द्र मसूर – 2	120 – 125	20 – 25	मध्यम दाना एंव उकठा रोधी

बीज की मात्रा

समय से बुआई के लिए 30–40 किग्रा. प्रति हे. देर से बुआई के लिए 45–50 किग्रा. प्रति हे. बडे दाने वाली प्रजाति के लिए 50–60 किग्रा. प्रति हे. बीज पर्याप्त होता है।

बुआई का समय एवं विधि

अक्टूबर मध्य से नवम्बर मध्य तक बुआई करने का समय उपयुक्त है। जीरो टिल सीड ड्रिल द्वारा मसूर की बुआई अधिक लाभप्रद है। कतार से कतार की दूरी 30 सेमी. रखे, तथा पौधो मे परस्पर 15 सेमी. की दूरी रखनी चाहिए।

बीजोपचार

बीज जनित रोगो की रोकथाम हेतु 1 ग्राम कारबेन्डाजिम + 2 ग्राम थायराम अथवा कार्बोक्सीन 1 ग्राम + थायराम 2 ग्राम से प्रति किलोग्राम बीज की दर से बीजोपचार करें। प्रति किग्रा. बीज में 10 मिली. क्युनालफॉस 25 ई. सी. मिलाकर बीजोपचार करें। दलहनी फसल होने के कारण 10 किग्रा. बीज को 1 पैकेट (200 ग्राम) राइजोवियम विशिष्ट कल्चर से उपचारित करके बोना चाहिए। विशेष कर उन खेतो में जिनमें पहले मसूर न बोयी गयी हो पी. एस. बी. कल्चर का आवश्य प्रयोग करें। सर्वप्रथम कवकनाशी फिर कीटनाशी एंव अन्त में कल्चर से बीज उपचारित करे।

उर्वरक

दलहनी फसल होने के कारण प्रारंम्भ की अवस्था में 15–20 किग्रा. नत्रजन प्रति हे. देना आवश्यक है। बाद में जीवाणु इसकी पूर्ति वायुमण्डल से कर लेते है। फास्फोरस एंव पोटाश मृदा परीक्षण के आधार पर दे, यदि ऐसा सम्भव न हो तो 60 किग्रा. फास्फोरस, 20 किग्रा. पोटाश व 20 किग्रा. गंधक प्रति हे. प्रयोग करें। गंधक न उपलब्ध होने पर 250 किग्रा. जिप्सम प्रति हे. बोआई के समय प्रयोग करने से गंधक की आपूर्ति होती है। जिन मृदाओं मे जस्ते की कमी होने पर 2.5 किग्रा. जिंक सल्फेट प्रति हे. बोआई के समय भूमि में डाले या खडी फसल में 0.5 प्रतिशत जिंक सल्फेट + 0.25 प्रतिशत चूने का घोल का छिडकांव करे इससे उपज में बढोत्तरी होती हैं।

सिचाई

यदि जाडे में वर्षा न हो तो पहली सिचाई फूल आने से पूर्व तथा दूसरी सिचाई फलियां बनते समय जरूर करे। ध्यान दे

अधिक मात्रा में पानी नही लगाना चाहिए।

खरपतवार नियंत्रण

बुआई के 20–25 दिन बाद एक निराई गुडाई करनी चाहिए। रसायनिक खरपतवारनाशी का प्रयोग करने के लिए एलाक्लोर 3–4 ली. प्रति हे. 500–600 ली. पानी में मिलाकर बुआई के तुरन्त बाद (तीन दिन के अन्दर) छिडकांव करे। फ्लूक्लोरोलिन 45 ई.सी. की 2.2 ली. मात्रा को 500–600 ली. पानी में मिलाकर बुआई के पहले छिडकांव करें अथवा पेडीमिथलीन 3.3 ली. प्रति हे. 500–600 ली. पानी में मिलाकर बुआई के तुरन्त बाद छिडकांव करना चाहिए।

फसल सुरक्षा

कीट

पौधो का रस चूसने वाले कीडे जैसे माहू एंव फलीबेधक कीडो की रोकथाम के लिए 500 मिली. मोनोक्रोटोफॉस 36 एस. एल. प्रति हे. की दर 500–600 ली. पानी में मिलाकर छिडकांव करना चाहिए।

रोग

उकठा या सूखा रोग के लिए बीज शोधन करे और फसल चक्र अपनाये। उकठा के बचाव के लिए ट्राईकोडरमा पाउडर 5 ग्रा. प्रति किग्रा. बीज की दर से उपचारित करें। मूल विगलन तथा मृदा जनित रोगो के लिए भूमि शोधन करना चाहिए इसके लिए 3–4 किग्रा. ट्राईकोडरमा पाउडर को 60–70 किग्रा. अच्छी सडी गोबर की खाद में मिलाकर बोआई के पहले मिट्टी में मिला दे। यदि उकठा की बीमारी जिस खेत में लग गयी है उस खेत मे फसल बदल कर बोनी चाहिए। रतुआ रोग के नियंत्रण के लिए मैकोंजेब 2 किग्रा. अथवा ट्राईडोमार्फ 80 ई.सी. 500 मिली. मात्रा को 500–600 ली. पानी में घोलकर छिडकांव करें।

कटाई एंव मडाई

भलीभांति पकी फसल की ही कटाई करे। मडाई करने के बाद दानों को इतना सुखा ले कि नमी की मात्रा 12 प्रतिशत से अधिक न हो।

गन्ने में मसूर की खेती

शरद ऋतु में बोये जाने वाले गन्ने के खेत में इसकी मिली – जुली खेती की जा सकती है। गन्ने की दो कतारों के बीच दो कतारें मसूर की लगाने से करीब 6–8 क्वि. मसूर प्रति हे. प्राप्त की जा सकती है। गन्ने की फसल पर इसका लाभदायक प्रभाव पडता है।

गन्ने के साथ दलहन की अन्तः खेती करें।
अधिक मुनाफा के साथ पूरा परिवार स्वस्थ रहें।।

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

फसल अवशेषों को जलाने से वातावरण में दुष्प्रभाव

सत्यम चौरिहा, आदित्य कुमार सिंह, सतीश पाठक, नरेन्द्र सिंह एवं धीरेन्द्र कुमार

कृषि विज्ञान केन्द्र, गनीवॉ, चित्रकूट

फसल कटाई के पश्चात् फसल का एक बहुत बड़ा हिस्सा अवशेष के रूप में अनुपयोगी रह जाता हैं। जो नवकरणीय ऊर्जा का स्रोत हैं। भारत में इस तरह के फसल अवशेषों की मात्रा लगभग 62 करोड़ टन हैं। इसका आधा हिस्सा घरों एवं झोपड़ियों की छत निर्माण, पशु, आहार, ईधन एवं पैकिंग हेतु उपयोग में लाया जाता हैं एवं आधा भाग खेतों मे ही जला दिया जाता हैं। जिससे अनुमानित तौर पर फसल अवशेष जैसे सूखी लकड़ी, पत्तियां, घास–फूस जलाने सें वातावरण में 40 प्रतिशत (Co_2) 32 प्रतिशत (Co) कणिकीय पदार्थ 2.5 तथा 50 प्रतिशत हाइड्रोकार्बन को उर्त्सजन होता हैं।

खेतों में फसल अवशेष जलाकर नष्ट करने की प्रक्रिया से वातावरण दूषित होता हैं। जमीन का कटाव बढ़ता हैं एवं साँस की बीमारियां बढ़ती हैं। फसल अवशेषों का जमीन से सीधे ही समावेश करने की प्रक्रिया सरल हैं। परन्तु इसमें कुछ कठिनाईयां भी हैं। जैसे दो फसलों के बीच का अंतर कम होना एवं इसमें अतिरिक्त कम, सिंचाई एवं राज्य क्रियाएं सम्मिलित होती हैं। जिसमें लागत बढ़ जाती हैं। अध्ययन के अनुसार "धान का भुजा मृदा में समाविष्ठ करने में मीथेन गैस का उत्सर्जन होता हैं। जो भूमंडलीय उष्णता को बढ़ावा देता हैं। इन कठिनाईयों को सरल प्रक्रिया द्वारा दूर कर फसल अवशेषों को जलाने से होने वाले दुष्परिणामों को कम किया जा सकता है। इस फसल अवशेषों में लगभग 0.5 प्रतिशत एन. 0.2 प्रतिशत पी. एवं 1.5 प्रतिशत के. इसकी कुल वार्षिक मात्रा भारत के कुल एन. पी.के. उपयोग 30 प्रतिशत है।

अतः फसल अवशेषों का नवीनीकरण स्वास्थ वातावरण हेतु एवं आर्थिक दृष्टि से अति आवश्यक है।

स्वच्छ वातावरण हेतु चिंताजनक

- यह वायु प्रदूषण वातावरण की निचली सतह पर एकत्रित होता है जिसका सीधा प्रभाव आबादी पर होता है।
- इस प्रकार का प्रदूषण दूरगामी इलाकों एवं विस्तृत क्षेत्रों में हवा द्वारा फैलता है। जिसका नियंत्रण हमारे वश में नहीं है।
- इस प्रकार का प्रदूषण ग्रीन हाऊस गैस उत्पादन का वैश्विक मौसम परिवर्तन का कारण बनता है।
- फसल अवशेष जलाने से वातावरण में खतरनाक रसायन घुल जाता है। जो एक कैंसरकारी प्रदूषक है।

रसायन डायआवसिन

फसल अवशेषों में कीट नाशकों के अवशेष होने के कारण इसको जलाने से विषैला रसायन डायआवसिन हवा में घुल जाता है। फसल की कटाई के समय एवं कटाई के पश्चात् अवशेषों को जलाने से हवा में डायआवसिन की मात्रा 33–270 गुना बढ़ जाती है। डायआवसिन का प्रभाव वातावरण में दीर्घ समय तक रहता है जो मनुष्य एवं पशु की त्वचा पर जमा हो जाता है जिससे खतरनाक विमारियों का जन्म होता है।

फसल अवशेषों को जलाने से उत्पन्न प्रदूषण से कई स्वास्थ्य सम्बन्धी प्रभाव होते हैं।

- थायराइड़ हार्मोन स्तर में परिवर्तन होता है।
- गर्भ अवस्था के दौरान बच्चे की दीमागी स्तर पर दुष्प्रभाव डालता है।
- इस प्रदूषण से पुष्पों में टेस्टोस्टेशन हार्मोन का स्तर घटता है।
- स्त्रियों में प्रजनन संम्बन्धी रोग बढ़ जाते हैं।
- रोग प्रतिरोधक क्षमता घट जाती है।

विकल्प एवं निदान

- सरकार द्वारा फसल अवशेष न जलाने हेतु नियम लागू करें ताकि प्रदूषण कम हो सके।
- फसल अवशेषों को खेत में पुनः जोतकर मृदा स्वास्थ्य बढ़ाया जा सकता है।
- अवशेषों को एकत्रित कर ईंधन, कम्पोस्ट, पशुआहार, घर की छत, मशरूम, उत्पादन आदि कार्यों में उपयोग किया जा सकता है।
- इन अवशेषों से जैविक ईंधन भी तैयार किया जा सकता है।
- इन अवशेषों को सूक्ष्म जीवाणुओं के द्वारा सड़ाने का एक सरल उपाय है। जिससे उपजाऊ कम्पोस्ट तैयार कर मृदा की भौतिक संरचना एवं उर्वरता दोनों को बढ़ाया जा सकता है। कम्पोस्टिंग द्वारा फसल अवशेषों के विघटन के दौरान विभिन्न सूक्ष्म जीवाणु जैविक फफूंद, हाइकोडर्मा, फ्लूरोटज, पॉली पोरस, फिनोरेकीट आदि का प्रयोग किया जाये।

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

सूक्ष्म सिंचाई विधि : एक नवीन पद्धति

दीपक सिंह[1], पी.आर. ओजस्वी[1], ए.सी.राठौर[1], निशा सिंह[2], श्रीधर पात्रा[1] एवं तृषा राय[1]

[1]भाकृअनुप– भारतीय मृदा एवं जल संरक्षण संस्थान, देहरादून, उत्तराखण्ड
[2]एच.एन.बी. गढ़वाल विश्वविद्यालय, श्रीनगर गढ़वाल

किसी भी देश को आगे ले जाने के लिए कृषि के योगदान को नकारा नहीं जा सकता। क्योंकि कृषि का योगदान प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से देश के इकॉनमी को बढ़ाने में सहायक होता है। जबकि ऐसे समय में जब जनसंख्या लगातार बढ़ रही हैं और उस जनसंख्या को खिलाने के लिए हमें और उत्पाद की जरूरत पड़ेगी, पर इस बढ़ते हुए जनसंख्या को खिलाने के लिए हमारे पास जो उपलब्ध संसाधन है उसे पूरा करना मुश्किल हो रहा है और इसके बाद भी जो हमारे पास कृषि योग्य भूमि हैं वह लगातार कम हो रही है, क्योंकि जिस तरह से हमारे देश में शहरीकरण और औद्योगिकीकरण हो रहा है उससे कृषि योग्य भूमि और भी कम हो रही है। इन सब समस्याओं को देखते हुए हमारे पास केवल दो उपाय है जिससे हम अधिक उत्पाद कर सकते है पहला,या तो जो खराब भूमि हैं उनको कृषि योग्य बनाया जायें और दूसरा जो भी हमारे पास कृषि योग्य भूमि है हमें उसको और उपजाऊ बनाया जायें। जैसा कि हम लोग जानते है हमारे देश का 60% उत्पाद केवल 40% सिंचाई योग्य भूमि से आता है। जबकि 40% उत्पाद 60% असिंचित भूमि से आता है। ऐसा नही है कि हमारे पास पानी की कमी है पर जिस तरह से इसका इस्तेमाल हो रहा है उससे और अधिक कृषि योग्य भूमि को सिंचित करना मुश्किल है। इसलिए हमें किसी और तकनीक को अपनाना होगा। जिससे और अधिक भूमि को सिंचिंत किया जा सके और बढ़ती हुई जनसंख्या को भोजन दिया जा सकें और देश कृषि पैदावार बढ़ाया जा सकें।

इसके लिए हमे आधुनिक सिंचाई प्रणाली को बढ़ावा देना होगा। सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली एक ऐसी सिंचाई पद्धति है जो न केवल पानी को बचाता है बल्कि पैदावार को भी बढ़ाता है। इस पद्धति में पानी बूँद–बूँद कर के पौधों के जड़ों मे सीधे पतली पाईपों के द्वारा दिया जाता है, जिससे जितना पानी पौधों को अपना खाना बनाने के लिए जरूरत होता है उतना ही पानी इस विधि द्वारा दिया जाता है। इससे पानी की खपत कम होती है और बचे हुये पानी का उपयोग अधिक भूमि को सिंचित करने में इस्तेमाल किया जा सकता है।

सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली से लाभ

- इस पद्धति में सिंचाई के लिए नालियों को नही बनाना पड़ता है। जिससे जो पानी नालियों से बह जाती है उनको बचाया जा सकता है।
- इस पद्धति से 30% से 50% तक पानी की बचत होती है।
- इससे उत्पाद को 25%से 50% तक बढ़ाया जा सकता है।
- इसको ऊँच–नीच ढलान वाली जगहों पर भी लगाया जा सकता है।
- इसमें किसी भी प्रकार के बंड/मेंड को नही बनाया जाता जिससें और अधिक भूमि पौध रोपण के लिए मिल जाती है।
- यह सूक्ष्म वातावरण पौधों के लिए बनायें रखता है।
- इस पद्धति के द्वारा कम फर्टिलाइजर एवं कैमिकल दिया जाता है।

सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली से हानियां

- इस प्रणाली को लगाने के लिए शुरूआती खर्च अधिक है।
- अगर इस प्रणाली को अच्छी तरह से डिजाइन नही किया गया तो खराब होने के चान्स होते है।
- जो भी इस प्रणाली को अपना रहा है उसको इसके बारे में जानकारी होना जरूरी है।

सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली स्थापित करने का तरीका

इस प्रणाली को डिजाइन करने के लिए कुछ जरूरी तरीके होते है जो कि इस प्रकार है

- ड्रिपर/इमिटर का चयन
- लेटरल का चयन एवं उसका डिजाइन
- सबमेन पाइप का चयन एवं उसका डिजाइन
- मेन पाइप का चयन और उसका डिजाइन
- फिल्टर यूनिट का चयन
- पम्प का चयन
- सिंचाई का समय

किसी भी सिंचाई प्रणाली को इस तरह डिजाइन करना चाहिए कि इस प्रणाली की कार्य क्षमता अच्छी हो, तथा कम से कम लागत लगें।

इसलिए डिजाइन करने से पहले कुछ बाते ध्यान रखना चाहिए जो इस प्रकार है।

रीकोनेन्स सर्वे

किसी भी क्षेत्रफल/भूमि का रीकोनेन्स सर्वे बहुत ही जरूरी होता है इससे हमें उस फील्ड का लेखा–जोखा मिल जाता है और हमें फील्ड/खेतों के लिए सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली का डिजाइन करना आसान हो जाता है। हमे रीकोनेन्स सर्वे से बहुत सारी जानकारी मिल जाती है जैसा कि – पम्प लगाने की जगह, लेटरल तथा मेन और सबमेन पाइप की लम्बाई, आदि।

पानी का स्रोत

यह बहुत ही जरूरी है कि जो भी पम्प लगाये उसकी क्षमता इतनी हो की वह उस पूरे फील्ड को सिंचित कर सकें। यह भी सुनिश्चित करना चाहिए की जो पानी उपलब्ध है। वह अच्छी

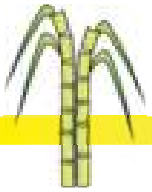

क्वालिटी का है कि नहीं। उस आधार पर फसल तथा सिंचाई प्रणाली का चयन करना चाहिए।

जलवायु

जलवायु का प्रभाव किसी भी फसल के उत्पाद पर बहुत ही ज्यादा प्रभाव डालती है। इसलिए उस एरिया के जलवायु के विषय में अच्छी तरह से पता होना बहुत ही जरूरी है। क्योंकि किसी भी सिंचाई प्रणाली की रूपरेखा/खाका उस क्षेत्र की फसल के द्वारा उपयोग किये जाने वाले (प्रतिदिन अधिकतम) पानी की मात्रा पर किया जाता है।

सिंचाई की मात्रा

किसी भी फसल को कितनी मात्रा में पानी चाहिए इसके लिए हमें मिट्टी में सिंचाई से पहले कितनी नमी है यह पता कर लेना चाहिए। जिससे उचित सिंचाई की मात्रा का पता चल सकें ताकि उतना ही पानी उस फसल को दिया जा सके।

सिंचाई की अवधि

सिंचाई किसी फसल में कितने दिनों के बाद देनी चाहिए इसका पता लगाने के लिए हमें यह पता होना चाहिए की एक सिंचाई में कितना पानी देते है और उस फसल द्वारा कितना पानी प्रतिदिन आवश्यक है।

पानी देने की दर

इसको पता लगाने के लिए हमको यह जानना होगा कि मिट्टी किस दर से पानी सोख रही है। और हमें अपने ड्रिपर को डिसचार्ज रखना है जिससे पानी मिट्टी में चला जाए उसके उपर न तैरे। पानी की दर निकालने के लिए नीचे दिए गए सुत्र को उपयोग कर सकते है।

पानी देने की दर सेंन्टीमीटर/घंण्टा = डीस्चार्ज दर (मीटर क्यूब/घंण्टा)/भीगा हुआ एरिया (मी^{2}) X 100 सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली के डिजाइन स्टेप

ड्रिपर पर प्रति इमिटर का चयन

किसी पौध के पास कितनी डिपर की संख्या होनी चाहिए यह ज्ञात करने के लिए हमें ड्रिपर का डीस्चार्ज तथा पौधो को पानी की आवश्यकता की जरूरत होती है। इस तरह हम किसी पौधे को कितने डिपर का आवश्यकता है यह तय कर उतने डिपर लगा सके ताकि पौध अच्छी तरह से बढ़ सके।

लेटरल पाइप का चयन तथा डिजाइन

किसी भी फील्ड के लिए किस साइज के लेटरल की जरूरत है यह हमें निचे दिए गए सूत्र से पता चल जायेगा

$$Hf = 10.67 LQ^{1.85}/C^{1.85}d^{4.87}$$

जबकि–

Hf= किसी दिये हुए लंबाई के पाइप मे कितना प्रेशर (मीटर) कम हो रहा L= पाइप की लंबाई (मीटर), Q= डीसचार्ज दर (मीटर^3/सेकन्ड), D=पाइप के अंदर का डायामीटर (मीटर), C= Roughness Co-efficient (खुदरापन सह कुशल)

इस तरह से मेन पाइप तथा सब मेन पाइप का चयन और डिजाइन किया जा सकता है।

डिजाइन के समय यह ध्यान रखना चाहिए की प्रेशर का वैरियेशन तथा डीसचार्ज का वैरिएशन 10% से ज्यादा नही होना चाहिए, नही तो पानी का फैलाव पौध के पास सही से नही होगा। इससे जो डिजाइन किया हुआ प्रणाली है वह खराब हो जायेगा।

फिल्ट्रेशन यूनिट का चयन

कोई भी प्रणाली 100% अपने कार्य क्षमता से नही करती फिर भी हमे चाहिए की हम ऐसा प्रणाली का चयन करे जो कि अपने अधिक क्षमता से कार्य करे। इसी तरह फिल्ट्रेशन यूनिट का भी चयन बहुत सावधानी पूर्वक करनी चाहिए और जिस तरह के पानी का स्रोत हो उसी तरह के फिल्टर का उपयोग करना चाहिए नही तो फिल्टर जाम हो जायेगा और दूसरा फिल्टर लगाना पड़ेगा। इसको देखते हुए पानी के स्रोतानुसार नीचे कुछ फिल्ट्रेशन यूनिट का कार्य क्षमता दिया गया है। जो कि इस प्रकार है–

पानी का स्रोत	फिल्टर की कार्य क्षमता
1. बोर का पानी	85 से 90%
2. कुआँ का पानी	70 से 80% (पानी में बालू की मात्रा के अनुसार)
3. नहर, तालाब आदि का पानी	65 से 75% (पानी में बालू की मात्रा के अनुसार)

पम्प का चयनः खेत मे पानी के आवश्यकता को देखते हुए हमें एक अच्छे पंप का चयन करना चाहिए, और इस चयन के लिए मैक्सिीमम टोटल हेड को जानना बहुत जरूरी होता है और इसी वजह से एक अच्छे पम्प का चयन किया जा सकता है जो कि इस तरह है।

टोटल हेड(एच) = $H_m+H_f+H_j+H_s$

जबकि,

H_m = लेटरल पाइप मे पानी भेजने के लिए प्रेशर को आवश्यकता(मीटर)

H_f = फ्रीक्सन (मीटर)

H_j = पम्प से लेकर लेटरल पाइप तक का ऊँचाई (मीटर)

H_s = पम्प से लेकर पानी की गहराई (मीटर)

टोटल हेड तथा पम्प की डीसचार्ज जानने के बाद हम आसानी से कितने हार्सपॉवर के पम्प की जरूरत है हम निकाल सकते है। जो की इस तरह है।

$$\text{पम्प (एचपी)} = \frac{\text{पम्प का डीसचार्ज (मी}^3\text{/से0) X टोटल हेड (मी)}}{75 \text{ X पम्प की कार्य क्षमता (\%)}}$$

पम्प का कार्य क्षमता पम्प के डीजाइन के अनुसार बदलता रहता है कुछ पम्प का कार्य क्षमता नीचे दिया गया है।

पम्प के प्रकार	कार्य क्षमता
1. मोनोब्लाक पम्प	40 से 70%
2. कपल्ड पम्प	60 से 65%
3. सबमर्सिबल पम्प	50 से 55%

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

पशुओं का उत्तम आहार लुसर्न

योगेन्द्र प्रताप सिंह, अतुल कुमार सचान, ब्रह्म प्रकाश, लाल सिंह गंगवार एवं अश्वनी दत्त पाठक
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

हरा चारा खिलाने से कई लाभ होते हैं। दुधारू पशु को इससे महत्वपूर्ण पोषक द्रव्य प्रोटीन, शर्करा, खनिज, जीवन सत्व मिलते हैं। हरा चारा स्वादिष्ट होता है अतः पशु उसे चाव से खाता है तो निश्चित हैं कि उसको शुष्क पदार्थ भी मिलते हैं। हरा चारा पाचक होता है अतः दुधारू पशुओं का पाचन भी ठीक रहता है, लेकिन 30 से 35 किलो प्रति पशु प्रतिदिन इसे ज्यादा हरा चारा नहीं खिलायें क्योंकि इससे पशुओं में अफारा (पेट में गैस वायु इकठ्ठा) की शिकायत हो सकती है।

हरे फली वाले चारे में रबी में खेती योग्य एक चारा हैं "लूसर्न" इसे अंग्रेजी में इसे अल्फा अल्फा कहते हैं। इसका अरबी भाषा में अर्थ हैं सर्वोत्तम।

जलवायु

इस चारा फसल की खेती राजस्थान के अत्यधिक गर्म प्रदेश से लद्दाख के अति ठंडे प्रदेश में भी की जा सकती है। ठंडी जलवायु इस फसल के अनुकूल होती है, मिट्टी में जल निकास होना चाहिए। ऐसी मिट्टी में फसल बढ़िया उपज होती है, खेत में पानी के भराव पर इस नुकसान होता है।

खेत की तैयारी

इस चारा फसल को बोने हेतु अक्टूबर तथा नवम्बर के अंत तक का समय ठीक रहता है। खेत में एक गहरी जुताई कर भुरभुरी मिट्टी की क्यारियां बनायें। खेत समतल बनायें ताकि पानी की निकासी ठीक से हो।

बीज का चयन

लूसर्न के बीजों का सतही कवच जरा कठोर होता हैं। जिससे अंकुरण ठीक से नहीं हो पाता। अतः बीज को बुआई से पहले (छह से आठ घंटे पहले) पानी में भिगोकर रखें। इसके बाद बीज को *राइजोबियम मेलिलोटी* नामक जीवाणु संवर्धक से उपचारित कर सकते हैं। यह खास लूसर्न के लिए किया जाता है, उसके बाद बीज छाया में सुखाते हैं।

बुआई

बीज प्रक्रिया के छह से आठ घण्टे बाद अगर शुष्क तथा अर्द्धशुष्क इलाका हैं जहां तलछटी वाली मिट्टी हैं तो खेत समतल बनाकर बीज को खेत में ऐसे ही बिखेर सकते हैं। इसके बाद उसे बखर हल्के से चलाकर मिट्टी में मिलायें।

दुग्ध व्यवसाय में निवेशों का खर्च ज्यादा बढ़ गया है, अतः मुनाफा कम मिलता है। इसलिए इसे कम करने हेतु दुधारु पशुओं को हरा–पौष्टिक फली वाले चारों खिलाना निहायत जरुरी है। ऐसा करने से खुराक का खर्च कम हो जाता है। दूसरी महत्वपूर्ण बात यह की चारा अपने खेत पर ही उत्पादित करना जरुरी है क्योंकि यह सस्ता पड़ता हैं। बाजार में हरे चारे की कीमत काफी बढ़ चुकी हैं अतः वहां से रोजाना चारा खरीदना समय पैसा और मेहनत के लिए पुराता नहीं है।

इसके अलावा लूसर्न बीज को बुआई यंत्र द्वारा सीधी कतारों में 30 से 35 सेंटीमीटर दूरी पर बो सकते हैं। अगर ज्यादा बरसात वाला इलाका है जहां खेत में पानी भर जाता है। तो खेत में (रिजेस) बनायें जो एक–दूसरे से 50 से 60 सेंटीमीटर दूर हो। फिर बुआई यंत्र से बुआई करें।

खाद एवं उर्वरक

लूसर्न फसल की अच्छी बढ़वार हेतु उसे फास्फोरस, पोटेशियम, कैल्शियम तथा गंधक (सल्फर) की ज्यादा जरुरत होती है। अतः बुआई के समय 18 किलो नत्रजन, 70 से 75 किलो फॉस्फेट, 40 किलो पोटेशियम और 150 ग्राम सोडियम मॉलीबडेट मिट्टी में डालकर सिंचाई करें। इससे पहले मिट्टी में 20 से 25 टन अच्छी तरह पकी गोबर खाद जिसमें ह्युमस भरपूर है। वह प्रति हेक्टर में डाले और मिट्टी में मिलायें।

सिंचाई

लूसर्न को नमी की जरुरत होती है। अतः जरुरत अनुसार हर हफ्ते 1 या 2 हल्की सिंचाई दें। बुआई के तुरंत बाद सिंचाई करें ताकि अंकुरण अच्छा हो। जाड़े में 15 से 20 दिन के अंतराल से सिंचाई करें।

कटाई का समय

जब फसल में फलियां आती हैं तब आखिरी में से लेकर जब फसल के दसवें भाग में फूल आते हैं तब पहली कटाई कर सकते हैं।

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

बेर वृक्ष एवं लाख की खेती

ए.के. जायसवाल, एस. एन. सुशील एवं शर्मिला रॉय

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

बेर का वृक्ष कटीला होता है जो धीरे धीरे बढ़ता हुआ लगभग 15 मीटर तक ऊँचा हो सकता है। इसके तने का व्यास लगभग 40 से. मी. या अधिक भी हो जाता है। इसकी डालियां फैली हुई होती है साथ ही वृक्ष का चँदवा भी फैला होता है। ऐसी मान्यता है कि बेर की उत्पत्ति मध्य एशिया में हुई थी (चित्र 1)। इसके फल गोल अंडाकार तथा छोटे व बड़े कई प्रकार के होते है। इनकी कई जातियां होती है। इसके कच्चे फल का मध्यफलभित्ति सफेद व गूदेदार होता है(चित्र 2)।

छायाचित्र 1. बेर का एक बड़ा वृक्ष

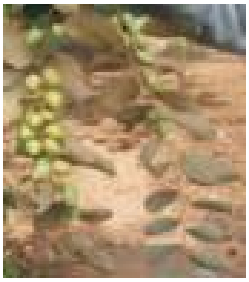

छायाचित्र 2. बेर के फल

लाख उत्पादन क्षेत्र में बेर वृक्ष का उपयोग मुख्य रूप से लाख कीट पालन के लिये किया जाता है। बेर वृक्ष के नीचे की जमीन का उपयोग आलू कन्द, हल्दी आदि मिट्टी के भीतर होने वाली सब्जियों के लिये किया जाता है जिससे कृषकों को नियमित आय मिलती रहती है।

लाख खेती के लिये बेर वृक्ष की विषेशतायें

(क) इस वृक्ष पर रंगीनी और कुसमी दोनों किस्म के लाख की खेती की जा सकती है।

(ख) दोनों प्रकार के लाख की उत्पादकता काफी अधिक होती है।

(ग) कटाई पश्चात् पुनः नयी शाखायें आने की क्षमता काफी अच्छी है।

(घ) फसल कटाई और वृक्ष की काट–छॉट एक साथ होने से वृक्ष के स्वास्थ पर कोई विपरीत प्रभाव पड़ता ।

लाख खेती के लिये बेर वृक्ष के अवगुण

(क) टहनियों में बड़ी संख्या में कॉटों की उपस्थिति

(ख) ग्रीष्मकाल में वृक्षों से पत्तियों की अनुपस्थित जिसके कारण धूप की गर्मी का प्रभाव सीधा लाख पर हो।

(ग) ग्रीष्मकालीन रंगीनी फसल के परिपक्व होने का समय और बेर वृक्ष के काट–छॉट के समय में समन्वय न होना

लाख कीट एवं फसल चक्र

बेर वृक्ष दोनों किस्म (रंगीनी एवं कुसमी) के लाख उत्पादन हेतु एक प्रभावी पोषक वृक्ष है। तीन फसली लाख कीट पालन हेतु भी यह काफी उपयोगी वृक्ष है। अधिकतर लाख उत्पादक इस वृक्ष का उपयोग रंगीनी लाख उत्पादन हेतु करते हैं। लेकिन वर्तमान में इसका उपयोग कुसमी लाख उत्पादन हेतु भी प्रारम्भ कर दिया गया है। कुसमी लाख कीट की उत्पादकता रंगीनी की तुलना में काफी अधिक होती है और कुसमी लाख का बाजार मूल्य भी काफी अधिक मिलता है।

रंगीनी लाख से वर्ष में दो फसलें ली जाती है ग्रीष्मकालीन (बैसाखी) ओर वर्षाकालीन (कतकी)। ग्रीष्मकालीन फसल हेतु कीट संचारण अक्टूबर–नवम्बर और वर्षाकालीन फसल जून–जुलाई में किया जाता है। ग्रीष्मकालीन फसल लगभग 8 माह की तथा वर्षाकालीन लगभग 4 माह की होती है। इसी प्रकार कुसमी लाख की भी वर्ष में दो फसल भीतकालीन (अगहनी) और ग्रीष्मकालीन (जेठवीं) दोनों लगभग 6 माह की होती है। देश के अधिकतर भाग में शीतकालीन कुसमी फसल जून–जुलाई में प्रारम्भ होती है और फसल जनवरी–फरवरी तक परिपक्व हो जाती है छत्तीसगढ़ के कई भाग में यह फसल दिसम्बर में ही परिपक्व हो जाती है। ग्रीष्मकालीन कुसमी फसल हेतु कीट–संचारण जनवरी–फरवरी में किया जाता है जबकि फसल जूल–जुलाई में परिपक्व हो जाती है। रंगीनी और कुसमी लाख कीट के विभिन्न अवस्थाओं की अवधि सारणी 2 में दिया जा रहा है।

सारणी 2. लाख फसल और फसल परिपक्व होने का समय

लाख	फसल	कीट संचारण	परिपक्वता (फसल–कटाई)	अवधि (माह में)
रंगीनी	वर्षाकालीन (कतकी)	जून–जुलाई	अक्टूबर–नवम्बर	4
	ग्रीष्मकालीन (बैसाखी)	अक्टूबर–नवम्बर	जून–जुलाई	8
कुसमी	ग्रीष्मकालीन (जेठवी)	जनवरी–फरवरी	जून–जुलाई	6
	शीतकालीन (अगहनी)	जून–जुलाई	जनवरी– फरवरी	6

बेर वृक्ष पर लाख उत्पादन की प्रक्रिया

अन्य पोषक वृक्ष की तरह इस वृक्ष पर भी निम्नलिखित प्रक्रिया की जाती है।

(क) वृक्षों की काट–छॉट, (ख) कीट संचारण, (ग) फुंकी हटाना, (घ) फसल सुरक्षा, (ड.) फसल कटाई और (च) लाख छिलाई।

(क) वृक्षों की काट–छॉट

काट–छॉट का मुख्य उद्देश्य है कि कीट संचारण के समय बड़ी–बड़ी नर्म टहनियॉ उपलब्ध हों। बेर में कीट संचारण के लगभग पॉच माह पूर्व एक उपयुक्त समय होता है (चित्र 3)। कटाई करते समय दावली या कुल्हाड़ी की धार तेज होनी चाहिये अन्यथा टहनियॉ फटने का डर बना रहता है। शीतकालीन कुसुमी लाख कीट संचारण हेतु फरवरी माह में तथा ग्रीष्मकालीन रंगीनी फसल हेतु मई माह कई क्षेत्रों में उपयुक्त है। कम तापमान वाले क्षेत्रों में जहॉ ग्रीष्मकालीन कुसुमी लाख ले सकते है वहॉ लगभग मई के अन्तिम या जून के प्रारम्भ में काट–छॉट किया जा सकता है जिसके लिसे कीट संचारण लगभग जनवरी–फरवरी में कर सकते हैं। बेर की काट–छॉट करने हेतु पहले नीचे की टहनियॉ काटतें है तब ऊपर की तरफ जिससे कोई डाली काटने के पष्चात् कहीं फंसी न रह जाये। काट–छॉट इस प्रकार से करना चाहिये कि वृक्षों को एक सुविधा जनक आकार दिया जा सके जिससे लाख खेती की विभिन्न प्रक्रियायें जैसे दवा छिड़काव, फसल कटाई इत्यादि आसानी से किया जा सके और नई टहनियॉ हमेशा मिलती रहे।

छायाचित्र 3. काट–छॉट किया हुआ बेर वृक्ष

(ख) कीट संचारण

ग्रीष्मकालीन रंगीनी फसल के लिये कीट संचारण अक्टूबर–नवम्बर तथा शीतकालीन कुसमी फसल हेतु जून–जुलाई में कीट संचारण किया जाता है। ग्रीष्मकालीन कुसमी फसल हेतु (ठंडे स्थानों में) कीट संचारण जनवरी–फरवरी में करते है। बीहन की मात्रा लगभग 20 ग्राम प्रति मी. नर्म टहनी की दर से लगाते हैं। ग्रीष्मकालीन रंगीनी और कुसुमी फसल जिसका कीट संचारण क्रमशः अक्टूबर–नवम्बर और जनवरी फरवरी में किया जाता है इसके लिये बीहन का 60 मेश नाईलान की जाली में भरकर कीट संचारण करना चाहिये (चित्र 4) जून–जुलाई या सम्भावित वर्षा के समय बिना जाली बीहन को वृक्षों पर बॉधना चाहिये (चित्र 5) ऐसी अवस्था में बीहन बॉधने से पहले इसे कीटनाशक एवं फफूंदनाशक से उपचारित कर लेना चाहिये। प्रत्येक बण्डल लगभग 50 ग्राम का बना सकते हैं। जून–जुलाई माह में बीहन लाख की एक–एक टहनियॉ अलग–अलग बॉधना अति उत्तम है जिससे फफूंद लगने की सम्भावना कम होती है।

छायाचित्र 4. 60 मेश जाली में बीहनलाख भरकर कीट संचारण

छायाचित्र 5. बिना जाली के कीट संचारण

(ग) फुंकी हटाना

जैसे ही बीहनलाख से कीट निर्गमन समाप्त हो, फुंकी हटा देना चाहिये। सामान्यतः जून–जुलाई में यह प्रक्रिया 7–10 दिनों में तथा अक्टूबर–नवम्बर या जनवरी–फरवरी में 15–20 दिनों में पूरी हो जाती है। कभी–कभी यह प्रक्रिया 3–5 दिन अधिक चलती है यह मौसम पर निर्भर करता हैं। कम तापमान होने पर या वर्षा के समय यह प्रक्रिया धीमी हो जाती है। फुंकी को एकत्रित करने के पश्चात् शीघ्र से शीघ्र से छिलाई कर देनी चाहिये अन्यथा शत्रु कीट की जनसंख्या फुंकी लाख में बढ़ती जायेगी और लाख की मात्रा भी घटती जायेगी।

(घ) फसल सुरक्षा

लाख फसल की सुरक्षा एक आवश्यक पहलू है जिससे नियमित उत्पादन एवं उत्तम किस्म के बीहन का उत्पादन किया जा सकता है। लाख की उत्पादकता में कमी का मुख्य कारण है इसमें विद्यमान परभक्षी एवं परजीवी कीट। कुसमी लाख का प्रमुख शत्रु कीट क्राइसोपा है जबकि यूब्लेमा ऐमाबिलिस (सफेद इल्ली) और सियुडोहाइपेटोपा पल्वेरिया (काली इल्ली) दोनों रंगीनी और कुसमी में नुकसान पहुंचाने वाले परभक्षी कीट हैं। रंगीनी फसल में परजीवी कीटों से काफी नुकसान होने की सम्भावना होती है। ग्रीष्मकालीन फसलों में परजीवी कीट काफी संख्या में पाये जाते है।

दवा छिड़काव के लिये गटोर स्प्रेयर का प्रयोग करना चाहिये (चित्र 6) इसके द्वारा जमीन से (चित्र 7) और वृक्ष पर भी चढ़कर छिड़काव आसानी से किया जा सकता है।

छायाचित्र 6. लाख पर दवा छिड़कने वाली मशीन

छायाचित्र 7. लाख फसल पर दवा छिड़काव

(ड.) फसल कटाई

ग्रीष्मकालीन रंगीनी फसल (अरी लाख) मुख्य व्यापारिक फसल है जो मई में काट ली जाती है (चित्र 8) इसी प्रकार बेर पर परिपक्व बीहनलाख की शीतकालीन फसल दिसम्बर और फरवरी के बीच परिपक्व हो जाती है। जबकि कम तापमान वाले क्षेत्रों में बेर की ग्रीष्मकालीन फसल जुलाई–अगस्त तक तैयार हो जाती है (चित्र 9)। रंगीनी फसल को कटाई पश्चात् छीलकर बेच दिया जाता है जबकि कुसम से प्राप्त लाख, डंडी समेत बिक जाती है। कुसमी बीहन की कटाई करते समय कई टहनियॉ ऐसी होती है जिसमें किसी–किसी स्थान पर ही लाख पपड़ी विद्यमान होती है या फिर कहीं–कहीं की लाख मर जाती है ऐसी टहनियों को बीहन के लिये उपयोग नहीं किया जाता है अतः इससे पपड़ी को टहनियों से छीलकर छिली लाख के रूप में बेच देना चाहिये।

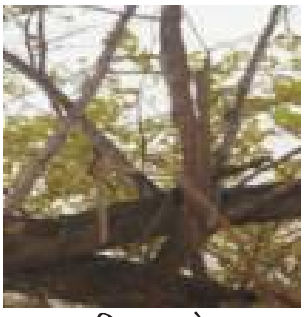

छायाचित्र 8. बेर पर परिपक्व रंगीनी लाख

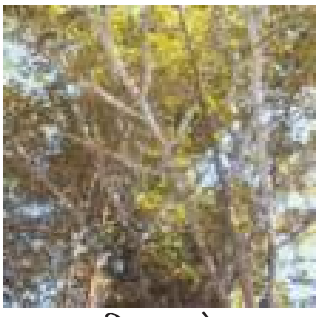

छायाचित्र 9. बेर पर परिपक्व कुसमी लाख

(च) टहनियों से लाख छिलाई

कुसुम वृक्ष से प्राप्त कुसुमी बीहन लाख जिसे बेर वृक्ष पर कीट संचारण हेतु उपयोग किया गया है उसे बिना छीले लकड़ी सहित बेचा जा सकता है। ऐसी कुसमी लाख की टहनी जो बीहन योग्य नहीं है उसे एवं रंगीनी अरी लाख को छीलकर विक्रय करना चाहिये। इसे चाकू या छोटी दावली से खुरच कर अलग कर सकते हैं। छिलाई इस तरह करना चाहिये के टुकड़े बड़े आकार के मिले एवं चूरा कम से कम हों सूखे लाख डंडी की छिलाई मशीन द्वारा भी किया जाता है हस्तचलित एवं बिजली से संचालित दोनों की मशीने बाजार में उपलब्ध हैं।

बेर वृक्ष पर लाख खेती के आय–व्यय का विवरण

रंगीनी लाख

अधिकतर क्षेत्रों में बेर वृक्ष का उपयोग ग्रीष्मकालीन अरी लाख (बैसाखी अरी) उत्पादन हेतु करते हैं जिसकी फसल कटाई मई या जून के प्रारम्भ में की जाती है। बेर के औसत आकार के 100 वृक्षों पर लगभग रू. 54,000 प्रति वर्ष खर्च करके रू. 1,60,000 की आमदनी हो सकती है। इस रू. 54,000 में लगभग रू 24,000 मजदूरी पर खर्च होता है यदि कृषक स्वयं कार्य करता है तब यह खर्च नहीं होगा। उपयोग होने वाले सामान पर लगभग रू 22,600 का व्यय होता है एवं शेष व्याज पर। मजदूरी को शामिल करके लगभग रू 1,06,000 का शुद्ध लाभ प्राप्त हो सकता है बिना मजदूरी के इस लाभ का आकलन लगभग रू 1,30,00 किया गया है। इस प्रकार शुद्ध लाभ, कुल लागत का 295 प्रतिशत प्रति वर्ष प्राप्त हो सकता है। बाजार में लाख के मूल्य में अत्याधिक उतार–चढ़ाव के कारण इस विवरण में भिन्नता आ सकती है।

कुसमी बीहन लाख

ऐसे क्षेत्रों में जहॉ बेर वृक्ष के साथ कुसुम वृक्ष भी उपलब्ध है वहॉ बेर पर कुसुमी बीहन लाख का उत्पादन किया जा सकता है जिसे जनवरी–फरवरी माह में काटते हैं। 100 वृक्ष से रू 65,000 प्रतिवर्ष खर्च करके जिसमें लगभग रू 18,750 मजदूरी शामिल है लगभग रू 3,79,000 की आमदनी की सकती है। मजूदरी लेकर प्रतिवर्ष लगभग रू 3,13,000 का शुद्ध लाभ प्राप्त किया जा सकता है। यदि कृषक स्वयं करता है तब मजूदरी छोड़कर लगभग रू 3,12,000 का लाभ प्राप्त कर सकता है। प्रति कि. ग्र. बीहन लाख उत्पादन करने हेतु लगभग रू 16 का खर्च आता है जिससे लगभग रू 209 का लाभ मिलता है। इस प्रकार 100 वृक्ष से कुल लागत का 579 प्रतिशत शुद्ध लाभ प्रति वर्ष मिलता है।

निष्कर्ष

बेर वृक्ष का कोई विशेष आर्थिक महत्व नहीं है साधारण किस्म का बेर काफी दाम में मिलता है लेकिन यह वृक्ष यदि लाख उत्पादन के लिये उपयोग किया जाय इससे काफी अच्छी आमदनी होती है और गॉव जंगल में काफी रोजगार सृजित होते है इन वृक्षों पर लाख खेती करने से कोई विपरीत प्रभाव नहीं होता। इससे मिलने वाली आमदनी गॉव के परिवार को 3–4 माह हेतु भोजन की व्यवस्था हो ही जाती है इस वृक्ष को बंजर भूमि पर भी उगाया जा सकता है धान खेत के मेड़ पर भी लगाकर लाख की खेती आसानी की जा सकती है।

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

भारत में गुड़ उत्पादन : महत्व, वर्तमान स्थिति, बाधक तथा भविष्य

ब्रह्म प्रकाश, लाल सिंह गंगवार, अजय कुमार साह एवं अतुल कुमार सचान

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

गुड़ अत्यंत पोषक खाद्यय पदार्थ है, जिसमें 72–78% सुक्रोज, 5–7% ग्लूकोज, 5–7% फ्रक्टोज एवं लगभग 20% नमी पायी जाती है। एक सौ ग्राम चीनी में मात्र 400 कैलोरी होती हैं, जबकि गुड़ की इतनी ही मात्रा में 383 कैलोरी के साथ–साथ 40–100 मि.ग्रा. कैल्शियम, 1056 मि.ग्रा. पोटैशियम, 70–90 मि. ग्रा. मैग्निशियम, 20–90 मि.ग्रा. फास्फोरस, 19–30 मि.ग्रा. सोडियम, 10–13 मि.ग्रा. लोहा, 0.2–0.5 मि.ग्रा. मैंगनीज, 0.2–0. 4 मि.ग्रा. जस्ता, 0.1–0.9 मि.ग्रा. तांबा व 5.3 मि.ग्रा. क्लोराइड होता है। इसके साथ 3.8 मि.ग्रा. विटामिन ए, 0.01 मि.ग्रा. विटामिन बी1, 0.06 मि.ग्रा. विटामिन बी2, 0.01 मि.ग्रा. विटामिन बी5, 0.01 मि.ग्रा. विटामिन बी6, 7.0 मि.ग्रा. विटामिन सी, 6.5 मि. ग्रा. विटामिन डी2, 113.30 मि.ग्रा. विटामिन ई व 7 मि.ग्रा. विटामिन पीपी) तथा 280 मि.ग्रा. प्रोटीन होता है। रिफाइंड चीनी में जहां मात्र सुक्रोज होती है वहीं गुड़ में सुक्रोज के साथ–साथ लवण व विटामिन भी होते हैं जो चीनी में नहीं होते। अतः गुड़ चीनी से बहुत अधिक लाभकारी होता है।

गुड़ अपने में निहित पौष्टिक गुणों के कारण भारत में ही नहीं, अपितु पूरे विश्व में बहुत लोकप्रिय है। गुड़ को विभिन्न देशों में अलग–अलग नाम से जाना जाता है। चिली, इकवाडोर तथा पेरु में गुड़ को चनकाकाय जापान में कोकूटोय दक्षिण एशियाई देशों में जैगरी व खंडसारीय बोलीविया, होन्डुरस, निकारगुआ, पनामा तथा अन्य देशों में इसे पनेलाय वेनेजुएला तथा कुछ अमेरिकों देशों में पपेलोनय मैक्सिको में पिलोनचिल्लोय ब्राजील व क्यूबा में रापादुराय कोस्टा रिका में डुल्स ग्रेनुलादोय इटली में सागूय स्पेन में एजुकर मोर्रनोंय जर्मनी, फिनलैंड व आयरलैंड में जैगरी नाम से जाना जाता है जो वे परंपरागत मीठे पदार्थ हैं जो गन्ने से चीनी के अतिरिक्त बनाए जाते हैं तथा जो चीनी तथा शीरा के प्राकृतिक मिश्रण हैं।

बीसवीं शताब्दी के आरंभ तक जब तक आधुनिक चीनी मिलों की स्थापना नहीं हुई थी, लगभग सभी उत्पादित गन्ना गुड़ बनाने में ही प्रयुक्त किया जाता था। तीव्र शहरीकरण तथा बढ़ते औध्योगीकरण के कारण आज रिफाइंड चीनी का उत्पादन बढ़ता जा रहा है। प्राकृतिक विटामिनों तथा खनिज लवणों के प्रचुर स्त्रोत होने के बावजूद गुड़ दौड़ में पिछड़ता चला गया। 1980 के दशक में 85.2 लाख टन गुड़ उत्पादित किया गया था परंतु अब गुड़ उत्पादन घटकर लगभग 45 लाख टन रह गया है। इसी प्रकार वर्ष 2000–2010 के मध्य प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष गुड़ की उपलब्धता 10.69 कि.ग्रा. थी जो अब घटकर 6.3 कि.ग्रा. प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष रह गयी है। परंतु नगरवासियों में स्वास्थ्य की बढ़ती जागरूकता से एक बार फिर गुड़ का महत्व समझा जाने लगा है। विश्व के कुल गुड़ उत्पादन का 70% भारत में ही पैदा होता है। स्वस्थ तथा स्वादिष्ट खाध्य पदार्थों की मानव की खोज सदैव जारी रहेगी परंतु स्वास्थ्यप्रद खाध्य पदार्थों में गुड़ का महत्व बढ़ता ही जाएगा जिससे देश में खाध्य सुरक्षा के साथ साथ पोषण सुरक्षा भी सुनिश्चित हो सकेगी। आज गुड़ उद्योग के आधुनिकीकरण की आवश्यकता है जिससे ग्रामीण भारत में भी रोजगार के नए अवसर सृजित हो सकें।

आज भारत में लगभग 44 लाख हेक्टेयर क्षेत्र में 70 टन/हेक्टेयर की औसत उत्पादकता के साथ 3070 लाख टन गन्ने का उत्पादन होता है। राष्ट्रीय स्तर पर कुल उत्पादित गन्ने का लगभग 20% तथा उत्तर प्रदेश राज्य के स्तर पर लगभग 40% गन्ना गुड़ उत्पादन हेतु ही प्रयुक्त किया जाता है। शेष मात्रा चीनी उत्पादन, बीज, चारा व चूसने के काम आती है। उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु, बिहार, हरियाणा व पंजाब गुड़ बनाने वाले प्रमुख राज्य हैं जहां पर देश के कुल गुड़ उत्पादन का 75% से अधिक पैदा होता है। उत्तर प्रदेश में सर्वाधिक गुड़ प्रसंस्करण इकाईयां पश्चिमी उत्तर प्रदेश में हैं। इसके बाद पूर्वी तथा मध्य उत्तर प्रदेश का स्थान है। उत्तर प्रदेश में मुजफ्फरनगर व हापुड़, पंजाब में जालंधर, हरियाणा में अंबाला, आंध्र प्रदेश के विशाखापट्टनम का अनकापल्ली, तमिलनाडु में वेल्लुर, पश्चिम बंगाल में कोलकता व पश्चिम महाराष्ट्र में कोल्हापुर व मुंबई भारत में विभिन्न प्रकार के गुड़ के प्रमुख बाजार हैं। वर्ष 2015–16 में भारत से 144 देशों को 2.92 लाख टन गुड़ जिसका मूल्य 1289.25 करोड़ था, का निर्यात किया गया। नाइजीरिया, नेपाल, संयुक्त अरब अमीरात, केन्या, सूडान, संयुक्त राज्य अमेरिका, म्यांमार, तंजानिया, मलेशिया व इन्डोनेशिया भारतीय गुड़ के प्रमुख आयातक राष्ट्र थे। भारत में गुड़ उत्पादन एक श्रम प्रधान व मौसमी व्यवसाय है।

भारत के ग्रामीण क्षेत्र में 65% से अधिक जनसंख्या निवास करती है तथा अधिकांश जनसंख्या कुपोषण की समस्या से ग्रस्त रहती है । भारत ने भोजन की कमी से तो निजात पा ली है परंतु कुपोषण की समस्या अभी भी मुंह बाए खड़ी है। अतः गुड़ व गुड़ आधारित मूल्य संवर्धित उत्पाद पोष्टिकता की नजर से अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। इन उत्पादों में ठोस, द्रव तथा दानेदार गुड़ व गुड़ चॉकलेट कुछ उल्लेखनीय नाम हैं। 80% गुड़ ठोस अवस्था में बनाया जाता है जबकि शेष 20% मात्रा द्रव या दानेदार अवस्था में बनाई जाती है ।

ग्रामीण क्षेत्रों में प्राकृतिक रूप में मीठे पदार्थ के रूप में पाये जाने वाला गन्ने का रस एक अत्यंत महत्वपूर्ण पदार्थ है जिससे

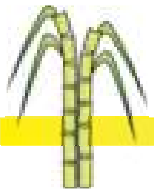

साफ–सुथरे तरीके से गुणवत्तापूर्ण गुड़ तथा गुड़ आधारित विभिन्न मूल्य संवर्धित उत्पाद बनाए जा सकते हैं जिससे खाध्य एवं पोषण दोनों प्रकार की सुरक्षा सुनिश्चित की जा सकती है। अति शीघ्र पकने वाली, कम रेशे वाली तथा उच्च शर्करा वाली गन्ने की प्रजातियाँ गुड़ उत्पादन के लिए उपयुक्त होती हैं। उत्तर प्रदेश में गुड़ बनाने के लिए कोशा 687, कोशा 767, कोशा 88230, कोशा 8436, को 95255, को 94257, कोलख 94184, कोलख 9709, कोलख 07201, को 1148, कोशा 767, बीओ 91, कोशा 92254, कोसे 92423, कोशा 8432, कोशा 08279 (सहज), कोसे 08457, कोशा 08276, कोशा 96275 तथा कोशा 08272 व यूपी 39 प्रजातियों की संस्तुति की जाती है। मोतीपुर (बिहार) में किए गए अध्ययन में गन्ने की को 86309, को 89029, को 89030, कोसे 84233, कोसे 84234, कोसे 84235 व बीओ 111 प्रजातियों से बने गुड़ की गुणवत्ता उच्च कोटि की पायी गयी । महाराष्ट्र में गुड़ बनाने के लिए को 92005 बेहतर पायी गयी है। आंध्र प्रदेश में अगेती किस्मों में कोए 06321, कोए 08323, कोए 09321, कोए 92081, को 6907 तथा कोक 01061 तथा मध्य देरी परिपक्वता अवधि समूह में कोए 05323, कोए 05322, कोवी 92102, को 7219 तथा को 86249 बेहतर पाई गयी हैं।

देश के विभिन्न भागों में एक, दो व तीन कड़ाही वाली भट्टियों पर गन्ने का रस निकालकर, गरम करके, उबालकर व गाढ़ा करके गुड़ बनाया जाता है। उत्तर प्रदेश में गुड़ बनाने हेतु तीन कड़ाही वाली भट्टियाँ ही अधिक प्रचलित हैं। ठोस, द्रव तथा दानेदार गुड़, विटामिन सी युक्त गुड़, गुड़ की बर्फी व गुड़ की चॉकलेट बनाने हेतु गन्ने से निकाले गए ताजे रस को छानकर दो या तीन कड़ाहों वाली भट्टी में डाला जाता है तथा गन्ने की पत्तियों व लकड़ी आदि जलाकर रस को गरम किया जाता है। कई जगह गुड़ बनाने में कुछ लोग हाइड्रोज (सोडियम हाइड्रो सल्फाइट), सोडियम फोरमलडिहाइड, सल्फोक्सिलेट (चक्के), सोडियम बाईकार्बोनेट (बेकिंग सोडा), सोडियम कार्बोनेट (कपड़े धोने वाला सोडा), सुपर फॉस्फेट, फास्फोरिक अम्ल, फिटकिरी, सेलिसिलिक अम्ल व चूना जैसे रसायनों का प्रयोग करते हैं। हाइड्रोज व कपड़े धोने वाले सोडा का तो मानव स्वास्थ्य पर अत्यंत प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। हाइड्रोज व चक्के के प्रयोग द्वारा बने गुड़ में 500 पीपीएम से अधिक सल्फर डाइऑक्साइड होता है जो भारतीय मानक (50 पीपीएम) की सीमा से अत्यंत अधिक है। सल्फर डाइऑक्साइड की अधिक मात्रा आंतों में उपस्थित लाभकारी जीवाणुओं के लिए हानिकारक होती है जिससे पाचन संबंधी समस्याएँ व गेस्ट्रो की समस्याएँ उत्पन्न हो जाती हैं। गन्ने के रस को साफ करने हेतु देवला, भिंडी, सेमल, फालसा, अलसी, मूँगफली, सुखलाई जैसे वानस्पतिक स्त्रोतों का प्रयोग किया जाता है। कुछ लोग सोयाबीन पाउडर के साथ मोनोकैल्शियम फास्फेट का भी प्रयोग करते हैं। हल्के रंग का गुड़ बनाने हेतु रस को भिंडीध्देवला के रस / 45 ग्राम/100 कि.ग्रा. रस की दर से प्रयोग करके रस से गंदगी साफ करके, द्रव गुड़ बनाने हेतु 103–1080 सेल्सियस तापमान पर, ठोस गुड़ के लिए 114–1180 सेल्सियस तापमान पर तथा दानेदार गुड़ बनाने हेतु 120–1220 सेल्सियस तापमान पर गरम किया जाता है। द्रव गुड़ में क्रिस्टल बनने से रोकने हेतु इसमें पोटैशियम मेटाबाइसल्फाइट को 0.1% की दर से या बेंजोइक अम्ल/0.5% मिलाकर तथा सामान्य तापक्रम 8–10 दिनों तक रखकर रस को छानकर जीवाणुरहित बोतलों में भर लिया जाता है। ठोस गुड़ के क्यूब्स अथवा बर्फी के आकार के टुकड़े बनाने हेतु गाढ़ी स्लरी को 2.5 से.मी. क्यूब्स के लिए 1.25 x 1.25 x 2.5 से.मी. मोल्डिंग फ्रेम में डाला जाता है। ठंडा होने पर इसे पोलिएथिलीन पॉलिएस्टर पैकेट में भर लिया जाता है। दानेदार गुड़ बनाने हेतु गाढ़ी स्लरी को लकड़ी के स्क्रेपर के साथ रगड़कर ठंडा करके तथा 3 मि.मी. से छोटे छेद वाली चलनी से छानकर, सुखाकर तथा पोलिएथिलीन पॉलिएस्टर की थैलियों अथवा बोतलों में भर लिया जाता है। गुड़ के पाउडर के आकार तथा पैकेजिंग का भंडारण पर पड़ने वाले प्रभाव के अध्ययनों में 3 मिलीमीटर से छोटे आकार तथा 300 गौज की पोलिथीन में पैकेजिंग सबसे उपयुक्त पायी गयी है। नमी सोखने की प्रवत्ति के कारण गुड़ का भंडारण नमीध्वर्षा की दशाओं में मुश्किल कार्य होता है जिससे गुड़ के भौतिक, रसायनिक व सूक्ष्मजैविक दशाओं पर कुप्रभाव पड़ता है। चीन व ब्राजील में गुड़ के दीर्घकालीन भंडारण हेतु काओलिनाइट (सोडियम चीलेटिंग कारक), स्टीवोसाइड, जिंजरी अम्ल व फ्लेवोनोइड को अकेले या संयोगों में प्रयोग किया जाता है।

विटामिन सी संवर्धित गुड़ की टिक्की बनाने के लिए गुड़ की स्लरी में कटे हुए आवले को मिलाया जाता है। पिघले गुड़ में कोको पाउडर व शुद्ध घी मिलाकर, सुखाकर व पैक करके गुड़ की चॉकलेट बनाई जाती है। भारत में गुड़ से कई नवोन्मेशी व्यंजन जैसे गुड़ धनिया, मिक्स चना गुड़ बर्फी, गुड़ राइस कप केक, गुड़ नारियल बर्फी, बहुदानों के रोल, पूरणपोली, रामदाना, तिल व लईया के लड्डू, पट्टी, रागी नारियल लड्डू, खट्टी मीठी फलियाँ, पनासा थोनालु, मेंगों पचड़ी, पूर्णन बोरेलू, मटकी ची ऊसल, जमाइकन टोर्टे स्पंज केक, मलबारी प्रोन करी व बिस्सी बेले भाथे जैसे अनेक व्यंजन बनाए जाते हैं।

मानव शरीर के लिए अत्यंत उपयोगी

एक स्वच्छकारी कारक होने के कारण गुड़ रक्त साफ करता है तथा मुहासे व दानों से दूर रखकर त्वचा को स्वस्थ रखता है। गुड़ के नियमित प्रयोग से श्वसन नलिकाएँ, फेफड़े, अग्नाशय, आमाशय व आँतें साफ रहती हैं। इसके प्रयोग से बच्चे के जन्म के बाद 40 दिनों के भीतर महिला के शरीर से रक्त के सभी थक्के निकल जाते हैं। सर्दी तथा खांसी में गुड़ के प्रयोग से बलगम निकल जाने से श्वसन नलिका से धूल व अन्य प्रदूषक साफ हो जातें हैं जिससे मनुष्य अस्थमा व ब्रोंकाइटिस के प्रकोप से बच जाता है। मैगनीशियम का प्रचुर स्त्रोत होने के कारण गुड़ हमारे तंत्रिका तंत्र को मजबूत बनाता है तथा हमारी मांसपेशियों को आराम देने में सहायता करता है। सेलेनियम की उपस्थित गुड़ को एक अच्छा एंटीओक्सीडेंट बनाती है। गुड़ में उपस्थित पोटैशियम व सोडियम शरीर की कोशिकाओं में अम्ल का संतुलन बरकरार रखते हैं तथा रक्त वाहिकाओं को आराम देकर उच्च

रक्तचाप का नियमन करतें हैं। गुड़ में पाया जाने वाला फिनोल्स भी शक्तिशाली एंटीओक्सीडेंट की तरह प्रभाव डालते हैं तथा कई प्रमुख रोगों के विरुद्ध अवरोधिता उत्पन्न करते हैं। कैल्शियम, फास्फोरस व जस्ते के मध्यम स्त्रोत होने के कारण गुड़ गठिया रोकने तथा पित्त की गड़बड़ियों को सही करता है। अच्छा पाचक कारक होने के कारण गुड़ पेट में एसीटिक अम्ल में बदलकर भोजन के शीघ्र पाचन में मदद करता है। इसी कारण अधिक भोजन के बाद थोड़ा गुड़ खाने की सलाह दी जाती है। कार्बोहाइड्रेट का अच्छा स्त्रोत होने के कारण गुड़ का पाचन व अवशोषण धीरे–धीरे होता है तथा यह धीरे–धीरे बहुत देर तक ऊर्जा देता रहता है जिससे किसी आंतरिक अंग को भी कोई नुकसान नहीं होता है। गुड़ की इसी विशेषता के कारण प्राचीन समय से भारत में थके–हारे मनुष्यों को पानी के साथ गुड़ देने की परंपरा रही है क्योंकि यह मांसपेशियों व तंत्रिकाओं को आराम पहुंचाकर थकान से मुक्ति दिलाता है। प्रोटीन का अच्छा स्त्रोत तथा सोडियम की कम मात्रा के कारण गुड़ शरीर में अम्लों का संतुलन बरकरार रखता है।

कई अन्य अवयवों के साथ गुड़ का सेवन करने से गुड़ के औषधीय गुणों में वृद्धि हो जाती है। काली मिर्च, पिसे तिल के बीज, दूध, सरसों का तेल व सोंठ आदि के साथ गुड़ के सेवन से कई शारीरिक विकारों में लाभ मिलता है। गुड़ तथा सोंठ की आधी चम्मच मात्रा को गरम पानी के साथ सेवन करने से हिचकी में बहुत आराम मिलता है। एक चम्मच गुड़ के साथ थोड़ी सी काली मिर्च को गरम पानी के साथ सेवन करने से खांसी में राहत मिलती है। भोजन करने के बाद 10 ग्राम गुड़ चबाने से गैस नहीं बनती तथा पेट भी ठीक रहता है। पिसे तिल के बीजों के साथ गुड़ को दूध की कुछ बूंदों के साथ मिलाकर बने पेस्ट को माथे पर लगाने से तनाव, सिरदर्द व माइग्रेन के दर्द में राहत मिलती है। एक चम्मच गुड़ के सुबह–शाम सेवन से कमजोरी तथा एनीमिया दूर हो जाता है। गुड़ को सरसों के तेल के साथ चाटने से अस्थमा व सूखी खांसी में अत्यंत आराम मिलता है। पेट के कीड़े मारने वाली किसी भी दवा के खाने से पूर्व थोड़ा सा गुड खाने से पेट के कीड़े आसानी से निकल जाते हैं। गुड़ सबसे सस्ता पौष्टिक स्वास्थ्य टॉनिक है जिसे गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले व्यक्ति भी खा सकते हैं। आज एनीमिया पौष्टिक भोजन न खाने से होने वाली प्रमुख बीमारी है जो ग्रामीणों विशेषतया महिलाओं एवं बच्चों में बहुत गंभीर समस्या के रूप में पायी जाती है। लौह तत्व का प्रचुर स्त्रोत होते के कारण गुड़ एनीमिया के विरुद्ध लड़ाई में सबसे सशक्त अस्त्र के रूप में कार्य करता है। अतः स्वस्थ जीवन के लिए गुड़ का नियमित उपयोग अत्यंत आवश्यक है। डाइटीशियन भी आजकल भोजन में गुड़ को सम्मिलित करने की सलाह देते हैं।

धूल तथा धुएंदार वातावरण में काम करने वाले श्रमिकों में फेफड़ों की नाना प्रकार के बीमारियाँ हो जाती हैं। गुड का नियमित सेवन इन श्रमिकों को फेफड़ों के रोगों से बचाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। जैव चिकित्सा तथा जैवप्रोध्योगिकी क्षेत्र में सिलिका नैनोंपार्टिकिल्स का प्रयोग बढ़ जाने से इसकी विषाक्तता का प्रभाव फेफड़ों, यकृत तथा गुर्दों के ऊतकों पर बुरी तरह से पड़ रहा है। गुड़ के जलीय घोल की 400 व 800 मिलीग्रामधकिलोग्राम शरीर भार की दर से प्रयोग करने पर सिलिका नैनोंपार्टिकिल्स का दुष्प्रभाव कभी हद तक कम हो जाता है। भारत के विभिन व्यंजनों तथा कई आयुर्वेदिक औषधियों के निर्माण में गुड़ का प्रयोग प्राचीन काल से किया जाता रहा है। आज गुड़ चीनी का विकल्प मात्र नहीं है अपितु इसमें अनेक औषधीय गुण होते हैं। आयुर्वेद की मुख्य दवाओं 'आसव' तथा 'अरिष्ट' तथा पीने वाली दवाओं का आधार गुड़ ही है। इन दवाओं में प्राकृतिक रूप से स्वतः बनने वाला 5–12% तक अल्कोहल होता है। 'दशमूलारिष्ट व 'अशोकारिष्ट' अरिष्ट तथा 'कुमार्यासव' आसव का अच्छा उदाहरण हैं। इन आसव व अरिष्ट को बनाने हेतु गुड़ को स्त्रोत के रूप में प्रयोग किया जाता है। औषधियों में प्रयुक्त होने वाले कुछ शाकों के प्राकृतिक ईस्ट के रूप में प्रयुक्त होने के कारण गुड़ में उपस्थित सुक्रोज अल्कोहल में परिवर्तित हो जाता है। इस परिवर्तन की प्रक्रिया में जल तथा अल्कोहल में घुलनशील अवयव घुलकर द्रव का रूप ले लेते हैं तथा 1–2 माह के समय में औषधि तैयार हो जाती है। गुड़ वात तथा पित्त में संतुलन बनाने, रक्त को स्वच्छ रखने, पाचन तंत्र को सुधारने, आंतों को साफ करने तथा हृदय को मजबूती प्रदान करने में सहायक होता है।

पशुओं के लिए भी उपयोगी

मनुष्यों के अतिरिक्त पशु पालन में भी गुड़ का उपयोग प्राचीन काल से किया जाता रहा है। उत्तर प्रदेश में गाय–भैंस के ब्याहने के बाद, भोजन की विषाक्तता, निमोनिया तथा दुग्ध देने वाले पशुओं के दुग्ध की मात्रा बढ़ाने हेतु गुड़ का प्रयोग किया जाता है। ब्याहने के बाद पशुओं में उबले बाजरे या जौ के साथ गुड़ का मिश्रण दिया जाता है। चारा विषाक्तता में अदरक, काली मिर्च, बड़ी पीपली, हड़, काली जीरी तथा बांस की पट्टियों के साथ गुड़ देने से तुरंत लाभ मिलता है। निमोनिया के इलाज में अदरक, काली जीरी के साथ गुड़ दिया जाता है। पशुओं में दूध की मात्रा बढ़ाने तथा दूध में वसा की मात्रा बढ़ाने के लिए भीगे चनों के साथ गुड़ दिया जाता है।

गुड़ उत्पादन में प्रमुख बाधाएँ

कम उत्पादन लागत तथा पोषकता की अपार संभावनाओं के बावजूद गुड़ उद्योग उपभोक्ताओं द्वारा गुड़ के लगातार घटते उपभोग के कारण सिमटता जा रहा है। गत वर्षों में गुड़ की कम स्वीकार्यता व उत्पादकता के प्रमुख कारणों में प्रसंस्करण के दौरान उचित साफ–सफाई का अभाव, साधारण प्रस्तुतीकरण, भंडारण हेतु कम अवधि तथा गुड़ उधयोग के आधुनिकीकरण व विपणन हेतु सरकार के सहयोग की कमी उल्लेखनीय हैं। छोटे, मध्यम व बड़े, तीनों ही श्रेणी के गुड़ निर्माता कम लाभ, प्रसंस्करण की कम कार्यकुशलता, परिवहन, कच्चे माल की ऊंची लागत तथा शोध एवं विकास के पर्याप्त सहयोग न मिलने की समस्याओं से जूझ रहे हैं। गुड़ उधयोग एक श्रम प्रधान उधयोग है। गन्ने की कटाई से लेकर गुड़ की मोल्डिंग करने तक गुड़ बनाने की

इकाई के अनुसार बड़ी संख्या में श्रमिकों (20–25) की आवश्यकता होती है। किसानों को आस–पास के क्षेत्रों से इन कुशल श्रमिकों को अग्रिम भुगतान करके ऊंची मजदूरी पर रखना पड़ता है जिसके कारण कई प्रमुख स्थानों पर गुड़ संयन्त्रों की संख्या में अत्यंत कमी आई है। गुड़ संयन्त्रों की मशीनरी घरेलू कारीगरों द्वारा बनी होने के कारण बहुत कम उत्पादकता कुशलता दर्शाती है। यध्यपि कोल्हू निर्माता अपने कोल्हू द्वारा गन्ने से 70: रस निकाल लेने का दावा करते हैं परंतु वास्तव में 55–58: से अधिक रस नहीं निकल पाता है जिससे गुड़ बनाने वाले उध्यमिओं को पर्याप्त लाभ नहीं हो पाता है। परंपरागत तथा अकुशल रस को गरम करने वाली प्रणाली के कारण किसानों को खोई के ईधन की कमी भी महसूस होती है जिस कारण वे लकड़ी या कभी–कभी खराब टायर तक जलाकर गन्ने के रस को गरम करते हैं। वर्षा भी प्रसंस्करण सत्र में कई प्रकार की बाधाएं उत्पन्न करती है। गन्ने के उत्पादन तथा गुड़ प्रसंस्करण में कच्चे माल की बढ़ती लागत के साथ ही साथ बाजार में गुड़ के मूल्य की अनिश्चितता लाभ के मार्जिन को कम कर देती हैं। गुड़ में नमक व रिड्यूसिंग शर्करा की उपस्थित के कारण गुड़ की प्रवत्ति नमी सोखने की हो जाती है जिससे इसकी भंडारण अवधि कम हो जाती हैं। भंडारण के लिए उचित संयन्त्रों की अनुपलब्धता के कारण गुड़ निर्माताओं को गुड़ बेचने की जल्दी रहती है जिस कारण वे किसी भी मूल्य पर गुड़ बेचने को मजबूर हो जाते हैं।

प्रजातीय विकास कार्यक्रम में गुड़ कभी भी प्रमुख मुद्दा बनकर नहीं उभरा। खेती हेतु संस्तुत गन्ने की प्रजातियों में ही गुड़ बनाने हेतु उपयुक्त किस्म की पहचान की जाती रही है। असंगठित क्षेत्र के कुटीर उद्योग के अंतर्गत छोटी–छोटी इकाइयों द्वारा गुड़ का उत्पादन किए जाने के कारण गुड़ उधयोग की आवश्यकताओं पर कभी उचित ध्यान नहीं दिया गया। गुड़ के लिए गन्ने की उपयुक्त किस्म में रस परता, सुक्रोज की मात्रा, परिपक्वता अवधि, रस की स्वच्छता तथा रिड्यूसिंग शर्करा का प्रतिशत पर उचित ध्यान देना होगा। वास्तव में गुणवत्तापूर्ण गुड़ उत्पादन हेतु गन्ने की बहुत कम प्रजातियाँ आनुवांशिक लक्षणों की कसौटी पर खरी उतर पाती हैं तथा कोई भी किस्म गुड़ बनाने के उद्देश्य से विकसित नहीं की गयी है। गुणवत्तापूर्ण गुड़ उत्पादन हेतु गन्ने की ऐसी किस्में विकसित करने की आवश्यकता है जिनमें रेशे की मात्रा कम हो, रस हल्के रंग का हो व उसमें कोल्लोइडल सस्पेंशन कम हो, सुक्रोज की मात्रा अधिक हो एवं इनवर्टेड शर्करा की मात्रा कम हो। गुड़ के भंडारण व पैकेजिंग आज भी एक बड़ी समस्या है क्योंकि सामान्य तापमान पर भंडारण करने पर गुड़ के रंग, सुगंध, संरचना व स्वीकार्यता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। आज का समय गुणवत्ता, सफाई व मानकीकरण का है। अतः इनपर ध्यान न देने पर अंतर्राष्ट्रीय बाजार के साथ–साथ घरेलू बाजार में भी इसकी बिक्री सुलभ नहीं है। गुड़ प्रसंस्करण में अभी भी बाप–दादाओं के समय की प्रोध्योगिकी प्रसंस्करण हेतु प्रचलित है। अतः प्रसंस्करण की पूरी प्रक्रिया को स्वीकार्य योग्य बनाने तथा गुणवत्ता के मानकों को पूरा करने हेतु गुड़ उत्पादन प्रोध्योगिकी को रस निकालने से गुड़ की मोल्डिंग तक की सभी प्रक्रियाओं में आमूलचूल परिवर्तन करना होगा। इस लघु एवं कुटीर उधयोग को रोजगार, पोषकता तथा निर्यात संभावनाओं की द्रष्टि से ग्रामीण समुदाय पर सार्थक प्रभाव डालने के कारण शोधकर्ताओं, अभियन्ताओं तथा निर्यातकों को ध्यान देने की आवश्यकता है।

गुड़ उद्योग का भविष्य

श्रमिकों की समस्या से निपटने तथा सफाई से गुड़ उत्पादन करने हेतु 50 टन से कम प्रति दिन गन्ना पेरने वाले अर्ध या पूर्णरूप से औटोमेटिक गुड़ प्रसंस्करण संयंत्र की आवश्यकता है। लघु स्तरीय किसानों हेतु 70: से अधिक रस निष्कर्षण क्षमता वाले गियर बॉक्स टाइप क्षैतिज रोलर क्रशर की आवश्यकता है। खोई व अन्य ईधन की मितव्यता हेतु इनके पूर्ण ज्वलनशीलता तथा कुशल भट्टियों की आवश्यकता है जिससे बहुमूल्य खोई बचाई जा सके व जिसे बेचकर अतिरिक्त मौद्रिक लाभ कमाया जा सके। वर्षा ऋतु में खोई के गीले होने की समस्या के समाधान के लिए खोई की ईंटें बनाने की कोशिश की जा सकती है। गुड़ को सामान्य गुड़ के आधार पर विभिन्न मूल्य संवर्धित उत्पादों के रूप में जैसे बेकरी उत्पाद, केक, बिस्कुट, जैम, चॉकलेट, कौनफैककष्नरी तथा कोल्ड ड्रिंक्स में गुड़ का प्रयोग करके चीनी का प्रयोग कम किया जा सकता है। भंडारण में गुड़ का 10–25: क्षति होना बहुत बड़ी समस्या है। उच्च भंडारण, सस्ते भंडारण संयंत्र व गुणवततापूर्ण पैकेजिंग जैसे मुद्दों को प्रोध्योगिकी के विकास से सुलझाया जा सकता है।

चिंता का विषय है कि इतना लाभकारी होने के बावजूद गुड़ का उपभोग प्रति वर्ष कम होता जा रहा है। बच्चों को अधिक गुड़ खाने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। गुड़ उपभोग को चीनी के उपभोग की तुलना में निम्न स्तर के मानने के भ्रम को मिटाने का भी प्रयत्न करना चाहिए। भारत के गरीब ग्रामीणों के लिए गुड़ आधारित औषधि के रूप में सस्ता भोज्य पदार्थ को शीघ्र लोकप्रिय करने के लिए सरकार को स्कूली बच्चों हेतु 'मिड डे मील' के रूप में बढ़ावा देने, गुड़ के महत्व को समझने के लिए जागरूकता कार्यक्रम आयोजित करने तथा मूल्य संवर्धन में उधयोग जगत का सहयोग बढ़ाने की नितांत आवश्यकता है। हर्ष का विषय है कि महाराष्ट्र व कर्नाटक राज्य सरकारों ने गुड उधयोग को सहायता पहुँचने के उद्देश्य से कई सकारात्मक कदम उठाए हैं। महाराष्ट्र सरकार ने कोल्हापुर में 'जैगरी क्लस्टर' अनुमोदित किए हैं जिसमें उन्नत संयंत्र, जैविक गुड का सफाई से उत्पादन, एकत्रण, पैकिंग व भंडारण किया जाएगा।एपीएमसी, कोल्हापुर ने कोल्हापुर में गुड़ को अपनी विशेष गुणवत्ता दर्शाने के लिए जी.आई. टैग हासिल कर लिया है। कर्नाटक में भी राज्य सरकार ने राज्य कृषि विश्वविध्यालयों को 'गुड़ पार्क' विकसित करके गुड़ उत्पादकों को प्रशीक्षित करने के लिए अनुदान भी दिया है। इसी योजना के अंतर्गत मांड्या तथा संकेश्वर में आधुनिक गुड़ संयंत्र लगाए गए हैं। इस प्रकार, भारतीय गुड़ का भविष्य अत्यंत उज्जवल है तथा भारत में इस उपयोग में अपार संभावनाएं हैं।

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

भारतीय विद्या में जल शुद्धि पर विचार

कृष्ण मुरारी सिंह 'किसान'
ग्राम–बरमा, पोस्ट–कैथावाँ वाया–सिरारी, जिला–शेखपुरा, बिहार

शुद्धा न आपस्तन्वेऽक्षरन्तु यो नः सेदुरप्रिये तं नि दध्मः
पवित्रेण पृथिवी मोत पुनामि ।।–अथर्ववेद 1/12/130

शुद्ध पवित्र जल के लिए यह अथर्वा ऋषि की प्रार्थना है। शुद्ध जल दिव्योपहार रूप द्युलोक का मृत्युलोक के लिए है। प्रजापति परिमेष्ठिन के द्वारा वरदान में यह उपहार बहुल परिमाण में त्रिभुवन चराचर के लिए सृजित किया गया, किन्तु विडम्बना यह है कि आज शुद्ध जल दुलर्भ है। पृथ्वी पर दि प्रतिदिन बढ़ती हुई जलसंख्या से मानवीय आवश्यकता हमारा अनिवार्य प्राथमिक कर्तव्य है।

धर्मार्थकाममोक्षेषु नाशुद्धस्य गतिर्मता।
तस्माद्देहो मनश्चितं सर्वयत्नेन शोधयेत्।।

किसी कार्य में प्रवृत्ति के लिए मन और शारीरिक शुद्धता की आवश्यकता होती है। ऐसा लोकानुभव और शास्त्र से मालूम होता है और शुद्धि ही संस्कार है। शरीर और द्रव्य की शुद्धि के लिए जल की अपेक्षा होती है और वह मूलरूप से अन्तरिक्ष में स्थित शुद्ध होता है, किन्तु पृथ्वी पर देश काल की अपेक्षा से नाना प्रदूषणों से व्याप्त होता है। आकाश से भूमि पर आया हुआ जल पांचभौतिक होने से लोक में स्थावर–जंगमों के द्वारा प्रयुक्त पंचमहाभूतों के संयोग विशेष से परिपाक (रासायनिक संयोग) प्राप्त होता है। और उससे शड्रसात्मक होता है। पार्थिव वर्णगन्धादि गुणों के संयोग से जल में भी तद्गन्ध और वर्णादि विलीन हो जाते हैं। जल ही सार्वभौम विलायक होता है। इसलिए वर्षा के अतिरिक्त जल सर्वथा शुद्ध और निर्मल रासायलिक क्रियाओं के द्वारा सापेक्ष शुद्धि को प्राप्त होता है। इसलिए उनका उपभोग विवेक पूर्वक किया जाना चाहिए। क्योंकि 'अमेध्यं न प्रयुंजीत' अर्थात् अशुद्धि का प्रयोग न करें। ऐसा नियम है। विविध सांसर्गिक कारणों, के द्वारा जल में विलीन मल स्वाभाविक रूप से दूर नहीं होता है। इसलिए उन मलों का शोधन अपेक्षित है।

पृथ्वी पर ऊँचे पर्वतीय प्रदेशों में और हिमालय पर पड़ते हुए वह निर्मल केवल अपने गुण वाला जल वानस्पतिक रसायनों के के द्वारा रसायनमुक्त किया हुआ नीचे की ओर प्रवहशील होकर जब नदी – झरनों के द्वारा भूप्रदेशों में लोगों के द्वारा उपयोग में लाया जाता है, तब विभिन्न शुद्ध या अशुद्ध पदार्थों के द्वारा अपने गुणों से प्रभावित किया हुआ वह कहीं अशुद्ध होता है और कहीं शुद्ध होता है। तालोबों, जलाशयों, और कुओं में शुद्धता की अपेक्षा अलग–अलग होती है।

यद्यपि दिव्यजल के समान शुद्ध कोई और नहीं होता, किन्तु सामान्यतः भूमि के अन्दर का जल शुद्ध होता है।

भूमि के अन्दर से खींचा गया जल पुण्यतर होता है। क्योंकि वह मिट्टी के रन्ध्रों में प्रविष्ट हो कर वब भूमि के अन्दर जाता है तब बाकरी मल नष्ट हो जाते है और मिट्टियों में स्थित रासायनिक पोषकतत्व दबाब, संचरण आदि के द्वारा मिट्टियों में संचित होते हैं। जब जल भूगर्भ में जाता है, तब वे पोषक तत्व वे पोषक तत्व जल के द्वारा ग्रहण किये जाते हैं। इस प्रकार भूगर्भ से ऊपर को आया कूप आदि का जल मलरहित होता है।

शुद्ध भूमिगत जल

लघुयमस्तुति में कहा गया है कि सम्पूर्ण जल मल से व्याप्त नहीं होता है, तो शुद्ध और पवित्र मानना चाहिए। वस्तुतः दिन में सूर्य की किरणों से तपा हुआ जल कृमि आदि के विनाश से शुद्ध होता है और रात्रि में नक्षत्रों के द्वारा आनन्द तथा हवाओं से तापशान्ति को प्राप्त हो कर शुद्ध होता है। दोनों सन्ध्या समय में भी पवित्र रहता है। जल स्वभाव से ही शुद्ध होता है। इसलिए पात्र में स्थित अथवा भूमि के नीचे स्थित सम्पूर्ण जल पवित्र होता है। इस प्रकार स्वभावतः शुद्धजल के शोधन की आवश्यकता तब तक नहीं होती तब तक कि मल आदि अशुद्ध पदार्थ व्याप्त नहीं होता–

सन्ध्ययोरप्युभाभ्यांच पवित्रं सर्वथा जलम्।
स्वभावयुक्तमव्याप्तममेध्येनसदा शूचि।
भाण्डस्थं धरणीस्थं वा पवित्रं सर्वथा जलम्।।

पराषरस्मृति में भी भूमि के अन्दर स्थित जल को उच्छिष्ट नहीं माना गया है–

भूमिं स्पृष्ट वातं तोयं यश्चाप्यन्योऽयविप्रुषः।
भुक्त्वोच्छिष्टं तथा स्नेहं नोच्छिष्टं मनुरब्रवीत्।।

जलप्रपातों का, तलाबों का, पहाड़ों के नीचे भूमिगत और पत्थरों के नीचे से निकलने वालो जल यदि वर्ण, रस गन्ध और दूषित पदार्थो से रहित हो तो शुद्ध और पवित्र होता है, यह शड़स्मृतिकार का मत है। नदियां तो सारी ही पवित्र है और गंगा पवित्रतम है। नदियों का जल सर्वदा शुद्ध तथा शुद्धि प्रदान करने वाला होता है–

सर्वे प्रस्रवणाः पुण्याः सरांसि च शिलोच्चयाः ।
नद्यः पुण्यतमाः सर्वा जाह्नवी तु विशेषतः ।।
भूमिष्ठमुदकं शुद्धं शुचि तोयं शिलागतम् ।।
वर्णगन्धरसै दुष्टैर्वजितं यदि तद्भवेत।
शुद्धं नदीगतं तोयं सर्वदैव तथाकरम् ।।

नदी का जल निरन्तर प्रवाह के कारण बालू, पत्थर के खण्डों से

और वेग से पवित्र होता ही है, किन्तु वासी जल का पान हानिकारक होता है। आडिगरसस्मृति में उस जल के पान करने पर प्रायश्चित का विधान कहा गया है। पराषरस्मृति में नदी के जल को सर्वदा शुद्धि का कारण उसका निरन्तर प्रवाहशील होना बताया है–

अदृष्टा सन्तता धारा

ऊँचे जलप्रपातों का जल भी शुद्धतर होता है, निरन्तर गतिशीलता के कारण शुद्धता होती है। तालाब का जल जलप्रपात से भी अधिक शुद्ध होता है। तालाब में जल के अविच्छिन स्त्रोत है और वहाँ बहते हुए मल के पियलन क सम्भावना भी बहुत कम होती है। तालाब के जल से अधिक नदी का शुद्ध होता है। वहाँ प्रमुख कारण वेग होता है कहा भी गया है–

नदी वेगेन शुद्ध्यति।

जल में प्रदूषण निम्नरूपों में दिखायीं देता है।

1. पत्ते शैवाल, कीचड़ आदि के द्वारा चिकनाहट।
2. कृमियों की व्याप्ति।
3. वर्णयुक्त द्रव्यों का मिश्रण।
4. गन्धयुक्त हानिकारक पदार्थो का मिश्रण।
5. मल, मूत्र आदि विषों की गन्दगी।
6. रासायनिक द्रव्यों के मिश्रण से उत्पन्न झाग।

जैसा कि चरकसंहिता में बताया गया है–

पिच्छिलं कृमिल क्लिन्न पर्णशैवालकर्दमैः।
विवर्ण विरसं सान्द्रं दुर्गान्धि न हितं जलम्।।

इस प्रकार अष्टडगहृदय में भी कहा गया है–

न पिबेत्पर्णपङ्‌ कशैवालतृणपर्ण विलास्तृतम् ।
फेनिलं जन्तुमत्तप्त लूतादितन्तुविण्मूत्रविषसंश्लेषदूषितम्।।

इस प्रकार अशुद्ध जल अपेय और अनुपयुक्त होता है। अशुद्ध जल से केवल हानि ही होती है, मनुष्यों की और जीव–जन्तुओं की भी संस्कृत वाड्मय में अशुद्ध जल के दुष्प्रभाव का वर्णन इस प्रकार किया गया है–

व्यापन्नं परिहर्त्तव्यं सर्वदोषप्रकोपणम्।
कासाग्निमान्द्यभिष्यन्दिकण्डूगण्डादिकांसत्था।।

अशुद्ध जल के प्रयोग से निम्नलिखित विकार उत्पन्न होते हैं। तृष्णारोग, उदरकष्ट, ज्वर श्वास रोग, खाँसी, अग्निमान्ध, खुजली, गण्डरोग आदि। इसलिए प्रयोग से पूर्व जल की शुद्धि का उपचार करना चाहिए।

दूषित जल से उत्पन्न होने वाले विकार

जो दुर्गुण युक्त जल को पीते है, वे वगन और बहोशी सहित ज्वर, दाह, शोध आदि विकारों से संक्रति होते हैं। दूषित जल के स्नान और पान से तृष्णा, जलन्धररोग, उदर विकार, ज्वर, खाँसी, अग्निमाद्य, नेत्ररोग, खाजखुजली, उदारविकार उत्पन्न होते हैं, कुछ नदियों का जल विशेष रोग पैदा करने वाला होता है ऐसा ऋषि कहते हैं। विशेषरूप से जिन नदियोंका जल क्रम से नहीं बहता है, वे स्थिर नदियाँ होती हैं। इसलिए उनका जल भी स्थिर और दूषित हो सकता है। उस जल से कृमि, फीलपाँव, कण्ठरोग, शिरारोग आदि पैदा होते है ऐसा जानना चाहिए। उसी प्रकार उज्जयिनी के आस–पास के क्षेत्रों में बहती हुई नदियाँ दुजर्नामानि और अशानसि करती है। महेन्द्र पर्वत से उत्पन्न नदियाँ उदररोग, वातोदर और फीलपॉव रोगों को उत्पन्न करती है। सह्माद्रि और विन्ध्य पर्वत उत्पन्न नदियाँ कुष्ठरोग, पाण्डुरोग और षिरोरोग पैदा करती है। दूषित गन्दा पानी अन्य और भी अनेक रोगों को पैदा करता है– सूजन, पाण्डुरोग, चर्मरोग, अपचन, श्वास, खाँसी, जुकाम, जुकाम, शूल, गुल्मोदर आदि। कहा गया है–

जल तो कल्याणकारी, पवित्र और दिव्य होता है, क्योंकि इसमें उपने शोधन की शक्ति सन्निहित होती है। इस प्रकार की शोधन शक्ति प्रवाहयुक्त जलराषियों में अधिक होती है।

ऊँची जल तरंगों और धाराओं के द्वारा जल में प्रवाहित मल हटाया जाता है। प्रवाह के कारण ही नदियों का जल तालाबों के स्थिर जल की अपेक्षा अधिक शुद्ध और पवित्र होता है। नदियों में भी पर्वतीय नदियों का जल अधिक शुद्धतर माना गया है। जैसा अष्टाड्गहृदय में कहा गया है–

उपलास्फालनाक्षेपविच्छेदैः खेदितोकाः।
हिमवन्मलयोद्भूताः पथ्यास्ता एवं च स्थिराः।
कृमिश्लीपदहृत्कष्ठशिरारोगान् प्रकुर्तते।।

वेग आधात से उत्पन्न होने वाले और आधात को उत्पन्न करने वाला होता है। अतः आधात से पार्थिव मल दूर किये जाते है। वेगजन्य मर्दन से जल में कृदुता होती है। आवश्यक परिमाण में लवण स्वाभाविक रूप से नदी के जल में रहता है–

'लवणजलानताः नद्यः' अर्थात् नमकीन जल से युक्त होती है नदियाँ।

इस प्रकार स्वरूप से शुद्ध (रसविशेष से हीन) न होते हुए भी उपयोग की दृष्टि से नदी का जल शुद्ध होता है। नदियों के जल से भी अधिक तीर्थ (स्त्रोत)का जल अधिक शुद्ध होता है। तीर्थ पवित्र जलस्थान नही सरोवर, कुण्ड, कूप आदि में माना जाता है। इनका जल प्राकृतिक रूप से शुद्ध होते हुए भी प्रदूषण को प्राप्त हो रहा है। किन्तु जहाँ तीर्थत्व (पवित्रता) सुरक्षित है, वहाँ आज भी निर्मल और स्वास्थ्यवर्द्धक जल है। तीर्थों से भी अधिक पवित्र गड. ग का जल होता हैं, वह यावज्जीवन पाप को दूर करने वाला और मलनाशक है। ऐसा गरुड़पुराण का मत है–

भूमिष्ठादुद्धतं पुण्यं ततः प्रस्रवणाकिम्।
ततोऽपि सारसं पुण्यं तस्मान्नादेयमुच्यते।।
तीर्थतोयं ततः पुण्यं गाड्गं पुण्यनतु सर्वतः।
समुद्रजलं विस्रं त्रिदोषलवणंचेति सर्वाशुद्धम्।

बहने वाली सभी जलों की विश्रान्ति समुद्र में होती है। इसलिए सभी के प्रदूषणों को धारण कर समुद्र महत्व को प्राप्त करता है। इसी क्रम में श्रेष्ठ, सर्वथा उपयोग योग्य, प्रति पिया जा सकने योग्य अन्तरिक्ष का जल कहा जाता है। किन्तु वर्षा के होने के देष काल की विविधा के कारण यह सम्भव नहीं है तथा न ही वर्षा का संचय सभी लोगों के लिए सुकर है, अतः सरलता से प्राप्त होने वाले जल के ही गुण दोषों का मूल्यांकन कर आवश्यकतानुसार उसका शोधन कर प्रयोग करना चाहिए।

मनु भूमिगत जल को भी आकाश के जल समान स्वभवतः शुद्ध मानते है, क्योंकि वह मलों से व्याप्त नहीं होता है–

आपः शुद्धा भूमिगता वैतृष्ण्यं यासु गोर्भवेत्।
व्याप्ताश्चेदमेध्येन गन्धवर्णसान्विता।।

यहाँ भूमिग्रहण उपलक्षण है, ऐसा मेधातिथि का मत है। भूमिगत के द्वारा प्रणालिका आदि का भी ग्रहण किया जाना चाहिए। मलयुक्त द्रवयों के संसर्ग से कुछ अशुद्धि होती है, वैसा जल मात्र तृष्णा शान्ति के लिए पिया जाना चाहिए। मलरहित भूमिगत जल अल्प परिमाण यस में होने पर भी शुद्ध होता है। जल के शुद्ध अथवा अशुद्ध परिमाण मापने के लिए दुर्गन्धरहित वर्णरहित (पारदर्शी) रसविषेश रहित (अवरक्त मधुरमात्र) जल शुद्धि होता है। मलयुक्त द्रव्यों से गन्ध, वर्ष, रस के व्याप्त होने से जल की अशुद्धि जाननी चाहिए। इसी कारण से तालाब आदि में स्थिर जल में एक स्थान पर मलसहित जल दिखायीं देता है। अन्य स्थान पर गन्ध आदि से शून्य शुद्ध जल होता है।

नदी का जल भी शुद्ध होता है। शुद्ध नदी का जल पवित्र और पवित्रता का प्रसार होता है। मनुस्मृति में का गया है–

शुद्धं नदीमतं तोयं पुण्यं पद्वत् प्रसारितम्

इस प्रकार नदी के साथ ही प्रसृत जल भी स्वभाव से शुद्ध होता है। संस्कृत साहित्य में इस प्रकार जल की गुणवता के निर्धारक मानक ये है–

1. तृप्ति, 2. गन्धसाहित्य, 3. वर्णसाहित्य, 4. स्वच्छता, 5. आस्वाद्यता, 6. अशीतलता, 7.मैलें पदार्थों और गन्द्र द्रव्यों की अव्याप्ति। जल के नैसर्गिक गुणधर्मों में परिवर्तन के कारक कारण ये तत्व हैं–

1. सोम, 2. वायु, 3. रवि (ताप), 4. पृथ्वी, 5. काल

खत्पतत्सोमवायवर्कैः स्पृष्टं कालनुवर्तिभिः।
शीतोष्णस्निग्धरुक्षाद्यैर्यथासन्नं महीगुणैः।।

जल प्रदूषण

मैले द्रव्यों के संसर्ग से प्रदूषण होता है और वह दूर करने योग्य तथा दूर न करने योग्य हो सकता है। बाहर से गिरे उपेक्षापक तो सरलता से दूर किया जा सकता है। उस जल में व्याप्त मैले पदार्थों को साफ करने में विशेष विधि की अपेक्षा रहती है। वर्तमान समय में पर्यावरण में सर्वाधिक प्रदूषण जल और वायु में है। ये दोनों भी अनन्य रूप से सापेक्ष है। विविध उपयोग में आये हुए अपशिष्ट पदार्थों का निराषड़क जल में प्रक्षेपण, मल का प्रवाह, औद्योगिक अपशिष्टों का प्रवाह, रासायनिक तत्वों का अपेक्षण तथा भौतिक तत्वों के संरक्षण के प्रति उदासीनता पूर्ण दृष्टि आदि जलप्रदूषण के प्रमुख कारण है।

(वापी)बाउड़ीं, कुंआ, कुंआ, तालाब आदि में निर्माण के बाद का प्राथमिक जल सूतिका (जच्चा) के समान होते हैं ऐसा भविष्यपुराण में युधिष्ठर – कृष्ण संवाद में भगवान कृष्ण उपदेश देते हैं–

वापीकूपतडागे वा स्थितं तु प्रथमं जलम्।
अपेयं तु भवेत्सर्व तज्जलं सेतिकासमम्।।

प्राथमिक जल निर्माण सामग्रियों के गुण–दोषो से युक्त मैले भूरा सायनिक तत्वों से युक्त होता है। इसीलिए पेय नहीं होता, है, ऐसा कहा गया है। भागवत पुराण में तो कुष आदि पवित्र विषघ्न दूर्वा के द्वारा भी अशुद्ध समुद्र भी छूने लायक नही माना गया है।

समुद्रोऽपि हि कौन्तेय देवयोनिरपां पतिः।
कुशाग्रेणापि रभसा न स्पृष्टव्यस्त्वसंस्कृतः।।

यहाँ स्पष्ट रूप से कहा गया है कि स्थिर जल रोगकारक होता है।

आचार्य चरक का भी यह मत है–

नद्यः पाषाणविच्छिन्नविक्षुब्धविहिततोदकाः।
हिमवत्प्रभवाः पथ्याः पुण्या देवर्षिसेविताः।।
नदयः पाषाणसिकतावाहिन्यो विमलोदकाः।
मलयप्रभवा याश्च जलं तास्वमृतोपम्

सम्पूर्ण संस्कृत साहित्य में सिन्धु, सरस्वती, शतद्रु, गंगा, युमुना, नर्मदा, कावेरी, गोदावरी आदि नादियाँ पवित्र मानी गयीं है। जैसा कि यजुर्वेद का ऋषि नदी के महान् जल समागम की स्तुति करता है–

देवीरापो यो व उर्मिः प्रतूर्तिः ककुन्मान्वाजमास्तेनायं वाजंसेत्।।

जलराशि के प्रवाह की अधिकता से नदी संगमों पर शोधन की क्षमता अधिक होती है, अतः संस्कृत साहित्य में नादियों के संगम पवित्रतम बताये गये हैं, जैसा कि उत्तररामचरित्र में भवभूति द्वारा वर्णन किया गया है।

अन्योन्यप्रतिघातसंकुलचलत्कल्लोलकोलाहलै।
रुत्तालस्त इमे गभीरपयः पुण्याः सरित्संगमाः।।

जैसे पत्थरों पर पछाड़ कर वस्त्र धोने से वस्त्रों की सफाई और मल निष्कासन अधिकतम होता है उसी प्रकार शिलाओं पर जल धाराओं के पटक कर गिरने से मलकणों के विघटन से पर्वतीय नदियों का जल शुद्धतम होता है।

सूर्यरश्मियों के साथ सम्पर्क

सूर्यरश्मियों में कृमिनाश करने की क्षमता है, अतः सूर्य रश्मियों के द्वारा भी जलशोधन होता है। जल में स्थित वनस्पतियों के द्वारा सूर्य के प्रकाश में प्रकाश–संश्लेषण की

प्रक्रिया से अत्याधिक परिमाण में आक्सीजन उत्पन्न किया जाता है। इससे जल में प्राणशक्ति का अभाव नहीं होता है, जल की ताजगी और जलवन शक्ति सुरक्षित रहते हैं। इसी सत्य को जानते हुए ऋषियो ने ऋगिवेद में प्रतिपादित किया–

अमूर्या उपसूर्ये याभिर्वा सूर्य सह।

जो जल सूर्य के साथ (सूर्य के समीप) सूय्र की रशिमियों के सम्पर्क में होता है, वह जल पावन होता है।

इसी प्रकार से राज्यभिषेक में प्रयुक्त आतपवर्ष्य जल अति पवित्र माने गये हैं। आयुर्वेद में भी उस जल का निषेध है, जो सूर्य, चन्द्र अथवा वायु से अदृष्य हो। चन्द्रमा अमृतमय है, पवन प्राणरूप है, अतः इनका जल के साथ संस्पर्क आरोग्य के लिए माना जाता है। संभवतः इसी कारण से पश्चिमी सागर की ओर गतिशील नदियाँ पवित्रतम मानी गयीं है। इन नदियों के प्रवाह के साथ सूर्य श्मियों का संपर्क प्रातःकाल से संध्यापर्यन्त रहता है–

पश्चिमाभिमुखा याश्च पथ्यास्ता निर्मलोदकाः।
प्रायों मृदुवहा गुव्यों याश्च पूर्वसमुद्रगाः।।

इसका समर्थन अष्टाड़गहृदय में भी है–

पश्चिमोदधिगाः शीघ्रवहा याश्चामलोदकाः।
पथ्याः समासान्ता नद्यो विपरीतास्त्वतोऽन्यथा।।

यह भी मान्यता जल जीवन में है। किर्न्मदादर्शन मात्र से ही पवित्र करते है, पश्चिम मुख है, जैसा कि रामायण में प्रतिपादित किया है–

1. **चलोपलजलां पुण्यां पश्चिमोदधिगामिनीम्।**
2. **प्रख्याय नर्मदा सोऽथ गंगेयमिति रावणः**
   नर्मदादर्शने हर्षमाप्तवान् सा दशाननः।।

सूर्यरश्मियों के सम्पर्क से जल हिरण्यवर्ष का है। इस हिरण्य वर्ष और अनिगर्भ जल को ऋषियों के द्वारा अनेक स्तुतियाँ की गयीं है–

हिरण्यवर्षाः शुचयः पावका यासु जातः सविता यास्वग्निः।
या अग्निं गर्भ अधिरे सुवर्णास्ता आपः शं स्योना भवन्तु।।–अथर्ववेद 1/33/1

महाभारत में पाया जाता है– यथा सूर्या क्षुभिः स्पृष्टं सर्व शुचि भविष्यति।

शरद् में जल की स्वच्छता

वर्षा ऋतु जलों को दूषित करती है, किन्तु नदी तडाग आदि के जल को निर्मलता का कारण शरद् ऋतु हैं शरद् के आगमन पर जल स्वतः शुद्ध होता है जैसा कालिदास ने ऋतुसंहार में वर्णित किया है–

विगतकलुषमम्भः श्यानपड्का धरित्री।
विमलकिरणचन्द्रं व्योम ताराविचित्रम्।।

अपां मलं शरज्जहार– जल कि निर्मलता को देखकर पक्षी नदी के किनारो पर आते हैं। वर्षा ऋतु में जो जल अपेय था वह नदियों का जल शरद ऋतु में पेय हो जाता है–

शस्तं शरदि नादेयं नीरमंशूदकंपरम्।
दिवा रविकरैर्जुष्टं निशि शीमेरांशुभिः।।

शरदऋतु में जल की स्वच्छता के कारण हैं–

1. वर्षा से उत्पन्न होने वाले प्रदूषण का अभाव।
2. सूर्य और चनद्रमा को ढ़कने वाले मेघों का लोप, जिससे सूर्य रश्मियों और अमृतगर्भ वाली चन्द्र किरणों का संयोग जल के साथ होता है।
3. वर्षाकालीन अपद्रव्यों का नदी तलों में विलय।
4. अगस्त्य नक्षत्र के उदय से जल शद्धि वृद्धसुश्रुत में लिखा है–

शरद स्वच्छमुदयादगस्त्यस्याखिलं हितम्

इसके कारण का उल्लेख महाकवि कालिदास ने भी किया है।

1. प्रससादोयदाम्भः कुम्भयोनेर्महौजसः।
2. तस्याविलाभ्भः परिषुद्धिहेतोर्भोमोमुनेःस्थानपरिग्रहोऽयमम्।
3. कमलोत्पत्या जलशुद्धिः

जलशुद्धि में वनस्पतियों की भी भूमिका होती है। शरद् ऋतु में यदि सरोवरों में कमल खिलते है तो यह कमल विकास जल के लिए सौभाग्य कर होता है।

1. **शरदा नीरजोत्पत्या नीराणि प्रकृतिं ययुः।**
2. **स्फुटकुमुदचितानां राजहंसाश्रितानां**
   मरकतमणिभासा वारिणा भूषितानाम्।
   श्रियमतिशयरूपां व्योमतोयशानां
   बहित विगमेघं चंद्रतारावकीर्णम्।।

यह तो हम जानते है कि वनस्पतियाँ सूर्य के प्रकाश में अपने भोजन के निर्माण के लिए कार्वनडाइ ऑसाइड गैस ग्रहण करती है और ऑक्सीजन छोड़ती है। ऑक्सीजन जल शुद्धि के लिए श्रेष्ठ माना गया है। अतः प्रचीनकाल में तालाबों में कमल का आरोपण अत्यन्त पुण्यदायक माना गया है–

आण्डीकं कुमुदं सं तनोति बिसं शालूकं फको मुलाली।
एतास्त्वा धारा उपयन्तु सर्वाः स्वर्गे लोके मधुमत
पिन्वमाना उपत्वा तिष्ठन्तु पुष्कारिणीःसमनताः।।

आण्डीकम्– अर्थात अण्डे की आकृति का कन्द से उत्पन्न कुमुद विसम् पद्मकन्द, शालूकम उत्पलकन्द, शफाफः–ृफ की आकृति का जल में उत्पन्न, मुलाली–मृणाल, स्वर्ग में भी कमलों से युक्त मधुर जल वाले सरोवर तुम्हे प्राप्त हो यह अथर्ववेद की आवधारणा है।

जलशुद्धि के उपाय–

1. **छलनी या वस्त्र से शोधन**

जल में अपद्रव्यों के जो स्थूल कण होते हैं, उनका परिमार्जन

छलनी अथवा वस्त्र से किया जा सकता है। यह जलशोधन का सहजतम उपाय है। सामान्यदशा में अदृयमान अशिुद्धियों में पेयजल अवश्य ही वस्त्र के द्वारा पवित्र किया जाना चाहिए ऐसा मनुस्मृतिकार का मत है– दृष्टिपूतं न्यसेत्पादं वस्त्रपूतं जलं पिबेत्।

भावप्रकाश में वर्णित उपायों में भी वस्त्र के द्वारा जल शुद्धि एक उपाय बताया गया है।

शुचिसान्द्रपटस्रावैः क्षूद्रजन्तुविवर्जितम।
गोमेदेन च वस्त्रेण कुर्यादम्बुप्रसादनम्।।

2. **क्वाथन (उबालना)**

उबाललने से जल हानिकारक जीवाणुओं से रहित और लघु होता है। यह जल सुपथ्य और शीघ्र पचने योग्य, त्रिदोषजन्य रोगों में हितकार होता है–

अनभिष्यन्दि लघु च तोयं क्वथितशीतलम् पित्तयुक्ते हितं दोषे.....।

सुश्रुत के द्वारा विभिन्न रोगों में प्रयुक्त होने वाले जल को पकाने की अवधि निर्धारित की है–

यत्क्वाथ्यमानं निर्वेगं निष्फेनं निर्मलं लघु।
चतुर्भागावशिष्टं तु तत्तोयं ककफरोगनुत्।
तत्पादहीनं पित्तघ्नं हीनमर्द्धेन वातनुत्।।

यह जल शुद्धि का सुरक्षित का और सर्वोतम उपाय है। अग्नि के द्वारा जलशुद्धि का संकेत ऋगवेद में भी मिलता है–

अपां नपानमधुमतीरपों दा याभिरिन्द्रो वावृधे वीर्याय।

जल का रक्षक अग्नि है, अग्नि मधुयुक्त जल को देता है, जिससे इन्द्र वीर्यवान होता है।

3. **निःसादन और निःस्यन्दन–**

इस विधि से बालुओं के द्वारा मल का सादन और जल का स्यनदन किया जाता है। इसके लिए दो पात्रों का प्रयोग किया जाता है। ऊपर स्थापित पात्र के तल भाग में बालु का पटल होता है, इससे अति मन्द गति से निकलता हुआ जल नीचे स्थापित पात्र में संचित होता है।

बालू के द्वारा जल शुद्धि की यह विधि वर्तमान में वाटर फिल्टर नामक उपकरण (कैण्डी माध्यम) में प्रयुक्त होती है। नदियों में शुद्धि की यह प्रक्रिया प्राकृतिक रूप से चलती है।

4. **फलमूल आदि के द्वारा जल शुद्धि–**

यह प्रसिद्ध है। निर्मलीफल जल संशोधन के लिए पर्याप्त है अतः जलशुद्धि के लिए निर्मलफल का प्रयोग अवश्य किया जाता चाहिए–

पड़ाच्छिदः फलस्येव निकषेणविलं पयः।
फल कलकवृक्षस्य यद्यपयम्बुप्रसादकम्। न नामग्रणादेव तस्य वारिप्रसीदति।।

भावप्रकाश में विसग्रन्थि (कमलनालतनतु) को जलशुद्धि कारक बताया गया है।

5. **योगों का प्रयोग–**

अनेक द्रव्यों के मिश्रण के द्वारा रचित योग भी जल शुद्धिकारक होता है। बृहत्संहिता में निर्दिष्ट योग अंजन, मुस्त (मोथा), खस, कोषातक, आमलक, निर्मली आदि से निर्मित होता है–

अंजनमुस्तोशीरैः सराजकोशातकालमकचूर्णैः।
कतकफल्समायुक्तैर्योगः कूपे प्रदातव्यः।।
कलूषं कटुकं लक्षणं विरसं सलिलं यदि वाशुभगन्धिभवेत
तदनेन भवत्यमलं सुरसं सुसुगन्धिगुणैरपरैश्च युतम्।।

इस योग से कडुवा रसहीन जल भी स्वादिष्ट और तृप्तिकारक होता है,

1. 'अर्जुन' वृक्ष की छाल का चूर्ण।
2. 'मुस्त' की जड़ आदि का चूर्ण।
3. 'उषीर' वृक्ष की चुर्ण।
4. 'नाग' का चूर्ण।
5. 'कोषातक' का चूर्ण।
6. 'आमलोक' का चूर्ण।
7. 'कतकफल' का चूर्ण।

वनौषधियों के द्वारा जल की शुद्धि

वनौषधियों का अद्भूत महात्म्य है। वनौषधियाँ जल की शुद्धि के प्रमुख साधन हैं।

यजुर्वेद के अनुसार कुष नामक तृण जलषोधक–

सवितुर्यः प्रसव उत्पुनाम्यच्छिद्रेण पवित्रेण

अथर्ववेद में औषधियों के द्वारा जलवृद्धि के उपास इस प्रकार ने निरूपित है–

त्वया बयमप्सरसो मधर्वाश्चातयामहे।
अज श्रृङ्गयज रक्षः सर्वान गन्धेन नाशय।।
नदीं ययन्त्वप्सरसोऽपां तारमश्वसम्।
गुल्गुलूः पीला नलद्यौक्षगन्धिः प्रमन्दनी।।
यत्राश्वत्था न्यग्रोधा महवृक्षाः शिखण्डिनः।

नदियों में मछली आदि जल जन्तु जल के संशोधन के लिए विशेष रूप से संरक्षित किये जाते हैं। वे प्रतिदिन पार्थिव, वानस्पति और जैविक अपशिष्ट पदार्थों को खाते हैं। मत्स्य आदि के शरीर में जल परिमाण की अधिकता से उनमें प्राणवायु अधिक मात्रा में होती है, जिसको जल में छोड़ कर वे निरन्तर जल का शोधन करते हैं। अतः जल के आधार स्थलों पर उनका संरक्षण किया जाना चाहिए।

सोमलता के द्वारा जल शुद्धि के विषय में वेदों में अनेक

प्रकार के वर्णन हैं। सोम के द्वारा चार प्रकार से जल की शुद्धि होती। सोम को जल का शोधक और जल वृद्धिकारक माना गया है। अन्तरिक्ष से आने वाले जल की शुद्धि का कारण सोम को ही माना जाता है, क्योकि यज्ञ के द्वारा अन्तरिक्ष में जाकर सोम वर्षा के जल में गुणाधान करता है। वह जल वर्षा के द्वारा नदी आदि में प्राप्त होकर मड़ग्लकर होता है।

महासागरों में अगाध जल होता है, जिसके गर्भ में असंख्य जलचर, जलीयजन्तु, वनस्पतियां और रत्न आश्रित रहते हैं। यद्यपि सागरीय जल का अधिकांश भाग पेयजल के रूप में प्रयुक्त नहीं होता है। फिर भी यह भूलोक के जैविक पर्यावरण का महत्वपूर्ण तत्व है। विश्व की सभी नदियों का सम्पूर्ण मल प्रवाह उनके जल के साथ सागर में डूब जाता है। वर्तमान में तो व्यापारिक और सैन्य सहायता से सागर के मध्य में तेल से संचालित जलयान रहते हैं, जिनसे तैलीय उपशिष्ट सागर में गिरकर विषाक्त रेडियोधर्मी प्रदूषण पैदा होता है। समुद्र तटों पर परमाणु परीक्षणों से भी वहाँ का जल प्रदूषित होता है। समुद्रीय प्रदूषण का सर्वाधिक दुष्प्रभाव जलीय जन्तुओं और रत्नों के ऊपर पड़ता है, जिससे न केवल महासागरीय जलचल अव्यवस्थित होता है, अपितु पृथ्वी का जीवनानुकूल ऋतुचक्र भी प्रभावित होता है, किन्तु सागरीय जल का शोधन हमेशा सर्वथा नहीं किया जा सकता है। जल शुद्धि के सन्दर्भ में अमृत प्राप्ति के लिब देवताओं के आह्वान पर असुरों की सहायता से समुद्र मन्थन किया गया। जिससे सर्वप्रथम विष और अन्त में अमृत प्राप्त हुआ।

पद्मपुराण में उल्लिखित आख्यान के अनुसार कभी दर्शन के लिए दुर्वासा इन्द्र को पारिजात पुष्प की माला उपहार में दी गयी। वह इन्द्र के द्वारा ऐरावत के कण्ठ में डाली गयी। इसको अपना अपमान मानकर दुर्वासा ने इन्द्र को शाप दिया, जिससे जगनमाता लक्ष्मी अन्तर्हित हो गयीं घोर अनावृष्टि और विपत्ति हो गयी। तब क्षीरसागर में जाकर देवताओं और मुनियों सहित ब्रह्मा ने विष्णु की प्रार्थना की। विष्णु के निर्देष से मन्दराचल को मन्थानी बनाकर सर्पराज से घेरकर मन्थानी के आधारभूत कूर्मरूपधारी विष्णु के (आधार के) द्वारा सभी देवताओं और असुरो ने समुद्र मन्थन किया, जिससे लक्ष्मी प्रकट हुई।

मन्थन को समुद्र जल की शुद्धि प्रक्रिया ही जानना चाहिए जिसमें सार्वजनिक विष्वस्तरीय प्रयास को अपेक्षा होती है। पहले निकला हुआ विष अवाछनीय प्रदूषण ही कहा जा सकता है। जिसके विनाश के द्वारा अमृतरूपा अथवा लक्ष्मीरूपा समृद्धि प्राप्त की जा सकती है। इस प्रकार संस्कृत साहित्य में जलशोधन की उल्लिखित विधियाँ निम्नप्रकार से सूचीबद्ध की जा सकती है–

1. औपषमिक विधि
2. पंचगव्य विधि
3. परीवाह विधि
4. तापोपस्करण विधि
5. वस्त्र गलन विधि
6. सिकताप्रस्तरकणों विधि
7. आसवन विधि

वर्तमान समय में प्रायः निम्नलिखित विधियाँ जलशुद्धि के लिए प्रयोग की जाती है–

(क) यान्त्रिकशोधन विधि

इस विधि में विशेषयान्त्रिक उपकरणों के द्वारा जल में घुले हुए अपशिष्टों का गालन किया जाता है, जिससे शुद्ध जल पात्र में गिरता है और मल बाहर रहता है।

(ख) भौतिकरासायनिक शोधन विधि

इस के द्वारा जल और मिश्रित कार्बनिक अकार्बनिक पदार्थो को पृथक करने के लिए रासायनिक अभिकारक प्रयोग किये जाते हैं। इसकी अनेक उपविधियाँ हैं। वे है जलापघटन, (Hydrolysis), विद्युदपघटन (Electrlysis), अवषोषण (brorption), स्कन्दन; Coaulation), आयन विनियम (Ionex changes), क्लोरीनीकरण (Clorination), आयोनीकरण (Oonisation) इत्यादि होता है।

'ओक्' नाम वृक्ष के बीजों से अकार्निक अम्ल नामक रसायन जल में स्थित सभी दोषों को दूर करता है। ऐसा कोरिया देश के परिषोधकों का मत है।

रेडिया एक्टिव् रसायन निफेल काण्डियम् पादरस, सीस इत्यादि रसायन जल से निकालने के लिए यह अकर्निक् आम्ल रसायन ही दिव्यौषध है ऐसा परिषोधको के द्वारा निश्चित किया गया है।

शान्ति के बिना चिकित्सा रहित जो प्राणानतक रोग वह फ्लोरिसिस नामक व्याधि होता है। उसका लक्षण उस प्रकार है। हाथ पैर और शरीर का रूप टेढ़ा हो जाता है (साथ ही शरीर नख के शिरा तक कमजोर पड़ जाता है।) रोगग्रस्त आदमी दूसरे के अधीन हो जाता है। इसका कारण धरती के अन्दर के जल से है। फ्लोरिन नामक गुण उसमें पाया जाता है। इसलिए उस जल को छोड़कर धरती के उपरी जल का त्याग करना चाहिए। इस प्रकार जहाँ कहीं भी इस प्रकार के जल पाया जाता है। उसके शुद्धिकरण का प्रयत्न्न करना आवश्यक है। "फ्लोरिसस" मेग्नीशियं (मैगनिशीयम) यदि इन दोनों की अधिकता होने पर सुधा चूर्ण के समिश्रण से उसे हम शुद्ध चूर्ण के समिश्रण से उसे हम शुद्ध कर सकते हैं। फ्लोरिस का गुण है यदि सफेद पत्थर के पूर्ण है यदि सफेद पत्थर के पूर्ण से योजित करें तो उसका गुण प्रकट होता है। उपर्युक्त यिर्मों के द्वारा एक या अनेक प्रकार से जल की शुद्धि करके उसका सेवन करना चाएि यदि ऐसा सम्भव न हो तो जल को गर्म करके अथवा वस्त्र से छानकर ही पीना चाहिए।

धातु रत्न आदि के प्रयोग से रासायनिक क्रिया के द्वारा जल शुद्धि

वर्तमान समय में जल के शुद्धि के लिए क्लोरिन आदि रासायनिक द्रव्यों का प्रयोग होता है। कैल्शियम, सोडियम पर पोक्लोराइट, क्लोरीन, क्लोरीनडाइऑक्साइड ब्लीचिंग चूर्ण आदि के द्वारा इसके प्रयोग से जल को वैक्टीरिया रहित किया जाता

है। किन्तु इस प्रार के शोधन से पानी में द्रव्यों की गन्धादि का दुष्प्रभाव भी देखा जाता है। प्राचीन काल में मणि सुवर्ण आदि के द्वारा पानी को शुद्ध करने की विधि अपनाई जाती थी। इस प्रकार से जल शोधन की व्यवस्था से दोष एवं हानि से वचाव होता था शास्त्रों में इस विधि की व्यवस्था हमें शब्दकल्पद्रुम नाम ग्रन्थ में देखने को मिलती है।

निन्दितं चापि पाननीयं क्वथितं सूर्यतापितं।
सुवर्ण रजतं लोहं पाषाणं सिकता तृदम्।।

अशुद्ध जल को सोना, चांदी, लोहा पत्थर, बालू आदि से शुद्ध किया जाता है। चाहे वह जल सूर्य के ताप से तप्त हो अथवा अशुद्ध उपर्यक्त साधन जल की शुद्धि का कारक है।

भृशं संताप्य निर्वाप्य सप्तधा साधितं तथा।
कर्पूरजातिपुन्नागपाटलादिसुवासितम्।।

जल को अत्यधिक उबालकर सात बार शोधित कर कपूर, चमेली, पुन्नाग तथा गुलाब पुष्पों की सुगन्धि से सुवासित करें।

शुचिसान्द्रपटस्रावै : क्षुद्रजन्तुविवर्ज्जितम्।
स्वच्छं कनमुक्ताघै : शुद्धं स्याद्दोषवर्जितम्।।

किसी भी प्रकार से अशुद्ध जल को शुद्ध करने के शुद्ध वस्तु से छानना, सोना, मणि, मूँगा, आदि उत्तम साधनों से शुद्ध किया हुआ दोष रहित होता है।

पर्णमूलसिग्रन्थिमुक्ताकनकमैवलै :।
गोमेदेन च वस्त्रेण कुर्यादम्बुप्रसादनम्।।

मोती, मूँगा, शैवाल (जलीय पौधा), सोना, मिट्टी, वनस्पति आदि से जल को शुद्ध कर प्रयोग में लाना चाहिए।

यज्ञ के द्वारा जल–शुद्धि–यज्ञों के द्वारा जल शुद्धि सम्भव है। जल का मुख्य स्रोत वर्षा है, यह वर्षा यज्ञ से सम्भव है। ऋग्वेद में ऐसा निर्देष है।

शतपवित्राः स्वधया मदन्दी र्देवीर्देवानामति यन्ति पाथः
ता इन्द्रस्य न मिनन्ति व्रतानि सिन्धुन्यो हव्यं
घृतवज्जुहोता।।

ऋषि वशिष्ठ के द्वारा देखे गये इन जलयुक्त सम्बन्धी मन्त्रों का भाष्यकार पंडित दामोदर सातवलेकर महोदय जी ने लिखा है कि सौ प्रकार से जल के पवित्र कर अन्नादि के साथ सानन्द ग्रहण करना चाहिए। कारण यह जल देवताओं के यज्ञस्थान से प्राप्त होते है। अस्तु सभी नदियों के जल को शुद्ध करने के लिए घृत मिश्रित हव्य का हवन करें।

पवस्व वृष्टिमा सुनोऽपामूर्मि दिवस्परि अयक्ष्मा बृहतीरिषः
घृतं पवस्य धारया यज्ञेषु देववीतमः अस्मभ्यं वृष्टिका पव।।

स्वर्गलोक से हमें शुद्ध जल की प्राप्ति हो सुवृष्टि हो जिससे जन जीवन ठीक हों रोगादि से रहित हों अन्न की पैदावार बढ़े, इसलिए यज्ञों में देवताओं के लिए घृत से हवन करना। वर्षा का जल समय पर हो एवं शुद्ध जल वर्षण हो सके। यदुर्वेद के अनुसार अग्नि में जो भी द्रव्य आहुति के रूप में दिया जाता है। वह मेघमण्डल में व्याप्त होकर जल को पवित्र करना है।

देवीरापाऽग्रेगुवोऽग्रेपुवोऽग्र इममद्य यज्ञं नयताग्रे।

इस प्रकार जल में हवन आहुति देने से जल सुवासित होकर सुख प्रदायक होगा जल आदि पदार्थो की शुद्धि से प्रजा सार्वजनिक रूप से खुशहाल होगी।

अपोदेवीरूपसुज मधुमतीरयक्ष्माय प्रजाभ्यः।
तासामास्थानादुज्जिहतामौषधयः सुपिप्पलाः।।

स्वर्गलोक से हमें शुद्ध जल की प्राप्ति हो सुवृष्टि हो जिससे जन जीवन ठीक हों रोगादि से रहित हों अन्न की पैदावार बढ़े, इसलिए यज्ञों में देवताओं के लिए घृत से हवन करना चाहिए। जिससे वर्षा का जल समय पर हो एवं शुद्ध जल वर्षण हो सकें। ययुर्वेद के अनुसार अग्नि में जो भी द्रव्य आहुति के रूप में दिया जाता है। वह मेघमण्डल में व्याप्त होकर जल को पवित्र करता है।

देवीरापोऽग्रेमुवोऽग्रपुवोऽग्र इममद्य यज्ञं नयताग्रे।

इस प्रकार जल में हवन आहुति देने से जल सुवासित होकर सुख प्रदायक होगा। जल आदि पदार्थो की शुद्धि से प्रजा सार्वजनिक रूप से खुशहाल होगी।

अपो देवीरूपसुज मधुमतीरयक्ष्माय प्रजाभ्यः।
तासासास्थानादुज्जिहतामौषधयः सुपिप्पलाः।।

वेदों में ऐसा भी देखने को मिलता है कि जलों में सुगन्धित द्रव्यों के द्वारा हवन करने से पानी पवित्र एवं मीठा हो जाता है। हवनादि के कारण सुन्दर फल – फूल औषधि वनस्पति सुलभ एवं पर्याप्त होता है। इसके साथ ही यक्ष्मा जैसे भयंकर रोग से भी हमारी रक्षा होती है।

अथर्ववेद में भी कहा गया है कि जलों में वायु में फैले हुए रोग, प्रदूषण आदि यज्ञों के गन्ध से दूर हो जाते हैं।

त्वया वयम् अप्सरसों..... रक्षा सर्वान् गन्धेन नाशय।

वेदभाष्य कार स्वामी दयानन्द सरस्वती जी ने लिखा है कि इस संसार के सुखः – शातिं के लिए यज्ञ से शोधित जलों के द्वारा वन संरक्षण एवं ताप को दूर कर सकते हैं। यज्ञ के सम्पादन से आधिदैविक आधिभौतिक एवं आध्यात्मिक तीनों प्रकार के कष्टों से छुटकारा पर सकते हैं। साथ ही सुख – शांति एवं सर्वविध उन्नति को प्राप्त करते हैं।

स्वामी दयानन्द सरस्वती महोदय ने यदुर्वेद के अनेकों मन्त्रों से जल शुद्धि का प्रतिपादन किया है उनके विचार से यज्ञ एवं अनुष्ठान से हवा एवं जल की शुद्धि होती है एवं अनेक प्रकार से पुन्य प्राप्त होती है जो किसी अन्य उपाय सेवन करता है। उसके जीवन में सुख रूपी अमृत की असन्न वर्षा होती है।

'वृष्टिश्च में सज्ञेन कल्पन्ताम्

मन्त्र का यह भाव है कि यज्ञों के द्वारा ही स्वच्छ, पवित्र, संस्कारित जल का निर्माण होता है।

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

जैविक खाद : प्रकार और विशेषताएं

राघवेन्द्र तिवारी, वी.पी. जायसवाल, सुधीर कुमार शुक्ल, एस.के. अवस्थी, आशा गौर एवं लालन शर्मा

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

खाद क्या है?

बेहतर विकास और उपज के लिए पौधों को संतुलित आहार की आवश्यकता होती है। खनिज पदार्थ पौधों की उचित वृद्धि के लिए पोषक तत्व प्रदान करते हैं।

खाद, पौधों और जानवरों के अपशिष्ट से बनती है जो कि पौधों में पोषक तत्व का मुख्य श्रोत होती है। वे अपघटन के बाद पौधों को पोषक तत्व प्रदान कराते है। शब्द खाद (Manure), अंग्रेजी के "Euqju" ("manuren") शब्द से आया जिसका अर्थ है **"भूमि की खेती करने के लिए"।**

खाद का मुख्य स्रोत गाय, घोड़े, भेड़, सूअर, बकरी और मुर्गी हैं। खाद का उपयोग करने से मृदा में महत्वपूर्ण सूक्ष्म पोषक तत्व मिल जाते है जो समय के साथ धीरे–धीरे मृदा में जारी हो जाते है तथा मृदा वातन (soil aeration) और जल प्रतिधारण क्षमता (water retention) में सुधार करते है जिससे मृदा की अच्छी संरचना (soil structure) और उसकी बनावट (soil texture) का निर्माण होता है ।

हमें खाद की जरूरत क्यों पड़ती है?

मृदा में पोषक तत्व उपस्थित रहते हैं चाहे वह खेत की मृदा हो या जंगल की। हालांकि विभिन्न स्थानों में खनिजों का अनुपात भिन्न–भिन्न होता है। एक ही क्षेत्र में, पोषक तत्व समान रूप में उपस्थित नहीं होते है। भूमि के किसी एक हिस्से, जैसे खेत में, मिट्टी के पोषक तत्वों को पौधों द्वारा इस्तेमाल किया जाता है, लेकिन ये पोषक तत्व, पौधों या उनके पत्तों के गिरने पर वापस नहीं मिलते है, क्योंकी उन्हें भोजन या जड़ी बूटियों के रूप में भूमि से हटा दिया जाता हैं। इसलिए पौधों की उच्च उत्पादकता और पोषक तत्वों की कमी को दूर करने के उर्वरकों की आवश्यकता होती है।

पौधे में आवश्यक पोषक तत्व नाइट्रोजन (N), फास्फोरस (P) और पोटेशियम (K) हैं। लगभग सभी उर्वरकों को उनके नाइट्रोजन–फास्फोरस–पोटेशियम या एन–पी–के मूल्य के अनुसार वर्गीकृत किया जाता है। नाइट्रोजन, पौधों के वनस्पतिक भागों (Vegetative part) जैसे कि तना और पत्तियों के विकास के लिए आवश्यक है, जबकि स्वस्थ जड़ो के लिए पर्याप्त मात्रा में फास्फोरस की जरुरत होती हैं। स्वस्थ फूलों और फलों के लिए भी फास्फोरस आवश्यक होता है। पौधे के भीतर पोषक तत्वों के संचलन को सुविधाजनक बनाने के लिए पोटैशियम की आवश्यकता पड़ती है। एन–पी–के के अलावा, पौधों को कम मात्रा में अन्य पोषक तत्वों की भी आवश्यकता होती है, जैसे कैल्शियम और मैग्नीशियम आदि।

उर्वरकों का वर्गीकरण

उर्वरको को दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है।

जैविक या रासायनिक

जैविक उर्वरक, पौधे और पशुओं की सड़ी हुई सामग्री से प्राप्त होती है। रासायनिक उर्वरक, रासायनिक क्रियाओ से प्राप्त होती है, जो कि अक्सर मानव निर्मित होती हैं।

जैविक खाद कुछ वर्ष पूर्व कृषि और सहकारिता मंत्रालय द्वारा एक पत्र में कहा गया था, "सच पूछिए तो जैव कृषि उस कृषि को कहेंगे जिसमे किसी भी प्रकार के रासायनिक उर्वरक या अन्य कृषि रसायनों का उपयोग न किया जाए तथा फसल को पुष्ट बनाने और फसल व्यवस्था के लिए वह पूर्णतरू जैविक श्रोतो पर निर्भर हो" जैव कृषि का मुख्य कार्य है पोषकों के पुनरुपयोग एवं हानि में कमी द्वारा मृदा की उर्वरता बनाये रखना फसल के पोषक तत्वों की आवश्यकता को पूरा करने के साथ साथ जैव कृषि का अतिरिक्त लाभ है की यह मृदा के भौतिक गुणधर्म, सूक्ष्मजीवी उत्पादन और खाद के अंश को बढाने के साथ साथ उसकी जलधारण क्षमता में भी वृद्धि करती है।

जैविक खाद के लाभ

- जैविक खाद को पाना आसान है और यह सभी परिस्थितियों में उपलब्ध रहती है।
- जैविक खाद, पौधों द्वारा आवश्यक सभी पोषक तत्वों को सीमित मात्रा में प्रदान करता है।
- यह मिट्टी में कार्बन:नत्रजन (C:N) अनुपात को बनाए रखने में सहायता करती है और मृदा की उत्पादकता भी बढ़ाता है।
- इससे मृदा के भौतिक, रासायनिक और जैविक गुणों में सुधार होता है।
- यह मृदा की संरचना और बनावट दोनों को बेहतर बनाता है।
- यह मृदा की जल धारण क्षमता को बढ़ाता है।
- जैविक गतिविधि में वृद्धि के कारण, पोषक तत्व जो गहराई में है आसानी से पौधों के लिए उपलब्ध हो जाते है।
- ये मृदा में उपस्थित नमी के वाष्पीकरण को कम कर देता है।

जैविक खाद से नुकसान

- जैव उर्वरक विघटित होते है इसलिए उनकी क्रियाये धीमी

चलती है जिससे हानि की सम्भावना रहता है।

- जैव उर्वरक, कार्बनिक पदार्थो को तोड़ने के लिए सूक्ष्मजीवों पर निर्भर रहते हैं। यदि मृदा में इन लाभकारी सूक्ष्मजीवों की कमी हो तो पौधों को जैव उर्वरक का पूरा लाभ नहीं मिल पाता है।
- वे रासायनिक उर्वरकों की तुलना में बहुत महंगे होते हैं।
- कुछ जैविक उर्वरको को बड़े क्षेत्रों में प्रयोग करना कठिन होता है । परिणामस्वरूप, वे कम सुविधाजनक हैं।
- कुछ क्षेत्रों में जैव उर्वरक उपलब्धता कम होती है और कई बार ये बड़ी मात्रा में उपलब्ध भी नहीं हो पाते है इसलिए प्रयोग के आधार पर, सीमित मात्रा में ही जैव उर्वरकों का चुनाव और मिश्रण किया जाता है।

जैविक खाद का प्रयोग कैसे करें

- जैव उर्वरक डालने की सबसे आसान विधि उन्हें मृदा की सतह या रोपण बेड (Planting bed) पर फैलाना है। चूंकि अधिकांश पोषक जड़ें मृदा के ऊपर कुछ इंच की परत में ही होती हैं, इसलिए पोषक तत्वों को गहराई में नीचे डालने की जरूरत नहीं होती है।

कितनी खाद का प्रयोग करना चाहिए

- अपने पौधों में जैविक उर्वरक प्रयोग का एक और लाभ यह है कि यदि आप इसे अधिक या कम मात्रा में प्रयोग करते हैं तो यह आपके पौधों को नुकसान नहीं पहुंचाएगा। एक अनुमान के मुताबिक घरेलू बगीचे में जैविक उर्वरक को 40–50 ग्राम प्रति एरिया या 100 ग्राम की मात्रा 1 किलोग्राम मृदा में उपयोग करना चाहिए।

2. रासायनिक (Inorganic) या कृत्रिम खाद अकार्बनिक उर्वरको में तीन मुख्य पोषक तत्वों की आवश्यक मात्रा होती है जो पौधों को जीवित रहने और पनपने में सहायता करती है। ये मृदा में शीघ्र मिल जाते है जिससे पौधों को आवश्यक पोषक तत्व आसानी से प्राप्त हो जाते है। ये उर्वरक, रासायनिक प्रक्रियाओं के माध्यम से मानव द्वारा निर्मित होते हैं। ये उर्वरक 'पूर्ण उर्वरक' के रूप में रासायनिक संरचनाओं की अलग–अलग मात्रा के साथ या नाइट्रोजन, फॉस्फोरस और पोटाश जैसे व्यक्तिगत रसायनों के रूप में उपलब्ध हैं।

उत्तम जैविक उर्वरक जो फसल के लिए उपयोग कर सकते हैं

खाद (Compost)

जैविक खेती की सर्वोत्तम विशेषताओं में से एक यह है कि इसमें स्थानीय रूप से उर्वरक, कीटनाशकों और अन्य जैविक सामग्री का उत्पादन करने की क्षमता होती है, और इसमें भी सबसे आसान खाद (compost) है। खाद पौधों को हवा, पानी, जैविक पदार्थ और सूक्ष्मजीव प्रदान करता है, जो उनके विकास में सहायक होती है। यह मृदा के लिए एक स्वस्थ वातावरण भी बनता है जिससे कीड़े, पौधों की बीमारियां, और खर–पतवार दूर रहते है।

केंचुआ खाद (Vermicompost) नियंत्रित परिस्थित में केंचुओं को व्यर्थ कार्बनिक पदार्थ खिलाकर पैदा किये गए वर्मीकास्ट (मल) और केंचुओं के मृत अवशेष, अंडे, कोकून, सूक्ष्मजीव आदि के मिश्रण को केंचुआ खाद (Vermicompost) कहते है। यह खाद बिना गंध की स्वच्छ जैव पदार्थ है जिसमें पर्याप्त मात्रा में एन. पी. के. और पौधों के विकास के लिए आवश्यक कई सूक्ष्म पोषक तत्व शामिल हैं। जैविक खेती के लिए केंचुआ खाद पसंदीदा पोषक स्रोत है। यह एक पुनर्नवीनीकरण जैविक उत्पाद (recycled biological product) है जो पर्यावरण के अनुकूल, तथा गैर विषैला है। केंचुओं द्वारा भूमि की उर्वरता (fertility) उत्पादकता (productivity) और भूमि के भौतिक, रासायनिक व जैविक गुणों को लम्बे समय तक अनुकूल बनाये रखने में सहायता मिलती है।

नीम केक (Neem cake)

नीम केक को सभी प्रकार के पौधों पर लागू किया जाना चाहिए क्योंकि यह पौधों के समग्र स्वास्थ्य को बनाए रखता है। यह एक जैविक खाद है जो नेमेटोड्स (nematode), मृदा ग्रब (soil grubs) और सफेद चीटियों (white ant) से पौधों के जड़ो की रक्षा करती है। यह कीटनाशक गुणों के साथ एक प्राकृतिक उर्वरक के रूप में भी कार्य करता है। भारत में नीम केक व्यापक रूप से धान, कपास और गन्ने की फसल के लिए उपयोग किया जाता है। नीम का बीज मृदा में क्षारीयता को कम करता है, क्योंकि यह अपघटन पर कार्बनिक अम्ल पैदा करता है। पूरी तरह से प्राकृतिक होने के नाते, यह मृदा रोगाणुओं के अनुकूल है, और जड़ो के निकट के वातावरण के सूक्ष्मजीवों (राइजोस्फीयर माइक्रोफ्लोरा) में सुधार करता है जिससे मृदा की उर्वरता बढती है। नीम केक से मृदा की कार्बनिक पदार्थ की मात्रा में भी सुधार होता है और बेहतर जड़ विकास के लिए मृदा की बनावट (soil texture), मृदा धारण क्षमता (water holding capacity), और मृदा वातन (soil aeration) में वृद्धि होती है।

हरी खाद (Green Manuring)

किसानों के लिए मृदा उत्पादकता एक महत्वपूर्ण चिंता का विषय है। हरी खाद सफलतापूर्वक मृदा की उत्पादकता में सुधार करने के रूप में लोकप्रियता प्राप्त कर रही है। हरी खाद में अनिवार्य रूप से हरे पौधों का समावेश होता है। हरी खाद का उद्देश्य मृदा में कार्बनिक पदार्थ जोड़ना है और इस प्रकार, इसे 'u=tu' के साथ समृद्ध करना जो कि सबसे महत्वपूर्ण पोषक तत्व है। कुछ कृषि प्रथाओं में कुछ व्यर्थ फसलों की बढ़ती संख्या शामिल होती है, इनकी फसल में अन्दर ही जुताई कर के पौधों के लिए हरी खाद प्रदान किया जाता है। ये बहुउद्देशीय फसले मृदा के जैवभार को भी बढ़ाती है तथा मृदा की बनावट (soil texture), जल धारण क्षमता (water holding capacity), और मृदा वातन (soil aeration) की वृद्धि करने में सहायक होती है।

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

गन्ने की पेड़ी पर जैव कारकों (बायोएजेंट्स) का प्रभाव

एस.के. अवस्थी, आशा गौर, राघवेन्द्र तिवारी, आदिल जुबैर एवं सुधीर कुमार शुक्ल

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

भारत में गन्ने का उत्पादन काफी बड़े क्षेत्र में किया जाता है। इस क्षेत्र के आधे से अधिक भाग पर गन्ने की पेडी का उत्पादन किया जाता है। पेडी उपज को बढ़ाने के लिए यदि गन्ने के ठूँठों का प्रस्फुटन बढ़ा दिया जाए और ठूँठ के बीच के खाली स्थान (गैप) को कम कर सके तो पेडी की उपज को बढ़ाया जा सकता है।

गन्ने के ठूँठों में कम प्रस्फुटन का मुख्य कारण कवकजनित रोग है। इनमे से मुख्य रोगजनक पाईथियम एफैनीडरमेटम, पी. अल्टीमम, राइजेकटोनिया बटाटीकोला, रा. सोलेनाई, स्क्लेरोशियम रौलफसाई इत्यादि (श्रीवास्तव, 1992) है। करीब 57 कवक अकेले अथवा समूह में, गन्ने की 6 प्रजातियों को.1148, को.1158, को.जे. 64, को.शा. 767, को.लख. 8001 तथा को.लख. 8002 में 60.7 प्रतिशत आँखोंध्कलिकाओ को नष्ट कर देते है (श्रीवास्तव एवं सहयोगी, 2000). उपरोक्त समस्या के समाधान हेतु ट्राईकोडर्मा (जैवकारक) को रोगकारक के विरुद्ध प्रयोग करके ठूँठों का प्रस्फुटन बढ़ाने का प्रयास किया गया।

गन्ने की चार प्रजातियों को.–1148,को.से.–92423, को.शा. –767,को.लख.–8001 के अल्प प्रस्फुटित ठूँठों को लेकर अच्छी तरह से धोकर पोटैटो डेक्सट्रोज माध्यम (पी.डी.ए.) पर रोगजनको को विकसित करके पृथक किया गया स इनमे सिरैटोसिस्टिप एडीपोसा, कोलैटोट्राईकम फैलकेटम, फ्यूजेरियम मोनिलीफॉर्मि तथा एफ. सोलेनाई कवक प्राप्त किये गए।

i. उपरोक्त रोग कारकों के विरुद्ध प्रबल प्रतिरोधी क्षमता वाला जैवकारक (बायोएजेंट) चुनने के लिए प्रयोगशाला में, (इन विट्रो) ट्विकलचर विधि (ड्यूल कलचर) से अध्यन किया गया स ट्राईकोडरमा विरिडी (टी–6) प्रबल विरोधी पाया गया (सारिणी –1) अतःइसी प्रभेद को ठूँठों के अल्पप्रस्फुटन को दूर करने सम्बन्धी अध्ययन में प्रयोग किया गया स

ii. इस अध्यन हेतु 25 से.मी. परिधि के मिट्टी के गमलो में को. 1148 प्रजाति के ठूँठों को प्रतिस्थापित किया गया स किल्ले निकलने की शुरुआत होने के पश्चात इन ठूँठों में सी. फैलकेटम, एफ. मोनिलीफॉर्मि, एफ. सोलेनाई तथा इनका एक प्रतिरोधी टी. विरिडी (टी–6) के कल्चर को अकेले व विभिन्न (8) संयोजनाओ में संरोपित किया गया। संरोपण द्रव्य (इनाकुलम) को 5.0 ग्रामध्100 ग्राम मृदा की दर से, मृदा में अच्छी तरह से मिश्रित किया गया स 60 दिनों के बाद इसका परिक्षण किया गया तथा किल्लों की संख्या, पौधों की लम्बाई, पत्तियों की संख्या इत्यादि ज्ञात किया गया स परिपक्वता पर प्ररोह तथा मूल का ताजा भार तथा उनको ओवन में 80० से.ग्रे. पर 24 घंटे व 1020 से.ग्रे. पर 24 घंटे सुखाकर शुष्क भार ज्ञात किया गया (सारिणी–2)।

अल्प प्रस्फुटित थानों से प्राप्त किये गए चार कवकीय रोग कारको सी. फैलकेटम, एफ. मोनिलीफॉर्मि, सी. एडीपोसा, व एफ. सोलेनाई की कलिका (आँखों) व किल्लो को नष्ट करने में भूमिका प्रायः निश्चित हो चुकी है (सिंह व श्रीवास्तव 1984, श्रीवास्तव 1992, श्रीवास्तव व सहयोगी 2000) स प्रयोगशाला में (इन–विट्रो) अध्ययन के दौरान, एफ. मोनिलीफॉर्मि के प्रति सी. ग्लोबोसम, ए. निडूलेंस व ए. नाइगर की अपेक्षा टी. विरिडी में अत्यधिक प्रबल विरोधी क्षमता पाई गयी।

टी. विरिडी के सात वियुक्तों को उपरोक्त चारों रोगजनको के विरुद्ध प्रतिरोधकता ज्ञात किया गया। टी. विरिडी की रोग क्षमता 77.88 दृ 54.63 प्रतिशत सी. एडीपोसा के लिए, 34.51 दृ 51.75 प्रतिशत सी. फैलकेटम के लिए, 46.49 दृ 56.35 प्रतिशत एफ. मोनिलीफॉर्मि के लिए तथा 4.06 दृ 57.89 प्रतिशत एफ. सोलेनाई के लिए (सारिणी–1) पाया गया।

ट्राईकोडर्मा कई मृदा रोग कारको के प्रबल विरोधी बताये गए है (एडम्स 1990, सिंह 1994 तथा नजर एवं सहयोगी 2004)। गन्ने में लाल सडन रोग कारक सी. फैलकेटम के विरुद्ध प्रयोगशाला में (इन–विट्रो) अध्यन के दौरान कवकीय रोग रोधी टी. विरिडी, टी. हारजियानम तथा ग. विरेन्स पाए गए (सिन्हा, 2003)।

सभी रोग कारको के साथ टी.विरिडी (टी.6) को अकेले व सम्मिकन में प्रयोग किया गया। परिणाम में सारणी–2 से ज्ञात हुआ की तीनों रोग जनको को जब अकेले–अकेले प्रयोग किया गया तो शुरुआत में ही किल्ले नष्ट हो गए। परिणामतः मृदा पोषक तत्व सिर्फ मुख्य प्ररोह में इस्तेमाल किया गया, जिसमें मुख्य प्ररोह की लंबाई बढ़ गई। सी.फैलकेटम, एफ. मोनोलीफार्मी व एफ. सोलोनेई की अपेक्षा ज्यादा प्रभावशाली रहा तथा इसके प्रभाव से किल्लों की संख्या में, पत्तियों की संख्या में, प्ररोह व मूल के ताप व शुष्क भार में सबसे अधिक कमी पाई गई। टी.विरिडी के प्रभाव से ठूँठों का प्रस्फुटन व वृद्धि कारकों में बढ़ोतरी पाई गई। आश्चर्यजनक रूप से वृद्धिकारक गुणों में वृद्धि उन उपचारों में पाई गई जहां टी. विरिडी को किसी भी रोगजनक के साथ प्रयुक्त किया गया अधिकतम वृद्धिकारक क्षमता उस उपचार में पाई गई जहां टी. विरिडी को रोगजनक सी. फैलकेटम के साथ प्रयुक्त

किया गया ।

ट्राईकोडर्मा द्वारा पौधों के वृद्धिकारक गुणों में बढ़ोतरी कई वैज्ञानिकों (मुखोपाध्याय, 1994,1996 मुखर्जी एवं मुखोपाध्याय, 1995) ने भी पाया है। ऐसा ट्राईकोडर्मा में कवकीय परजीवता (माइकोपैरासिटिस्म) के कारण कवक में कुंडलन (क्वाईर्लींग) होने से, इन पादपों से स्त्रावण से घोलने (लाईसिस) की प्रवृत्ति इत्यादि (होवेल 2003) के कारण हो पाता है। आर. सोलोनाई के विरुद्ध टी. विरिडी की कवकीय परजीविता (माइकोपैरासिटिस्म) को (रॉय, 1977) ने भी पाया हैस इसके अलावा इन के द्वारा स्त्रावित जीवाणु रस भी रोगजनक वृद्धि को रोक देता है (चिंचोलकर एवं चौधरी, 2000)।

अतः यह निष्कर्षित होता है की ठूँठों के उत्तम प्रस्फुटन हेतु टी. विरिडी (टी–6) का मृदा उपचार, 20 कि.ग्रा./हे. की दर से करने पर गन्ने का सामान्य स्वास्थ्य अच्छा हो पाता है तथा मृदाजनित रोग कम हो जाते है और मृदा की गुणवत्ता बढ़ जाती है। परिणामतः इस जैव कारक का अल्पप्रस्फुटित होने वाले गन्ने की ठूँठों में प्रयोग कर के, गन्ने की पेड़ी उपज को बढ़ाया जा सकता है ।

सारिणी–1 : टी. विरिडी के विभिन्न वियुक्तों का रोग जनको के प्रति प्रतिरोधकता (प्रतिशत में)

टी. विरिडी वियुक्त	प्रतिशत प्रतिरोध			
	सी. एडीपोसा	सी. फैलकेटम	एफ. मोनिलीफॉर्मि	एफ. सोलेनाई
टी –1	51.58	50.37	46.49	53.08
टी –2	51.74	36.89	48.87	47.79
टी –3	52.14	37.56	54.63	46.44
टी –4	47.28	34.51	50.86	45.04
टी –5	51.72	43.21	56.35	48.47
टी –6	54.63	57.15	56.35	57.89
टी –7	48.48	48.85	52.97	4.06
चेक (कंट्रोल)	4.06	4.06	4.06	4.06
सी.डी. (5%)	**3.15**	**7.72**	**2.92**	**3.38**

सारिणी : 2 – टी. विरिडी (टी–6) का थानों के प्रस्फुटन व वृद्धिकारक गुणों पर प्रभाव

क्र. सं.	उपचार	वृद्धि मापदंड (चार पौधों का औसत)						
		किल्लो की संख्या	पत्तियों की संख्या	मुख्य प्ररोह की लम्बाई (से.मी.)	ताजा प्ररोह का वजन (ग्रा.)	ताजा मूल का भार (ग्रा.)	शुष्क प्ररोह का भार (ग्रा.)	शुष्क मूल का भार (ग्रा.)
1	**चेक–1(असंरोपित)**	6.00	40.50	32.55	180.92	28.40	30.05	6.74
2	**चेक–2के साथ संरोपित :**							
	सी.फैलकेटम	4.00	26.25	47.17	120.68	23.32	22.10	4.61
	एफ. मोनिलीफॉर्मि	4.75	29.75	49.00	158.05	23.45	32.51	5.81
	एफ. सोलेनाई	4.50	31.50	38.67	167.44	28.48	28.48	5.90
	टी. विरिडी	7.25	54.00	57.87	344.57	55.16	61.47	11.63
3	सी. फैलकेटम + टी. विरिडी	8.75	55.75	73.05	361.12	57.67	63.03	13.76
4	एफ. मोनिलीफॉर्मि+. टी. विरिडी	8.75	57.75	62.50	281.58	44.07	48.56	9.96
5	एफ.सोलेनाई+टी. विरिडी	9.50	64.75	65.25	337.38	60.96	58.01	16.77
	सी.डी. (5% पर)	**2.20**	**10.24**	**10.30**	**87.43**	**19.32**	**11.48**	**4.37**

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

थार रेगिस्तान में उन्नत सौर शुष्क से फल व सब्जियाँ सुखाना

सुरेन्द्र पूनियाँ, ए.के. सिंह, दिलीप जैन एवं आर.के. सिंह

भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर

सर्व विदित है कि ईंधन आधारित ऊर्जा की तेजी से कमी को देखते हुए, अक्षय ऊर्जा दुनिया के भविष्य की ऊर्जा सुरक्षा के लिए सबसे व्यवहार्य विकल्प है। वर्तमान में, दुनिया के वैश्विक बिजली उत्पादन के लिए अक्षय ऊर्जा की हिस्सेदारी 22.8 प्रतिशत है जो ज्यादातर पन बिजली के योगदान से किया जाता है। भारत का कुल पवन ऊर्जा स्थापना में विश्व में 5 वाँ स्थान है। वर्तमान में भारत में ऊर्जा उत्पादन का 13 प्रतिशत नवीनीकरण पवन, सौर तथा बायोमास जैसे श्रोतों के माध्यम से पूरा किया जाता है। जबकि कोयला 60 प्रतिशत योगदान के साथ अभी भी ऊर्जा उत्पादन का मुख्य श्रोत है। वर्तमान में राजस्थान एवं गुजरात सौर ऊर्जा उत्पादन के क्षेत्र में अंग्रणी राज्य हैं एवं कुल सौर ऊर्जा का लगभग 58 प्रतिशत इन राज्यों से उत्पादित की जाती है। केन्द्र सरकार ने राष्ट्रीय सौर मिशन के तहत 2021–22 का 1,00,000 मेगावाट (100 गीगावाट) सौर ऊर्जा पैदा करने का महत्वाकांक्षी लक्ष्य रखा है। इसी तरह राजस्थान रिन्यूएबल एनर्जी कॉर्पोरेशन लिमिटेड ने सन् 2022 तक राजस्थान में 25,000 मेगावाट के सौर ऊर्जा प्लांट लगाए जाने का लक्ष्य निर्धारित किया है।

सूर्य अक्षय ऊर्जा का सबसे बड़ा स्त्रोत है। इसकी औसत ऊर्जा लगभग 6.0 किलो वाट मी$^{-2}$ प्रतिदिन है। यह ऊर्जा का प्रदूषण रहित स्त्रोत है। सौर ऊर्जा के समुचित उपयोग से पारंपरिक स्त्रोतों पर निर्भरता काफी हद तक कम की जा सकती है। थार मरूस्थल देश का एक ऐसा क्षेत्र है जहां सबसे ज्यादा सौर ऊर्जा उपलब्ध रहती है और सबसे ज्यादा समय तक सूर्य प्रकाश उपलब्ध रहता है। शुष्क क्षेत्र में सौर ऊर्जा की प्रचुर मात्रा में उपलब्धता को देखते हुए इसका अधिक से अधिक दोहन हो सकता है। इस कभी खत्म न होने वाली सौर ऊर्जा का उपयोग करने के लिए काजरी ने पिछले तीन दशक में विभिन्न प्रकार के घरेलू, खेती और उद्योग में काम आने वाले सौर यन्त्रों के विकास हेतु शोध कार्य किया जा रहा हैं। सौर ऊर्जा को खाना पकाने, कृषि उत्पादों को सुखाने, पानी गर्म करने, जल को शुद्ध करने, पशु आहार उबालने, आसुत जल उत्पादन, मोम पिघालने, शीत भण्डारण आदि के उपयोग में लिया जा सकता है। इसके अलावा पौधों में दवाई छिड़कने के लिए सोलर स्प्रेयर और सोलर डस्टर भी बनाए गए। वर्तमान में काजरी में कृषि–वोल्टेइक प्रणाली या सौर खेती की परियोजना पर कार्य चल रहा है। जिसके द्वारा एक ही भूमि इकाई से फसल और बिजली, दोनों का उत्पादन किया जा सकता है।

थार रेगिस्तान फल व सब्जियाँ सुखाने के लिये बहुत ही उपयुक्त क्षेत्र है। सूर्य के प्रकाश से खुले मैदान में फलों व सब्जियों को सुखाने की विधि दीर्घकाल से प्रचलित है। इस विधि से फल व सब्जियों को सुखाने पर उपज में धूल गिरती है, कीड़े लग जाते हैं तथा उत्पाद को वर्षा से नष्ट होने का डर रहता है। सूखी हुई पत्तेदार सब्जियाँ तेज हवा में उड़ जाती है। इस समस्या का हल करने के लिए काजरी में सौर शुष्कक का विकास किया गया है। इस संबंध में धनिया, हरी मिर्च, पालक, भिण्डी, टमाटर, मेथी, प्याज, गाजर, फूल, गोभी, पत्ता गोभी, बथुआ, लौकी, शक्कर कन्द, इमली इत्यादि सुखाने के सफल प्रयोग किये गये है। इसमें 80 किग्रा सब्जी चार दिनों में सूख जाती है। इसमें सूखे हुए पदार्थो में कुछ ''इन्सटेन्ट प्रोडक्ट'' भी बनाये गये है जैसे धनिया की चटनी, टमाटर चटनी इत्यादि। जबकि इसकी उम्र करीब 12 साल है। काजरी में एक घरेलू सौर शुष्क भी बनाया गया है जिसमें सभी प्रकार की सब्जियों को सुखाया जा सकता हैं। सूखी हुई फल व सब्जियों के व्यवसायीकरण को राष्ट्रीय व अन्तराष्ट्रीय व्यापारिक पद्धति से जोड़कर आमदनी प्राप्त की जा सकती है। इन सूखी सब्जियों को गृहणियाँ घरों में रख सकती हैं व जरूरत पड़ने पर विभिन्न प्रकार की सब्जियाँ बना सकती हैं तथा विभिन्न प्रकार की इन्सटेन्ट चटनियां व इन्सटेन्ट सूप भी तैयार कर सकती हैं जिससे श्रम व समय की बचत हो सकती है। अतः यह सौर शुष्कक गृहणियों के लिए वरदान है।

सिद्धांत

सौर शुष्क समतल सौर संग्राहक एवं हरित गृह प्रभाव के सिद्धान्त पर आधारित है। सूर्य की लघु/मध्यम तरंगों वाली किरणें (400 एवं 400–700 नैनोमीटर) काँच के तल पर पड़ने के बाद संग्राहक में प्रवेश करती हैं जो दीर्घ तरंग तापीय किरणों में परिवर्तित हो जाती है एवं काँच के तल के बाहर नहीं जा पाती। इससे तापमान काफी हद तक बढ़ जाता है। दिक् कोण एवं लैटीट्यूट के हिसाब से कोण निर्धारित कर अधिकतम सौर ऊर्जा प्राप्त की जा सकती है। चित्र में प्रत्यक्ष एवं परोक्ष सौर शुष्कक दिये हुए है।

प्रत्यक्ष एवं परोक्ष उन्नतसौर शुष्क

उन्नत सौर शुष्कक

निर्माण एवं उपयोग

शुष्क क्षेत्रों में अधिकतम सौर विकिरण एवं न्यूनतम आपेक्षिक आर्द्रता के कारण प्राकृतिक संवहन प्रकार का सौर शुष्क काफी उपयोगी पाया गया है। विद्युत चालित शुष्क काफी महंगा एवं बिजली की उपलब्धता पर निर्भर होने के कारण कम उपयोग में आता है। इसलिए इनक्लाल्ड सौर शुष्कक का विकास किया ताकि पूरे वर्षभर अधिकतम सौर विकिरण प्राप्त की जा सके। बाजरे के तने संग्राहक की पेंदी में बिछा देते है ताकि उष्मा का कम से कम ह्रास हो।

''काजरी'' द्वारा एक ऐसे सौर शुष्कक का निर्माण किया गया है जिसमें दस इकाइयॉ एक क्रम में लगाकर 40 किग्रा पत्तो वाली (पालक, धनियाँ, मेथी, पुदीना एवं बथुआ) एवं 80 किग्रा अन्य सब्जियाँ (भिण्डी, गोभी, ग्वारफली, प्याज, लहसुन, हरी व लाल मिर्च, मटर, चुकन्दर, टमाटर,अरबी, हल्दी, मूली, गाजर, इमली, काचरा, इत्यादि) तथा बेर, खजूर, अंगूर, इत्यादि फल सुखा सकते है (चित्र 2)। इनकों सौर शुष्क द्वारा 2 से 4 दिनों में सुखाया जा सकता है। हरी सब्ज्यों का रंग हरा ही रहता है। सूखी सब्जियों को गर्म पानी में भिगाने से उनका आकार वापस ताजी सब्जी के बराबर हो जाता है तथा बाद में सब्जी बना सकते है। टमाटर, मिर्च एवं धनिया का पाउडर बना लेते है जो इन्स्टेन्ट चटनी बनाने के काम आता है। शुष्क के निर्माण में एल्युमिनियम सा सफेद लोहे की चद्दर, लोहे की एंगल,जंग रहित स्टील की जाली, बाजरा के तने एवं काँच, इत्यादि काम में लेते है। इस शुष्कक के विभिन्न अवयवों के माप निम्नवत है।

काँच का क्षेत्रफलः 1.08 मी.^{2}, **क्षमताः** पत्तीदार सब्जीः 4 कि.ग्रा., अन्य सब्जीः 8 कि.ग्रा., **सुखाने का समयः** पत्तीदारसब्जीः 2 दिन, अन्यसब्जीः 4 दिन, **पे बैक समयः** 2 वर्ष, **कीमतः** रुपये 9,500/–

कार्य निष्पादन एवं मूल्यांकन

सौर शुष्क के कार्य निष्पादन का मूल्यांकन किया गया। बिना सब्जी लोड किये अधिकतम तापमान लगभग 82 सेल्सियस पाया। सब्जी लोड करने पर अधिकतम तापमान 60–65 सेल्सियस के मध्य रहा। यह तापमान ड्राइंग के लिए बहुत ही उपयुक्त है। ट्रे के ऊपर एक काले रंग की पेन्ट की गई जी आई शीट रखकर हम सूखे उत्पाद का रंग एवं गन्ध बरकरार रख सकते है।

इस शुष्क में विभिन्न प्रकार की सब्जियाँ सुखाई गई। सब्जियों को टुकड़ों में काटकर सौर शुष्कक में रखा गया। शुष्क को उचित झुकाव पर प्रत्यक्ष एवं परोक्ष मोड में रखा गया। प्रारंभिक आर्द्रता टमाटर में 95.7 प्रतिशत, पालक में 95.5 प्रतिशत, गाजर में 93.6 प्रतिशत, प्याज में 89.7 प्रतिशत, हल्दी में 87.8 प्रतिशत, धनिया में 89.9 प्रतिशत, भिण्डी में 94.5 प्रतिशत, मैथी में 89.7 प्रतिशत, पुदीना में 89.5 प्रतिशत से कम करके 2.2 प्रतिशत, 2.4 प्रतिशत, 2.6 प्रतिशत, 5.9 प्रतिशत, 1.3 प्रतिशत, 4.7 प्रतिशत, 5.0 प्रतिशत, 0.8 प्रतिशत, 2.0 प्रतिशत, तक क्रमशः लाई गई। सुखाने की अवधि 2 से 4 दिनों के की बीच थी। परोक्ष मोड में प्रत्यक्ष मोड की अपेक्षा 20 प्रतिशत अधिक समय लगता है।

सौर शुष्क की दक्षता निम्नलिखित सूत्र से निकाली गई।

$$\eta = \frac{ML}{A \int_0^{\theta} H_T d\theta}$$

जहाँ:

A: शुष्कक का क्षेत्रफल,(मी^{2}), H_T: शुष्कक के तल पर सौर विकिरण (जूल मी$^{-2}$), L: वाष्पन की गुप्त उष्मा, (जूल कि.ग्रा.$^{-1}$), M: सब्जी से वाष्पीकृत भार की मात्रा (कि.ग्रा.), θ: परीक्षण अवधि, (घंटा), η: सौर शुष्क की दक्षता

सौर शुष्क की दक्षता 17.75 प्रतिशत पाई गई। किसानों के पास जब सब्जियों की मात्रा व उत्पादन अधिक हो तो उस समय सुखाकर बाद में अधिक कीमत पर बेच भी सकते है। इन सुखाई गई सब्जियों को मौसम बीत जाने के बाद ऊँचे दामों पर बेचकर अत्यधिक आय प्राप्त की जा सकती है। सूखी हुई फल व सब्जियों के व्यवसायीकरण को राष्ट्रीय व अन्तराष्ट्रीय व्यापारिक पद्धति से जोड़कर आमदनी प्राप्त की जा सकती है। इन सूखी सब्जियों को गृहणियाँ घरों में रख सकती हैं व जरूरत पड़ने पर विभिन्न प्रकार की सब्जियाँ बना सकती हैं तथा विभिन्न प्रकार की इन्सटेन्ट चटनियां व इन्सटेन्ट सूप भी तैयार कर सकती हैं जिससे श्रम व समय की बचत हो सकती है। अतः यह सौर शुष्क गृहणियों के लिए वरदान है।एक सौर शुष्क, जिसकी क्षमता 10 कि.ग्रा. है, की कीमत करीब रुपये 9,500 है। इस तरह पूरी इकाई, जिसमें 10 सौर शुष्कक लगे होते हैं, की कीमत रुपये 95,000 है।यह शुष्कक विकासशील देशों के लिए वरदान है।

सारांश

राजस्थान के थार मरूस्थल में कृषि उत्पादों को सुखाने के लिए बिजली से चलने वाले उपकरण काम में लिए जाते है लेकिन हमारे कई गांवो मे बिजली नही है और अगर कही उपलब्ध है तो वह काफी महंगी पडती है जो कि एक साधारण किसान की आर्थिक क्षमता के बाहर है लेकिन हमारा यह सौभाग्य है कि यहां शुष्क क्षेत्र में सौर ऊर्जा प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है, जिसका उपयोग फल व सब्जियों को सुखाने के लिए किया जा सकता है। इन उपरोक्त समस्याओं को हल करने के लिए केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान (काजरी) ने सौर ऊर्जा का उपयोग कर कम कीमत के उन्नत सौर शुष्क बनाए गए हैं। काजरी का यही उद्देश्य है कि काजरी में निर्मित सौर यन्त्रों का लाभ सीधे खेतों मे पहुंचा कर किसानों की आमदनी बढाई जा सके।

आरोग्य एवं संजीवनी प्रभाग

शहरों में सब्जी उत्पादन करें व निरोग रहें

अर्चना सिंह[1] एवं ए.के. सिंह[2]

कृषि विज्ञान केन्द्र, मसौधा फैज़ाबाद

नरेन्द्र देव कृषि विश्वविद्यालय, कुमारगंज, फैजाबाद

आजकल शहरों में इतनी जगह नहीं मिल पा रही है कि आवश्यकतानुसार कुछ पौधे लगाए जा सकें। ऐसी स्थिति में छतों पर गृहवाटिका या अलग – अलग कंटेनरों में सब्जियॉ लगाई जा सकती हैं। सब्जियॉ मानव भोजन का एक अभिन्न अंग है। सब्जियॉ पोषक तत्वों जैसे कि विटामिन, मिनरल, कार्बोहाइड्रेट एवम् प्रोटीन का एक महत्वपूर्ण सस्ता एवं बहुतायत में उपलब्ध श्रोत है। एक वयस्क मनुष्य को प्रतिदिन 300 ग्राम सब्जियों की जरुरत होती है। जिसमें लगभग 125 ग्रा. हरी पत्तेदार सब्जियॉ, 100 ग्रा. कंद वाली व 75 ग्रा. अन्य सब्जियॉ है। लेकिन अगर वास्तविक स्थति देखी जाए तो भारत में प्रति वयस्क सब्जियों की उपलब्धता काफी कम है। इससे यह पता चलता है कि अभी देश में सब्जी उत्पादन की संभावनायें है। शहरी क्षेत्रों में बढ़ती आवश्यकता, कम होती भूमि हमारे समकक्ष एक बहुत बड़ी चुनौती है तथा इस चुनौती का सामना करने के लिए या तो हमें सब्जियों की उपज को बढ़ावा देना होगा या फिर बागवानी के अन्य अउपलब्ध श्रोतों का इस्तेमाल करना पड़ेगा।

आजकल शहरों में इतनी जगह नहीं मिल पा रही है कि आवश्यकतानुसार गमले या छत पर सब्जी उत्पादन शहरी क्षेत्रों में ताज़ी सब्जियॉ प्राप्त करने का एक अत्याधुनिक एवं अविश्कारिक तरीका है। शहरी क्षेत्रो में यह एक बहुत ही आवश्यक एवं स्वास्थ्य की दृष्टि से बहुत ही महत्वपूर्ण कार्य है। यदि छत पर गृहवाटिका बनाने का विचार हो तो छत को मज़बूत बनाकर जल निकास का उचित प्रबंध करना चाहिए। गृहवाटिका बनाने के लिए छत पर मिट्टी की 15 से 25 से. मी. मोटी तह बिछाई जाती है। इस मिट्टी में एक तिहाई बालू व एक तिहाई गोबर की सड़ी खाद मिलाना आवश्यक है।

गमले या अन्य कनटेनर

विभिन्न प्रकार के कन्टेनर जैसे कि सीमेंन्ट के गमले, मिट्टी के गमले, प्लास्टिक बाल्टी, पूराने बेसिन, लकड़ी के कन्टेनर, बैरल, क्रेट्स आदि जिन्हे फेंक दिया जाता है उनका इस्तेमाल करके हम विभिन्न प्रकार की सब्जियॉ उगा सकते हैं। ध्यान में रखने वाली बात यह है कि इन सभी तरह के डिब्बों, ड्रम, गमले आदि में कम से कम एक छिद्र होना जरूरी है जिससे अतिरिक्त पानी का निकास हो सके।

इन गमलों, डिब्बो आदि को छत पर या अन्य किसी भी स्थान पर या अन्य स्थान पर जहॉ अच्छी सूर्य की किरणें मिले, रखना चाहिए। गमलों के माध्यम से हम अपने घरों की सुन्दरता भी बढ़ा सकते है इससे घर का वातावरण/पर्यावरण भी शुद्ध होता हैं। बागवानी में मुख्यतः खुरपी, पानी का हज़ारा, हैन्ड स्प्रेयर आदि की जरूरत पड़ती हैं। अच्छी उपजाऊ मिट्टी, बालू, पूरी तरह से सड़ी हुई खाद (कम्पोस्ट)

नाइट्रोजन के लिए यूरिया एवं अमोनियम सल्फेट, कीटनाशक (मैलाथियान, एल्ड्रिन आदि) एवं फफूँदीनाशक (कैन्टान) आदि बेहद जरूरी है। इन सबके अतिरिक्त अच्छा सीड/पौध सबसे महत्वपूर्ण है जिसे किसी भी राज्य कृषि विश्वविद्यालयों, पूसा इंस्ट्टूट, के.वी.के. या सरकारी पौधशाला से प्राप्त किया जा सकता है। बीज/पौध लगाने से पूर्व मिट्टी, बालू व खाद को बराबर मात्रा में मिला लें। यहॉ घ्यान दें कि मिट्टी में किसी भी प्रकार के कीट/फफूँद आदि न रहें एवं इसे सुनिश्चित करने के लिए मिट्टी में 5 प्रतिशत एल्ड्रीन या नीम की खली मिलाकर ही उसे गमले इत्यादि में भरें। एक बार फसल लेने के बाद गमले को खाली कर दें तथा मिट्टी को कुछ दिन खुली धूप में छोड़ दें जिससे कि उसमें अगर कोई फफूँद/कीट हो तो वह मर जाय। इस मिट्टी को पुनः खाद मिलाकर इस्तेमाल में लाएं।

सब्जियों की बुआई

बैगन, मिर्च, टमाटर, प्याज आदि को छोड़कर ज्यादातर सब्जियों का सीड सीधे गमले/कनटेनर में लगाते हैं। उपरोक्त सब्जियों की पौध किसी कम गहराई वाले गमले आदि में आसानी से पैदा की जा सकती है जिन्हे बाद में गमलों/कनटेनर आदि में रोपित किया जाता है। बैगन, मिर्च, टमाटर की 1 – 2 पौध प्रति गमले (30 से.मी. ऊँचे व चौड़े) एवं प्याज़, लैट्यूस, पार्सले आदि की दो से ज्यादा पौध प्रति गमले रोपित की जा सकती है। इसी तरह खीरा, कद्दू, करेला, भिंड़ी, बीन के प्रति गमले 2 – 3 बीज लगाएं जाते हैं। मूली, गाजर,

शलजम आदि के 3 – 5 बीज़ एक गमले में बोये जाते हैं। बीज़ की मात्रा एवं पौध की संख्या गमलें/कनटेनर की व्यास के अनुसार घटाये व बढ़ाये जा सकते हैं।

पौध सब्जियों की देखभाल

सब्जियों की देखभाल बहुत ही महत्वपूर्ण, विशेषकर पौधे की सिंचाई। सिंचाई मौसम एवं पौध के प्रकार पर निर्भर होती है। अत्यधिक गर्म मौसम में दिन में दो बार सिंचाई की जरूरत पड़ती है जबकि जाड़े के मौसम में दो दिन में एक बार सिंचाई की जरूरत पड़ती है। सिंचाई मुख्यतः सुबह एवं शाम या दोनों समय की जाती है। वर्षा के समय में गमलों/कंटेनरो से पानी का

निकास अत्यंत महत्वपूर्ण है एवं ज्यादा बरसात के समय गमलों आदि को थोड़ा सा टेढ़ा करके भी रखा जा सकता है जिससे पानी का निकास आराम से हो जाता है।

नाइट्रोजन (यूरिया) अमोनिया सल्फेट पौधे के लिए एवं अच्छी उपज के लिए अत्यंत ही महत्वपूर्ण है। 5 – 10 ग्रा. यूरिया नम मिट्टी में (2–3 सप्ताह के पौधे में) डालना चाहिए। इसे पौधे की आवश्यकता के अनुसार या 7 – 10 दिन के अंतराल पर डालते रहना चाहिए। अगर अमोनिया सल्फेट का इस्तेमाल करें तो यूरिया से दो गुना उर्वरक डालें। ध्यान दें कि उर्वरक बहुत ही हानिकारक होता है और इसकी मात्रा ज्यादा होते ही पौधे की अच्छी तरह से सिंचाई करें जिससे की पौध को हानि से बचाया जा सके।

निराई–गुड़ाई

समय पर खरपतवार आदि निकालते रहें एवं खुरपी से गुड़ाई करते रहें। गुड़ाई से मिट्टी का वातावरण अच्छा बना रहने में मदद मिलती है तथा पौधे अच्छी तरह से बढ़ते हैं। पालक, चौलाई, मेथी आदि में हाथ से ही खरपतवार निकालें एवं खुरपी का इस्तेमाल ना करें।

खरपतवार नाशी रसायनों का प्रयोग नहीं करना चाहिए। आवश्यकता होने पर नीम के तेल या किसी अन्य जैविक कीटनाशी का प्रयोग किया जा सकता है। पौधों में समय से सिंचाई करने से पौधों की वृद्धि अच्छी होती है। सिंचाई का कार्य पाइप के आगे फौवारा लगाकर या हजारे से या घरेलू बर्तन की सहायता से किया जा सकता है। पौधों में साबुन के पानी का प्रयोग कभी न करें, क्योंकि यह पानी पौधों को बहुत नुकसान करता हैं। दो सिंचाई के बीच का अंतर कम रखना चाहिए। गर्मी में सिंचाई का अंतर केवल 3 – 4 दिन व शीतकाल में 6 – 8 दिन रखना चाहिए। वर्षाकाल में जल निकास का उचित प्रबंध होना अति आवश्यक है अन्यथा छत खराब होने का डर रहता हैं।

कीट तथा बीमारियों से बचाव

समय–समय पर कीटों तथा रोगों से बचाव करना भी आवश्यक हैं। सब्जियों में कई प्रकार की बीमीरियों एवं कीट आदि लगते हैं। वैसे तो भिन्न–भिन्न कीटों तथा रोगों के लिए भिन्न–भिन्न दवाओं का प्रयोग किया जाता हैं, लेकिन कीटनाशी तथा फफूँदीनाशक दवाओं का प्रयोग करने से पहले स्थानीय कृषि विज्ञान केन्द्र या अन्य संस्था से सलाह करके ही दवा का प्रयोग करना चाहिए। ज्यादातर नीम की खली, नीम की पत्ती व बीज, से निर्मित कीटों के लिए मैलाथियान (2 मि.ली./लीटर पानी) इस्तेमाल करना चाहिए। फफूँद के लिए कैप्टान (2 ग्रा. प्रति लीटर पानी) इस्तेमाल करना चाहिए।

कम समय व छोटी बढ़वार वाली सब्जियॉ छत पर लगाकर आप ताज़ी व पौष्टिक सब्जियॉ ले सकते हैं, इससे जहॉ एक ओर आप साग – सब्जियों को उगाकर, उनका सेवन कर अपने शरीर को स्वास्थ रखा जा सकता है वहीं दूसरी तरफ घर खर्च को कम कर सकते हैं तथा खाली समय में पेड़ – पौधों के साथ कार्य करके अपने शरीर को सुडौल बनाया जा सकता है। सही समय से सब्जियों की तुड़ाई करने से गुंणवत्ता वाली सब्जियॉ प्राप्त होती है। विलायती या कम उगाई जाने वाली सब्जियों की खेती अच्छी आमदनी का श्रोत है तथा गमलों या कंटेनरों का इस्तेमाल करके

इन सब्जियों को समय से पहले उगाने पर महॅगी सब्जी खरीदने से छुटकारा मिल जाता है। समय – समय पर मौसम के अनुसार सब्जियों का रोपण कर आप वर्ष भर सब्जियों प्राप्त कर सकते हैं।

कंटेनर बागवानी हेतु सब्जियॉ एवं उनकी किस्में :

क्र. सं.	सब्जियॉ	किस्में	बुआई का समय	कुल अवधि
1.	टमाटर	पूसा अर्ली ड्वार्फ, पूसा रूबी, पूसा गौरव, पूसा उपहार, पूसा सदाबहार, पूसा रोहिजी, पूसा शीतल, पंतबहार टी – 3	फरवरी एवं अगस्त	60 से 65 दिन
2.	बैंगन	पूसा परवल क्लस्टर, पूसा पर्पिल लांग, पूसा क्रांति,	फरवरी – मार्च एवं जुलाई	45 से 60 दिन
3.	मिर्च	पूसा ज्वाला, पूसा सदाबहार, एन. पी 46ए, पूसा सी – 1	फरवरी एवं जुलाई	50 से 60 दिन एवं 45 से 60 दिन
4.	शिमला मिर्च	कैलिफोर्निया वंडर, यलो वंडर, पूसा दिप्ती	फरवरी एवं जुलाई	
5.	मूली	पूसा देसी, पूसा रेशमी	अक्टूबर, दिसम्बर	30 दिन
6.	गाजर	पूसा केसर, पूसा मेघाली, पूसा यमदगनी	अक्टूबर, से दिसम्बर	90 से 120 दिन
7.	चौलाई	छोटी चौलाई, बड़ी चौलाई	फरवरी, मार्च एवं जुलाई, अगस्त	20 से 25 दिन
8.	मेथी	पूसा अर्ली बंचींग, कसूरी मेथी	सितम्बर, दिसम्बर	40 से 45 दिन

क्र. सं.	सब्जियॉ	किस्में	बुआई का समय	कुल अवधि
9.	पालक	पूसा ज्योति, पूसा हरित, आल ग्रीन	सितम्बर, दिसम्बर	50 से 60 दिन
10.	राज़मा	पूसा पार्वती कनटेंडर	फरवरी से सितम्बर	50 से 55 दिन
11.	बोड़ा/लोबिया	पूसा दो फसली, पूसा फाल्गुनी, पूसा कोमल, पंत कोमल	फरवरी, मार्च एवं जुलाई	55 से 60 दिन
12.	भिंडी	पूसा छावनी, पूसा मखमली, पूसा ए– 4, परभनी क्रांति	फरवरी, मार्च एवं जुलाई, अगस्त	50 से 60 दिन
13.	करैला	पूसा विशेष, पूसा दो मौसमी, अर्का हरित, पंत करैला – 1, पूसा बारहमासी	फरवरी, मार्च	50 – 60 दिन
14.	खीरा	पूसा उदय, जापानी लांग ग्रीन	फरवरी, मार्च एवं जुलाई, अगस्त	45 से 50 दिन
15.	प्याज	पूसा रेड, पूसा रतनार, पूसा माधवी, एन– 55 आदि	सितम्बर, अक्टूबर	80 से 90 दिन
16.	लहसुन	ऐग्री फाउंड व्हाइट, लोकल किस्में	अक्टूबर	130 से 150 दिन

इसके अतिरिक्त शलजम, चुकंदर, विलायती पालक, पुदीना, बीन (ग्वार) एवं अन्य कद्दू वर्गीय सब्ज़ियों की भी सफलतापूर्वक खेती की जा सकती है। कुछ विशेष सब्जियॉ जिनमें मुख्यतः सेलरी, बुसेल्स स्प्राउट, पार्सले, लेट्यूस, नोल खोल आदि की खेती बहुत ही लाभदायक हो सकती हैं।

इस प्रकार से यह कहा जा सकता है कि गमलों या कंटेनरों में सब्जी उत्पादन से निष्चित रूप से एक अच्छी आमदनी एवं शहरी क्षेत्रों में अच्छा वातावरण प्राप्त होता है।

शहरों में सब्जी उत्पादन

ब्रोकली

लम्बा बैंगन

गोल बैंगन

शिमला मिर्च

पत्ता गोभी

शिमला मिर्च

खरबूज

आलू

टमाटर

स्ट्राबेरी

प्याज

नेनुआ

मिर्च

छत पर लौकी

राजमा की फली

लेबिया

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

मृदा की उर्वरा शक्ति को बढ़ाने में फसल अवशेषों के उपयोग का महत्व

ओम प्रकाश[1], अजय कुमार साह[1], अश्वनी दत्त पाठक[1], अभिषेक कुमार सिंह[1] एवं पल्लवी यादव[2]

[1]भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ
[2]चंद्रभानु गुप्त कृषि स्नातकोत्तर कॉलेज, बक्शी का तालाब, लखनऊ

फसलों की कटाई के बाद बचे हुए डंठल, करवी, सूखी व हरी पत्तियाँ, धान का पुआल, भूसा, पेड़–पौधों की टहनियाँ तथा फसल के अन्य भाग जो खेत में फसल की कटाई के बाद पड़े रह जाते हैं उनको फसल अवशेष के नाम से जाना जाता है। हमारे देश में फसलों के अवशेषों का उचित प्रबंधन करने पर कोई ध्यान नहीं दिया जा रहा है। इनका उपयोग मृदा में जीवांश पदार्थ की मात्रा बढ़ाने के साथ–साथ घरेलू उपयोग में किया जाता है। अन्य अवशेष जैसे गन्ने की हरी पत्तियाँ, आलू, मूली की पत्तियाँ आदि को पशुओं को चारे के रूप खिलाने हेतु उपयोग की जाती है।

पिछले कुछ वर्षों में यह समस्या मुख्य रूप से बढ़ती जा रही है, विशेष करके जहाँ कंबाईन हार्वेस्टर के द्वारा फसलों की कटाई की जाती है। इन क्षेत्रों में फसल के तने के अधिकतर भाग खेत में खड़े रह जाते है तथा वहाँ के किसान खेत फसल के अवशेषों को आग लगाकर जला देते है। अधिकतर रबी में गेहूँ की कटाई के पश्चात यह देखने को मिलता है। इस समस्या की गंभीरता को देखते हुए प्रशासन द्वारा बहुत से जिलों में तो जलाने पर रोक भी लगा दी गयी है तथा किसानों को प्रशासन, कृषि विभाग एवं संबन्धित संस्थाओं द्वारा इस बारे में समझाने के प्रयास भी किए जा रहे हैं कि किसान भाई अपने खेतों के अवशेषों में आग न लगाकर इसे खेत में मिलाकर उर्वरता को बढ़ाने में उपयोग करें।

इस समय फसल अवशेषों का उचित उपयोग न करके इसका दुरुपयोग कर रहे हैं। यदि इन अवशेषों को सही ढंग से खेती में उपयोग करें तो इसके द्वारा पोषक तत्वों के बहुत बड़े अंश की पूर्ति इनके उपयोग के द्वारा प्राप्त कर सकते हैं। फसलों की कटाई के बाद फसल अवशेषों को खेत में जलाने सें लाभ की जगह नुकसान ज्यादा होता ही होता है। वातावरण संरक्षण और मिट्टी की उत्पादता को बनाए रखने के लिए फसल अवशेष सबसे महत्वपूर्ण प्राकृतिक संसाधन है।

फसल अवशेषों में उपलब्ध पोषक तत्वों की मात्रा

किसान भाई फसल अवशेषों में उपलब्ध मुख्य पोषक तत्वों का सदुपयोग कर मृदा में पोशक तत्वों की मात्रा में वृद्धि कर सकते है। फसल अवशेषों में उपलब्ध पोषक तत्वों का विवरण (तालिका–1) इस प्रकार से है।

तालिका–1: विभिन्न फसलों के अवशेषों में मुख्य पोषक तत्वों की उपलब्ध मात्रा (प्रतिशत में)

फसल के अवशेष का नाम	फसल अवशेष में मुख्य पोषक तत्वों की उपलब्ध मात्रा (प्रतिशत में)		
	नाइट्रोजन	फास्फोरस	पोटाश
गेहूँ का भूसा	0.50	0.25	1.28
गन्ने की हरी, सूखी पत्तियाँ व अन्य भाग	0.35	0.04	0.50
धान की फसल का पुआल	0.58	0.23	1.66
राई / सरसों के तने एवं पत्तियाँ	0.57	0.28	1.40
मक्का की करवी	0.59	0.31	1.31
बाजरे की करवी	0.65	0.75	1.50
धान की भूसी	0.40	0.25	1.40
मूँगफली के दाने का छिलका	0.70	0.48	1.40
आलू की पत्तियाँ	0.58	0.09	1.85
पेड़–पौधों की पत्तियाँ व टहनी	1.50	0.45	2.50
केले की फसल के अवशेष (कम्पोस्ट बनाकर उपयोग करने पर)	1.87	3.43	0.45

फसल के अवशेष का नाम	फसल अवशेष में मुख्य पोषक तत्वों की उपलब्ध मात्रा (प्रतिशत में)		
	नाइट्रोजन	फास्फोरस	पोटाश
चना	1.19	–	1.28
अन्य दालें	1.60	0.15	2.00
अरहर	1.10	0.58	1.28
ज्वार	0.40	0.23	2.17

(स्रोत : आंशिक संदर्भ खाद पत्रिका), मई, 2012, पृष्ठ संख्या 10 एवं 23)

भारत में फसल अवशेष जलाने वाले अग्रणी राज्य

फसल अवशेष को जलाने में पंजाब, हरियाणा तथा पश्चिमी उत्तर प्रदेश सबसे आगे हैं। इसके अलावा आंध्र प्रदेश, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, पूर्वी उत्तर प्रदेश तथा बिहार में भी फसल अवशेष जलाने की प्रथा है।

फसल अवशेष को जलाने के मुख्य कारण

किसान अपनी सुविधा और आसानी के लिए फसल अवशेष को खेत में ही जला देते हैं। फसल अवशेष को खेत में जलाने के पीछे कई अपने–अपने तर्क देते हैं किसान भाई निम्न कारणों से फसल अवशेषों को जला देते हैं–

- अगली फसल की जल्दी बुवाई के लिए।
- कम लागत में खेत खाली करने के उद्देश्य से।
- मृदा जनित रोगों के प्रभाव को कम करने के लिए।
- खरपतवारों को कम करने के लिए।

फसल अवशेष को जलाने से हानियाँ

फसल अवशेषों को खेत में जलाने से लाभ की जगह नुकसान ज्यादा होता है। जिनमें मानव स्वास्थ, पर्यावरण एवं मृदा पर पड़ने वाले विभिन्न दुष्प्रभाव एवं हानियाँ इस प्रकार से हैं –

मृदा के भौतिक गुणों पर प्रभाव

फसल अवशेषों को जलाने के कारण मृदा तापमान में वृद्धि होती है, जिसके कारण मृदा की सतह कड़ी हो जाती है, मृदा सघनता में वृद्धि होती है। मृदा की जल धारण क्षमता में कमी आती है। मृदा संरचना बिगड़ जाती है। जिससे मृदा की उर्वरा शक्ति पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

मृदा में उपस्थित लाभदायी सूक्ष्म जीवों की संख्या पर प्रभाव

फसल अवशेषों को जलाने के कारण मृदा में मौजूद सूक्ष्म जीवों की संख्या पर बुरा प्रभाव पड़ता है जिससे लाभदायक जीव–जंतुओं की संख्या मृदा में काफी कमी हो जाती है।

मृदा में उपलब्ध पोषक तत्वों का ह्रास

फसल अवशेषों को जलाने के कारण मृदा में उपलब्ध पोषक तत्वों (नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटाश एवं गंधक) के अलावा मृदा में उपलब्ध कार्बनिक पदार्थ का ह्रास भी होता है। मृदा विश्लेषण के आधार पर फसल अवशेष जलाने से मृदा में उपलब्ध नाइट्रोजन की लगभग 70 प्रतिशत मात्रा, उपलब्ध फास्फोरस तथा पोटाश की लगभग चौथाई मात्रा का नुकसान होता है, जिससे मृदा की उर्वरा शक्ति एवं उत्पादकता में गिरावट आती है। प्रमुख फसलों के अवशेष जलाने से पोषक तत्वों का ह्रास की मात्रा का विवरण इस प्रकार से है –

फसल नाम	पोषक तत्व का नाम एवं ह्रास की मात्रा (क्वि./वर्ष)			
	नाइट्रोजन	फास्फोरस	पोटाश	कुल मात्रा का ह्रास
धान	23.6	0.9	20.0	44.5
गेहूं	7.9	0.4	6.10	14.4
गन्ना	7.9	0.1	3.30	11.3

वायु प्रदूषण में वृद्धि

खेतों में फसल अवशेषों को जलाने के कारण अत्याधिक मात्रा में वायु प्रदूषण होता है। जिससे विभिन्न प्रकार की हानिकारक गैसें जैसे कार्बन डाइऑक्साइड, कार्बन–मोनो–आक्साइड, मीथेन एवं नाइट्रस–आक्साइड आदि के ज्यादा उत्सर्जन होने के कारण ग्लोबल वार्मिंग होती है।

पशुओं हेतु पशु चारे में कमी

फसल अवशेषों को पशुओं के लिए चारे के रूप में भी प्रयोग किया जाता है, इनके जलाने से पशुओं को चारे की कमी का सामना करना पड़ता है।

मानव स्वास्थ्य पर पड़ने वाले हानिकारक प्रभाव

फसल अवशेषों के जलाये जाने पर मानव स्वास्थ्य पर कई प्रकार के हानिकारक प्रभाव पड़ते है, इनका विवरण निम्नवत् है–

- अवशेष जलाने पर अस्थमा और दमा जैसी सांस वाले रोगियों को धुएँ से काफी परेशानी महसूस होती है। इस तरह की बीमारी से पीड़ित मरीजों की संख्या में बढ़ोत्तरी

हुई है।

- अवशेष जलाने से उत्पन्न जहरीली गैसों के फैलने से आँखों में जलन होने लगती है।
- चर्म रोग की शिकायत भी बढ़ जाती है।

पर्यावरण संबंधी दुष्परिणाम

- धुंधलापन जैसी स्थिति पैदा होने के कारण वातावरण में धुंधलापन छा जाता है, इसके फलस्वरूप दुर्घटनाओं के आसार बढ़ जाते है।
- फसल अवशेषों जलाते समय आस–पास के पेड़–पौधों एवं अन्य लाभकारी वनस्पतियों को भी नुकसान पहुंचता है।
- ग्रीन हाउस गैसों का अधिक मात्रा में उत्सर्जन से वैश्विक तपन (ग्लोबल वार्मिंग) बढ़ता है।

फसल अवशेषों को मृदा में अपनाने के लाभ

फसल अवशेषों को खेत में ही अपनाने के कई फायदें हैं जिनमें से प्रमुख इस प्रकार से हैं –

मृदा कार्बनिक पदार्थ में वृद्धि

कार्बनिक पदार्थ मृदा की उर्वरा भाक्ति को बढ़ाने में अहम् भूमिका होती है। जिसके द्वारा ही फसलों की उत्पादकता एवं गुणवत्ता में वृद्धि होती है तथा मृदा में उपलब्ध विभिन्न पोषक तत्व फसलों को उपलब्ध होते हैं। यांत्रिक विधि से की गई फसल की कटाई में फसल अवशेष काफी मात्रा में रह जाते हैं जोकि खेत में सड़कर मृदा में कार्बनिक पदार्थ की मात्रा में वृद्धि करते हैं।

पोषक तत्वों में वृद्धि

फसल अवशेषों में लगभग सभी पोषक तत्वों की मात्रा पायी जाती है। अगर फसल अवशेषों को मृदा में ही मिला दिया जाए उस स्थिति में मृदा में पोषक तत्वों की वृद्धि हो जाती हैं। जिसका कि तालिका 1 में वर्णन किया जा चुका है।

मृदा के भौतिक गुणों में सुधार

मृदा में फसल अवशेषों को मिलाने से मृदा की परत में कार्बनिक पदार्थ की मात्रा बढ़ जाने के कारण मृदा की सतह की कठोरता कम हो जाती है। जल धारण क्षमता बढ़ जाती है। मृदा क्षरण कमी कमी आती है। वायु संचार में वृद्धि होती है।

मृदा उर्वरता में सुधार

फसल अवशेषों को मृदा में मिलाने से मृदा के रासायनिक गुण जैसे उपलब्ध पोषक तत्वों की मात्रा, मृदा की विद्युत चालकता एवं मृदा पी.एच. में सुधार होता है। मृदा में धान के अवशेषों का बायाचार करने पर मृदा की उर्वरा शक्ति बढ़ती है।

फसल उत्पादकता में वृद्धि

फसल अवशेषों को मृदा में मिलाने पर उगाने वाली फसल की उत्पादकता में वृद्धि होती है तथा रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग की आवश्यकता कम हो जाती है।

सिंचाई जल की बचत

फसल अवशेषों को मृदा में मिलाने से मृदा की ऊपरी सतह में पर्याप्त नमी बनी रहती है। जिससे बोई जाने वाली फसल हेतु सिंचाई की आवश्यकता कम पड़ती है जिससे सिंचाई जल की मात्रा की बचत होती है।

फसल अवशेष प्रबंधन की कृशि में आज की आवश्यकता

किसान भाइयों को फसल के अवशेषों का उचित उपयोग कर मृदा की उर्वरता को बढ़ाने के बारे में सोचना चाहिए। माना जाता है कि संरक्षित कृषि के लिए एक तिहाई (33 प्रतिशत) फसल अवशेषों को मृदा की सतह पर रखना अनिवार्य होता है। जो मृदा की उर्वरा शक्ति को दीर्घकालिक कृषि योग्य बनाते है।

फसल अवशेष जलाने से पैदा हुए धुऐं से फैलता प्रदूषण

फसल अवशेष से भूसा बनाने का दृश्य

स्ट्रा बेलर द्वारा खेत में पड़े फसल अवशेषों का ब्लाक बनाने का दृश्य

मिश्रित करना

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

उन्नत तकनीक अपनाएं लीची उपज बढ़ाएं

कुलदीप श्रीवास्तव, शेषधर पाण्डेय, रामकिशोर पटेल, राजीव रंजन राय एवं विशाल नाथ

भाकृअनुप–राष्ट्रीय लीची अनुसंधान केन्द्र, मुजफ्फपुर (बिहार)

लीची एक उपोष्ण कटिबन्धीय, सदाबहार फल वृक्ष है जो एक विशेष जलवायु में ही अच्छी पैदावार देता है जिसके कारण यह विश्व के कुछ ही राष्ट्रों में व्यवसायिक रूप से उगाया जाता है। चीन, थाइलैण्ड, ताइवान, वियतनाम, भारत जैसे देश जो उत्तरी गोलार्द्ध में स्थित हैं, वहाँ लीची अप्रैल–जुलाई माह में पक कर तैयार होती है जबकि दक्षिण गोलार्द्ध वाले देशों में लीची दिसम्बर–जनवरी माह में तैयार होती है लीची उत्पादन में चीन पहले स्थान पर आता है परन्तु उत्पादकता की दृष्टि से भारत का सर्वोच्च स्थान है। भारत में मुख्य रूप से बिहार, प. बंगाल, उत्तराखंड, उत्तर प्रदेश, त्रिपुरा, पंजाब, आसाम, आदि राज्यों में लीची की बागवानी की जाती है परन्तु बिहार इनमें अग्रणी राज्य है।

लीची एक स्वादिष्ट फल है जिसके सुगंन्धित गूदे में मिठास एवं खटास का अच्छा मिश्रण होने के कारण इसे मुख्यतः ताजे फलों के रूप में पसंद किया जाता है। साथ ही साथ, इससे अन्य प्रसंस्कृत पदार्थ जैसे लीची नट, डिब्बा बन्द लीची, लीची शर्बत, लीची सोमरस, इत्यादि पदार्थ बनाये जाते हैं। लीची के फलों का औषधीय महत्व भी है। इसके उपयोग से कफ, गैस, ग्रन्थियों की वृद्धि एवं ट्यूमर इत्यादि रोगों से राहत मिलती है।

मृदा एवं जलवायु

लीची में अपेक्षित वानस्पतिक वृद्धि तथा फलन के लिए जलवायु एक मुख्य कारक माना जाता है। किसी भी स्थान की जलवायु यह निर्धारित करती है कि वहाँ पर लीची की खेती हो सकती है या नहीं। जलवायु के अन्तर्गत प्रकाश, तापमान, आर्द्रता, हवा का वेग इत्यादि की अहम भूमिका होती है। साधारणतः लीची की खेती उत्तर भारत के कम उँचाई वाले मैदानी क्षेत्र तथा दक्षिण भारत के अधिक ऊँचाई वाले पहाड़ी क्षेत्रों में की जा सकती है जहाँ सर्दी तथा गर्मी वाली जलवायु पायी जाती है। ऐसे स्थान जहाँ सर्दियों में दिन छोटे और ठण्डे (20° सेंटीग्रेड से कम) परन्तु पाला रहित तथा गर्मियों में दिन लम्बे, उष्ण (25° सेंन्टीग्रेट से अधिक) तथा वर्षा 1200 मिलीमीटर से अधिक होती है, लीची की सफल बागवानी के लिए सर्वोत्तम पाये जाते हैं। लीची में अच्छे फूल आने के लिए कम से कम 200 घंटों तक शून्य से 13° सेटीग्रेट तापमान तथा जमीन में नमी की कमी अत्यंत आवश्यक होती है। उत्तर भारत में यह परिस्थिति दिसम्बर–जनवरी में उपलब्ध रहती है, जबकि दक्षिणी भारत के पहाड़ी क्षेत्रों में जुलाई से सितम्बर के मध्य यह परिस्थिति पैदा होने की सम्भावना रहती है। फल विकास के समय $20–35^{\circ}$ सेन्टीग्रेड तापमान वाले क्षेत्र लीची के लिए सर्वोत्तम पाये गये हैं। लीची की सफल बागवानी के लिए 1200–1500 मिलीमीटर वर्षा वाले क्षेत्र अत्यन्त उपयुक्त पाये जाते हैं।

सामान्य तौर पर लीची की उत्तम बागवानी के लिए अच्छे जल निकास, कार्बनिक तत्वों तथा सामान्य पी.एच. वाली जलोढ़ बलुई एवं दोमट मिट्टी सबसे अच्छी पायी गयी है। बलुई दोमट मिट्टी की परिस्थतियों में जड़ों का विकास गहरा होता है जिनमें पानी एवं पोषक तत्वों को अवशोषित करने की क्षमता होती है जबकि भारी मिट्टी में जड़ों का विकास उथला होता है। 40 प्रतिशत से अधिक चिकनी मिट्टी, काली मिट्टी व लाल लेटराइट मिट्टी में विशेष जल प्रबन्ध की व्यवस्था के साथ लीची की खेती की जा सकती है।

5.5–6.5 पीएच मान वाली मिट्टी लीची के लिए उपयुक्त मानी गई है परन्तु 4.5–5.5 पी.एच. मान वाली अम्लीय, 8.5 पी. एच. मान तक वाली क्षारीय मिट्टी में इसकी खेती सफलतापूर्वक की जा सकती है।

प्रमुख किस्में

भारत में लीची की लगभग 35 किस्में उपलब्ध हैं जिनमें केवल 5–6 किस्में ही व्यवसायिक खेती के लिए उपयुक्त पायी गयी हैं। बिहार राज्य जहाँ पर भारत में सबसे ज्यादा उत्पादन एवं क्षेत्रफल है, में भी केवल शाही, चाइना, रोज सेण्टेड, बेदाना किस्में ही व्यवसायिक बागवानी में प्रचलित हैं। बिहार में मुख्यतः शाही एवं चाईना किस्में ही किसानों में प्रचलित है जिनका विवरण निम्नवत है :

शाही

यह बिहार तथा निकटवर्ती राज्यों झारखण्ड, उत्तराखण्ड तथा उत्तर प्रदेश की एक महत्वपूर्ण किस्म है। यह नियमित फलन एवं 80–100 कि.ग्रा./वृक्ष उत्पादन देने वाली अगेती किस्म है। इसके फल अंडाकार से गोलाकार और गहरे लाल रंग के होते हैं जो मई के द्वितीय सप्ताह से मई के अन्तिम सप्ताह में पकते हैं। इसके फल का वजन 20–25 ग्राम तक होता है। गूदे धूसर एवं मिठास (T.S.S) 20.3° ब्रिक्स होता है। इसका बीज बड़ा तथा आकार लम्बा व रंग चमकीला होता है जिनका वजन 3–4 ग्राम/बीज होता है।

चाइना

यह अधिक उत्पादन देने एवं गर्म हवाओं, मृदा में नमी की असमानता एवं फल फटने की समस्या के प्रतिरोधक एक मध्यम पछेती व्यवसायिक किस्म है। इस किस्म के फलों की परिपक्तवता का समय झारखंड एवं पश्चिम बंगाल में जून का दूसरा सप्ताह एवं बिहार में जून का तीसरा और अंतिम सप्ताह होता है। औसत उपज 80–100 किग्रा/वृक्ष होता है परन्तु इसमें एकान्तर फलन की समस्या आती है। प्रति फल वजन 22–27 ग्राम तक होता है फल पकने पर गहरे गुलाबी रंग के दिल के आकार के होते हैं जिनके सतह उभार लिए हुए होते हैं। गूदा हल्का, उजला, मुलायम, रसदार, मीठा (T.S.S 20.2° ब्रिक्स)होता है। बीज का वजन 3.49 ग्राम/बीज होता है।

पौध प्रवर्धन

मुख्य रूप से लीची के पौधे दो तरीके से बनाए जा सकते हैं, प्रथम–लैंगिक विधि जिसमें पौधों को बीज द्वारा तैयार किया जाता है तथा द्वितीय–अलैंगिक विधि, जिसमें पौधों को वानस्पतिक भाग द्वारा तैयार किया जाता है। बीज द्वारा तैयार पौधों में अत्यधिक भिन्नता होती है जिसे मुख्य रूप से मूलवृन्त अथवा नए किस्मों के खोज के लिए प्रयोग किया जाता है। लीची के बीजू पौधे धीमी गति से बढ़ते हैं और लम्बे समय तक तरूण अवस्था में रहते हैं, अतः इस विधि द्वारा तैयार पौधों का व्यवसायिक बागवानी के लिए उपयोग नहीं किया जाता है।

मुख्य रूप से गूटी अथवा एयर लेरिंग अथवा मारकोटेज विधि से लीची के पौध तैयार किये जाते हैं। गूटी तैयार करने की विधि का विस्तृत विवरण निम्नलिखित है :

लीची की व्यवसायिक खेती के लिए गूटी द्वारा तैयार पौधों का उपयोग किया जाना श्रेयस्कर होता है। 5 वर्ष के उपरान्त ही लीची के पौधों में गूटी बॉधना चाहिए, इसके पूर्व नहीं, क्योंकि इस अन्तराल में पौध अपने स्थापना व वानस्पतिक वृद्धि के अवस्था में होते हैं। चुनी हुई डालियों (6–9 माह आयु की टहनियों) पर शीर्ष से 40–50 सेंटीमीटर नीचे किसी गाँठ के पास गोलाई में 2–2.5 सेन्टीमीटर चौड़ा छल्ला ग्राफ्टिंग चाकू के मदद से बना लेते हैं। छल्ले के ऊपरी सिरे पर सेराडेक्स पाउडर या 1000 पी.पी.एम आई.बीए. या आई.ए.ए. का लेप लगाकर छल्ले को नम मॉस घास अथवा मिश्रण से ढ़क कर ऊपर से 400 गेज की पॉलीथीन का 15–20 सेंटीमीटर चौड़ी पट्टी से 2–3 बार लपेटकर सुतली से दोनों सिरों को कसकर बांध दिया जाता है। मॉस घास के बदले लीची के बाग की मिट्टी (20 किग्रा.), गोबर की सड़ी खाद (20 किग्रा.), जूट के बोरे का सड़ा टुकड़ा (5 किग्रा.), अरण्डी की खल्ली (2 किग्रा.), के सड़े मिश्रण का प्रयोग किया जा सकता है। पूरे मिश्रण को अच्छी तरह मिलाकर एवं हल्का नम करकें एक जगह ढेर कर देते हैं तथा उसे जूट के बोरे या पॉलीथीन से 15–20 दिनों के लिए ढक देते हैं। जब गूटी बांधना हो तब मिश्रण को अच्छी तरह गूँथ कर 100 ग्राम की लोई बनाकर छल्ला कटे स्थान पर लगाकर सावधानीपूर्वक गूटी बनाते हैं जिससे स्थापना बेहतर होता है। वर्मीकम्पोस्ट+वर्मीकुलाइट+परलाइट के मिश्रण को भी गूटी को बनाने के लिए प्रयोग किया जा सकता है। गूटी लगभग दो माह में काटने लायक हो जाता है। गूटी काटने के पूर्व डाली की लगभग तीन चौथाई से अधिक पत्तियों एवं अवांछित टहनियों को निकाल देते हैं। गूटी तेज चाकू या सिकेटियर की मदद से छिलके के करीब 2–3 सेंटीमीटर नीचे से काटकर अलग कर लेते है और इसे पॉलीथीन की थैलियों या पौधशाला की क्यारियों में प्रतिस्थापित करते हैं। नियमित तौर पर सिंचाई, कीट व्याधि नियंत्रण करने, पोषक तत्वों के पर्णीय छिड़काव करने और खरपतवार निकालते रहने से स्वस्थ पौधे शीघ्र तैयार हो जाते हैं। भारत में गूटी बांधने का सबसे उपयुक्त समय मानसून की शुरूआत अर्थात् जून–जुलाई का महीना होता है।

खेत की तैयारी

बाग लगाने से पूर्व खेत को ठीक तरीके से जुताई करके उसमें उगी हुई बहुवर्षीय झाड़ियों को निकाल देते हैं जिससे रेखांकन, गड्ढों की खुदाई तथा पौध रोपण में सहायता मिलती है। यदि लीची के बाग को 30–40 प्रतिशत अधिक ढाल वाली जमीन पर लगाना है, तो उसमें ढ़ाल के विपरीत कन्टूर बनाकर मेड़बन्दी करके पौध रोपण करना चाहिए। समतल जमीन पर या कम ढाल वाली जमीन पर गहरी जुताई करके खेत तैयार कर लेते हैं। यदि मृदा का पीएच मान 7–8 के बीच हो, तो खेत में 50 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर की दर से जिप्सम का प्रयोग करने से मृदा पीएच सामान्य स्तर पर पहुँच जाता है। यदि सम्भव हो तो

बगीचा स्थापना से पहले तीव्र गति से बढ़ने वाले वायुरोधी पौधों की 2 कतारों को चारों तरफ लगा देना चाहिए। लीची में पौध रोपण के लिए बाग लगाने की अनेक विधियां प्रचलित हैं परन्तु व्यवसायिक स्तर पर वर्गाकार विधि (8x8 मीटर अथवा 6x6 मीटर) या आयताकार विधि (7x5 अथवा 9x7 मीटर) से पौधा लगाने की सलाह दी जाती है।

गड़ढे की तैयारी एवं पौध रोपण

रेखांकन के उपरान्त चिन्हित स्थान पर अप्रैल–मई माह में 90x90x90 सेमी. आकार के गड़ढे खोदकर ऊपर की आधी मिट्टी को एक तरफ तथा आधी मिट्टी दूसरी तरफ रख देते हैं। वर्षा प्रारम्भ होते ही जून के महीने में 2–3 टोकरी गोबर की सड़ी खाद (कम्पोस्ट), 2 किलोग्राम करंज अथवा नीम की खली, 1 किलोग्राम हड्डी का चूरा अथवा सिंगल सुपर फॉस्फेट एवं 50 ग्राम क्लोरोपायरीफॉस 10 प्रतिशत धूल या 20 ग्राम फ्यूराडान 3 जी को गड्ढे की ऊपरी सतह की मिट्टी में अच्छी तरह मिलाकर गड़ढे को भर देना चाहिए। गड़ढे को खेत की सामान्य सतह से 10–15 से.मी. ऊँचा भरना चाहिए। वर्षा ऋतु में गड़ढे की मिट्टी दब जाने के बाद उसके बीचो–बीच में खुरपी की सहायता से पौधों की पिंडी के आकार की जगह बनाकर पौधा लगा देते है। पौधा लगाने के पश्चात उसके पास की मिट्टी को ठीक ढंग से दबा देते हैं तथा पौधे के चारों तरफ एक थाला बनाकर 2–3 बाल्टी (25–26 लीटर) पानी डाल देना चाहिए। वर्षा न होने की दशा में पौधे को पूर्ण स्थापित होने तक पानी देते रहना चाहिए।

उत्तर भारत में जुलाई–अगस्त का महीना अथवा सिंचाई सुविधा के साथ फरवरी–मार्च का महीना लीची के पौध रोपण के लिए सर्वोत्तम पाया गया है। पूर्ण पौध स्थापना के लिए पौधों को 15 दिन तक प्रतिदिन पानी देने की आवश्यकता होती है। एक बार पौध स्थापना के बाद उसे टपक सिंचाई से आवश्यकतानुसार सिंचाई कर सकते हैं। पौधों के चारों तरफ सूखी घास या पॉलीथीन की पलवार बिछा देते हैं। वर्षा के मौसम में लीची की जड़ों के पास पानी रूकने से पौधों के सूखने की सम्भावना रहती है। अतः पौधों में सक्रिय जड़ तन्त्र के आस–पास अधिक जल जमाव नहीं होने देना चाहिए।

पौध रोपाई के पश्चात पौधों को सीधा बढ़ने के लिए खूटी तथा रस्सी की सहायता से शुरूआत के 3–4 महीनों तक सहारे की आवश्यकता पड़ती है

पौधों को सर्दी से बचाव

लीची के पौधों में ठंड से नुकसान होने की सम्भावना रहती है। उत्तर भारत में नवम्बर से फरवरी तक नवजात पौधों को विशेष रूप से बचाने की आवश्यकता होती है क्योंकि कभी–कभी पाला पड़ने या तापमान में एकाएक कमी आने से पौधों के मरने की सम्भावना रहती है। अतः पौधों को कम से कम एक सर्दी तक अवश्य बचाना चाहिए। पौधों को ठंड से बचाने के लिए इसके चारों तरफ दलहनी फसल जैसे–अरहर की खेती करके अथवा खेत के चारों तरफ वायुरोधक पौधे लगा करके अथवा प्रत्येक पौधे के ऊपर छप्पर बना करके पौधों को बचाया जा सकता है। इसी प्रकार से गर्मी से बचाव के लिए भी पौधों का प्रबन्ध किया जा सकता है। कम खर्च में छप्पर बनाने के लिए सूखी घास, मक्का, बाजरा के डन्ठल या धान का पुआल इत्यादि का प्रयोग किया जा सकता है परन्तु यह ध्यान रखना चाहिए कि पौधों को पर्याप्त रोशनी मिलती रहे इसके लिए झोपड़ी का एक किनारा खुला रहना चाहिए।

अन्तर्सस्य

लीची के नये पौधों में चार से छः वर्षों तक स्थानीय फलों, सब्जियों, फूल, तिलहन, दलहन, इत्यादि की खेती की जा सकती है। लीची के बगीचों में मूँगफली, आलू, चना, मूँग, मटर, शकरकन्द जैसी फसलों तथा फूल गोभी, पत्तागोभी, मिर्च, मूली, बोदी, प्याज, गाजर, भिण्डी, अरबी, आदि सब्जियों, ग्लेडियोलस, गेंदा, आदि फूल, पपीता, केला, अमरूद, अननास, जैसे फलों की खेती जा सकती है। पौधों की स्थापना से लेकर उनके फूलने फलने तक उत्तम बाग प्रबन्ध प्रक्रिया का अनुपालन करने से पौधों का ढांचा निर्माण, वृद्धि एवं विकास इस लायक होता है कि वे आने वाले वर्षों में ज्यादा से ज्यादा एवं उत्तम गुणवत्तापूर्ण फल पैदा कर सकें। इस अवस्था में समुचित पादप संरक्षण, क्षत्रक प्रबन्ध तथा बाग सतह प्रबन्ध से पौधों का समुचित विकास सुनिश्चित किया जा सकता है।

खाद एवं उर्वरक का प्रयोग

लीची के पौधों में उनके विकास एवं वृद्धि तथा फलत की अवस्थाओं के अनुरूप ही खाद एवं उर्वरक का प्रयोग करना चाहिए। लीची के पौधों में देय मात्रा का विवरण सारणी–1 में दिया जा रहा है जिसे एक मार्गदर्शिका के रूप में प्रयोग किया जा सकता है।

खाद देने का समय

पूर्ण विकसित पौधों में यदि सम्भव हो तो कुल उर्वरक की मात्राओं को दो भाग में बाँट कर एक भाग जून–जुलाई में और दूसरा भाग अक्टूबर के महीने में देना लाभदायक होता है। खाद की पूरी मात्रा वर्षा ऋतु से पहले पौधों के चारों तरफ हल्की खाई बनाकर देने से उनका अवशोषण अच्छा होता है। पर्णीय छिड़काव के लिए बोरान, कॉपर, मैंगनीज तथा जिंक इत्यादि का प्रयोग परिपक्व पत्तियों पर करना चाहिए। 25–30 प्रतिशत नत्रजन की मात्रा फल विकास के समय देने से फल का आकार बढ़ जाता है तथा पोटैशियम की 30 प्रतिशत मात्रा का प्रयोग फल विकास के समय पर करने से गुणवत्ता में सुधार होता है। यदि मिट्टी में मैंगनीज की कमी है तो 40 ग्राम मैंगनीज प्रति वर्ग मीटर क्षत्रक फैलाव के अनुसार फल तोड़ाई के समय देने से लाभ होता है।

पोषक तत्वों का पर्णीय छिड़काव

हाल के वर्षों में पौधों पर पोषक तत्वों का पर्णीय छिड़काव अथवा बूंद–बूंद सिचाई के द्वारा पानी में घुलनशील पोषक तत्वों

सारणी–1: लीची में पौध उम्र के अनुसार खाद एवं उर्वरक की संस्तुति

वर्ष	गोबर की खाद (किग्रा.)	खली की खाद (किग्रा.)	नाइट्रोजन (ग्राम)	फॉस्फोरस (ग्राम)	पोटाश (ग्राम)	जिंक (ग्राम)	बोरान (ग्राम)
1	10	1.0	50	25	25	25	–
2	15	1.50	100	50	50	50	–
3	20	2.00	150	125	75	75	–
4	25	2.50	200	150	100	100	–
5	30	3.00	250	200	125	125	125
6	35	3.50	300	250	150	150	150
7	40	4.00	400	350	200	200	200
8	45	4.50	400	350	200	200	200
9	50	5.00	500	400	250	225	225
10 वर्ष से अधिक	60	5.00	600	600	250	250	250

को जड़ के पास देने से लाभदायक परिणाम मिले हैं। इस विधि से पौध विकास के समय नाइट्रोजन के प्रयोग से अधिक बढ़वार मिलती है परन्तु फलत में देरी हो सकती है साथ ही साथ यह भी ध्यान रखना होता है कि पर्णीय छिड़काव के लिए नत्रजनधारी उर्वरक की सान्द्रता 2–4 प्रतिशत से अधिक न हो।

सिंचाई

लीची उत्पादन में जल प्रबन्ध की अहम भूमिका होती है क्योंकि लीची की पौध स्थापना से लेकर विकास तक तथा फल देने वाले पौधों में फल लगने से लेकर फल की परिपक्वता तक पौधों को पानी की आवश्यकता होती है। बहुत से लीची के बगीचे वर्षा आधारित होते हैं जिसके कारण फल विकास की अवस्था में पानी की कमी से उनका उत्पादन एवं गुणवत्ता कम हो जाती है।

लीची के पौधों में पानी की आवश्यकता

लीची के छोटे पौधों में पौधों रोपण से स्थापना तक नियमित सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है जबकि विकसित हो रहे पौधों में गर्मी के मौसम में विशेष रूप से सिंचाई की जरूरत होती है। फल देने वाले पौधों में फल विकास के समय पानी की अधिक आवश्यकता पड़ती है, क्योंकि फल विकास के समय पानी की कमी होने से फलों का विकास रूक जाता है और फल फटने लगते हैं या गिरने लगते हैं। लीची के नए रोपित पौधों में जल की आवश्यकता का विवरण सारणी 2 में दिया गया है।

लीची के दैहिक विकार एवं प्रबन्ध

लीची के पौधों में विशेष करके फलों में अनेक प्रकार के दैहिक विकार देखे गये हैं। जिनमें अनियमित फलन या अफलन, फलों का गिरना, फलों का फटना, फलों का अनयिमित विकास, फलों का झुलसना, इत्यादि प्रमुख हैं।

1. बगीचों में प्रर्याप्त संख्या (10–15 प्रति हेक्टेयर) में मधुमक्खी के छत्ते रखें ।
2. फूल खिलने के समय किसी दवा का छिड़काव न करें।
3. मंजर निकलने के एक महीना पहले जिंक सल्फेट (0.2%) का छिड़काव करें।
4. फल विकास के समय नैथ्थलीन एसिटिक एसिड 20 पी.पी. एम. या प्लैनोफिक्स 2 मि.ली. प्रति 5 लीटर का 25 दिनों के अन्तराल पर दो छिड़काव करें।
5. फलों में रंग परिवर्तन की अवस्था में 0.4% बोरान की 2 छिड़काव करें।

कीट एवं रोग

लीची के वृक्ष में नाना प्रकार के कीट एवं रोग लगते हैं जो कि स्वस्थ फल उत्पादन में सबसे बड़ी बाधा है। जड़ तना, टहनी, पत्ती, फूल फल, कहने का तात्पर्य वृक्ष का ऐसा कोई भी भाग नहीं है जहां कीट का प्रकोप नहीं होता है। प्रमुख कीटों, रोगों एवं उनकी रोकथाम के बारे में संक्षिप्त चर्चा सारणी तीन में की गयी है।

सारणी 2 : लीची के नए रोपित पौधों में जल की आवश्यकता

माह	प्रथम वर्ष	द्वितीय वर्ष	तृतीय वर्ष	4–6 वर्ष	7–12 वर्ष	12 वर्ष से अधिक
मार्च–जून	9.0	30.0	175.0	900	1400	3000
जुलाई–अक्टूबर	5.4	18.0	105.0	270	450	900
नवम्बर–फरवरी	3.0	9.0	60.0	120	200	550

सारणी–2 लीची के प्रमुख कीट, रोग एवं उनका निदान

क्र.सं.	कीट का नाम	क्षति का विवरण	निदान
1.	फल एवं टहनी बेधक	कीट के पिल्लू (लार्वा) नई कोपलों के मुलायम टहनियों में प्रवेश कर उनके भीतरी भाग को खाते हैं परिणामस्वरूप ग्रसित टहनियाँ सूख जाती। इस कीट के पिल्लू नवजात फलों में डंठल के पास छिद्र बनाकर प्रवेश करते हैं जिनके प्रकोप से फल झड़ जाते हैं, जिससे किसानों को काफी आर्थिक नुकसान होता है। कीट के पिल्लू की उपस्थिति की जानकारी नवजात, गिरे एवं परिपक्व फलों के डंठल के पास काले रंग के बुरादे (बिश्ठा) के रूप में होती है।	ग्रसित फल, मंजर एवं जमीन पर गिरे फलों को नष्ट कर दें। आंतग्रही (सिस्टेमिक) कीटनाशी रसायन जैसेः थियाक्लोप्रीड 21.7 एस.सी. या इमिडाक्लोप्रीड 17.8 एस.एल. कीटनाशी का छिड़काव 0.5–0.7 मि.ली./लीटर की दर से 15 दिनों के अंतराल पर सितम्बर माह में 2 बार करें। फल के लौंग आकार की अवस्था होने पर नोवाल्यूरान 10 ई.सी. (1.5 मि.ली./ली.) या ल्यूफेन्यूरान 5 ई.सी. (0.6 मि.ली./ली.) नामक कीटनाशी का दो छिड़काव 10–15 दिनों के अंतराल पर करें। मंझोले आकार के फल होने पर (फल लगने के लगभग 30 दिन उपरांत) होने पर लेम्ब्डासायलोथरीन 5 ई.सी. (0.5 मि.ली./लीटर) या इमामेकटिन बेन्जोएट 5 एस. जी. (0.4 मि.ली./लीटर) नामक कीटनाशी का एक छिड़काव सुनिश्चित करें। संभावित फल तुड़ाई के लगभग 15 दिन पूर्व नोवाल्यूरान 10 ई.सी. (1.5 मि.ली./लीटर) या लेम्ब्डासायलोथरीन 5 ई.सी. (0.5 मि.ली./लीटर) कीटनाशी का एक छिड़काव अवश्य करें।
2.	पत्ती काटने वाला भृंग	ग्रब एवं वयस्क कीट कोमल पत्तियों को खाकर नुकसान पहुँचाते है।	➢ छोटे पौधे एवं टहनियों को हिलाकर कीट को इकट्ठा करके नष्ट कर दे। ➢ बागोन को साफ–सुथरा रखना चाहिये। ➢ महामारी की स्थिति में क्लोरपायरिफॉस 20 ई.सी. 2 मि.ली./लीटर की दर से छिड़काव करें।
3.	लीची मकड़ी	शिशु एवं वयस्क कोमल पत्तियों एवं टहनियों से रस चूसते हैं, परिणामस्वरूप टहनिया सूख जाती हैं।	➢ ग्रसित टहनियों को काटकर नष्ट कर देना चाहिए। ➢ जुलाई माह में क्लोरफेनापायर 10 ई.सी. या प्रोपरगाइट 57 ई.सी. मकड़ीनाशक रसायन का छिड़काव 3 मि.ली./ली. की दर से 15 दिनों के अंतराल दो बार करें। ➢ अक्टूबर माह में नई ग्रसित टहनियों की कटाई–छटाई एवं क्लोरफेनापायर 10 ई.सी. या प्रोपरगाइट 57 ई.सी. मकड़ीनाशक रसायन का छिड़काव 3 मि.ली./ली. की दर से करें। ➢ अगर बाग में लीची मकड़ी का प्रकोप दिखता है तो आवश्यकतानुसार उपर वर्णित मकड़ीनाशक का एक छिड़काव पुष्पक्रम निकलने के बाद एवं फूल खिलने के पहले करें।

क्र.सं.	कीट का नाम	क्षति का विवरण	निदान
4.	लीची सेमीलूपर	सूडियां मूलायम पत्तियों को खाकर नुकसान पहुचाँती है।	➢ बहुतायत की स्थिति में डेल्टामेथ्रिन 2.8 ई.सी. 1.0 मि.ली./ली. या क्लोरपायरिफॉस 20 ई.सी. 2 मि.ली./ली. के घोल का छिड़काव करें।
5.	लीची बग	शिशु एवं वयस्क कीट कोमल पत्तियों एवं टहनियों से रस चूसते हैं जिसके परिणामस्वरूप टहनिया कमजोर हो जाती है।	➢ नीम आधारित रसायनों या नीम बीज अर्क का प्रयोग कर इस कीट को पौधों पर आने से रोका जा सकता है। ➢ बहुतायत की स्थिति में इमिडाक्लोप्रीड 17.8 एस. एल. 0.5 मि.ली. या डाईमेथोएट 30 ई.सी. 2 मि.ली./ली. के घोल का छिड़काव करें।
6.	पत्ती लपेटक कीट	कीट की सूडियां पत्तियों को लम्बवत् लपेटकर अंदर से खाती हैं।	➢ नाइट्रोजनयुक्त उर्वरकों का कम प्रयोग करें। ➢ प्रकोप कम हो एंव पौधे छोटे हों तो प्रभावित पत्तियों को हाथ से तोड़कर नष्ट करें। ➢ प्रकोप अधिक होने पर इमिडाक्लोप्रीड 17.8 एस. एल. 0.5 मि.ली./लीटर या फिप्रोनील 5 एस.सी. 2 मि.ली./लीटर की दर से छिड़काव करें।
7.	छाल खाने वाला सूंड़ी	सूडियां प्रारम्भ में छाल को खरोंचकर खाती हैं तथा बाद में जोड़ो से तने में प्रवेश कर अंदर ही अंदर तने को खाकर खोखला कर देती हैं, जिसके परिणामस्वरूप पौधा सूख जाता है।	➢ प्रकाश प्रपंच स्थापित कर व्यसक कीट को इकट्ठा कर नष्ट करें। ➢ तने एवं टहनियों पर लगे जाले को साफ कर प्रत्येक छिद्र में लम्बा तार डालकर खुरचने से कीट के पिल्लू मर जाते हैं। ➢ नारियल झाडू से पहले जाला साफ करके प्रत्येक छिद्र के अंदर मिट्टी तेल/पेट्रोल/फिनाइल/डाईक्लोरवॉस 100 ई.सी. 2.0 मि.ली./ली. घोल से भीगी रूई को ठूंसकर भर दें एवं छिद्रों के ऊपर गीली मिट्टी का लेप लगा दें।
8.	भयामवर्ण रोग	रोग के संक्रमण की शुरूआत फल पकने के 15–20 दिन पहले होती हैं पर कभी–कभी लक्षण फल तुड़ाई–उपरांत तक दृश्टिगोचर हो सकते हैं। फलों के छिलकों पर छोटे–छोटे (0.2–0.4 से.मी.) गहरे भूरे रंग के धब्बे दिखाई पड़ते हैं जो आगे चलकर एक दूसरे के साथ मिलकर काले और बड़े आकार के (0.5–1.5 से. मी.) धब्बों में परिवर्तित हो जाते हैं।	➢ बचाव के लिए मैन्कोजेब या कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (0.2:) 2 ग्राम/ली0 पानी के घोल का छिड़काव करें।
9.	पर्ण चित्ती रोग	पर्ण चित्ती मुख्यतः जुलाई महीने में दिखने शुरू होते हैं । पत्तों पर भूरे या गहरे चॉकलेट रंग की चित्ती सामान्यतया पुरानी पत्तियों के ऊपर प्रकट होती हैं।	➢ प्रभावित भाग की कटाई–छँटाई कर, जमीन पर गिरी हुई पत्तियों के साथ समय–समय पर जला देना चाहिए।

क्र.सं.	कीट का नाम	क्षति का विवरण	निदान
			➢ बचाव के लिए मैन्कोजेब या कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (0.2%) 2 ग्राम/ली. पानी के घोल का छिड़काव करें। ➢ रोग की तीव्रता ज्यादा हो तो रोकथाम के लिए कार्बेन्डाजिम 50% डब्लूपी या क्लोरोथैलोनिल 75 %डब्लूपी 2 ग्राम ग्राम/ली. पानी के घोल का छिड़काव करना चाहिए।
10.	पत्ती एवं कोपल झुलसा रोग	इस रोग से पौधों की नई पत्तियाँ एवं कोपलें झुलस जाती हैं। रोग की शुरूआत पत्ती के सिरे पर ऊतकों के मृत होने से भूरे धब्बे के रूप में होती है जिसका फैलाव धीरे–धीरे पूरी पत्ती पर हो जाता है। रोग की तीव्रता की स्थिति में टहनियों के ऊपरी हिस्से झुलसे दिखते हैं।	➢ बचाव के लिए मैन्कोजेब या कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (0.2%) 2 ग्राम/ली0 पानी के घोल का छिड़काव करें। ➢ रोग की तीव्रता ज्यादा हो तो रोकथाम के लिए कार्बेन्डाजिम 50% डब्लूपी या क्लोरोथैलोनिल 75%डब्लूपी 2 ग्राम/ली. पानी के घोल का छिड़काव करना चाहिए।
11.	फल विगलन रोग	इस रोग का प्रकोप फल परिपक्व होने के समय होता है, जिसके फलस्वरूप छिलका मुलायम हो जाता है और फल सड़ने लगते हैं।	➢ फल तुड़ाई के 15–20 दिन पहले पौधों पर कार्बेन्डाजिम 50 डब्लूपी 2 ग्राम/ली. पानी के घोल का छिड़काव करें। ➢ फलों को तोड़ने के शीघ्र बाद पूर्वशीतलन उपचार (तापक्रम 4^0 से. एवं नमी 85–90%) करें। ➢ फलों की पैकेजिंग 10–15 प्रतिशत कार्बनडायऑक्साइड गैस वाले वातावरण के साथ करें।

लीची की नियमित एवं गुणवत्ता पूर्ण उत्पादन के लिए सुझाव

लीची के पौधों में नियमित तथा गुणवत्तापूर्ण उत्पादन के लिए अनेक उपाय सुझाए गये हैं जिनका सही ढ़ग से अनुपालन करने से लीची किसानों को अत्यधिक लाभ प्राप्त हो सकता है, कुछ प्रमुख बिन्दु निम्नलिखित हैं :

1. पोषक तत्वों का ठीक ढंग से प्रबन्ध
2. पौधों की समय पर आवश्यकतानुसार सिंचाई
3. फूल आते समय परागकण कीटों की संख्या में बढ़ोत्तरी
4. पौधे में मजबूत और फल देने वाली शाखाओं का विका
5. फसल तोड़ाई के तुरंत बाद कांट–छांट
6. गुच्छों से अतिरिक्त फलों को काटकर हटना
7. पौधों के थालों का ठीक ढ़ग से प्रबन्ध
8. पौधों की जड़ों अथवा तनों को पर्याप्त सहारा प्रदान करना
9. कीट एवं रोग प्रबन्ध के कार्यक्रम को पूर्णरूपेण लागू करना
10. मंजर आने के संभावित समय से 3 माह पहले पौधों में सिंचाई न करें तथा ऐसी अन्तर्सस्य फसल न लगाएं जिनमें पानी की आवश्यकता हो
11. मंजर आने के 30 दिन पहले पौधों पर जिंक सल्फेट (2 ग्राम/लीटर के घोल) का पहला एवं 15 दिन बाद दूसरा छिड़काव करने से मंजर एवं फूल अच्छे आते हैं
12. फूल आते समय पौधों पर कीटनाशी दवा का छिड़काव न करें तथा बगीचे मे पर्याप्त संख्या में मधुमक्खी के छत्ते रखें
13. फल लगने के एक सप्ताह बाद प्लैनोफिक्स (2 मि. ली/5ली.) या एन.ए.ए. (20 मि.ग्रा./ली.) का एक छिड़काव करके फलों को झड़ने से बचाया जा सकता है
14. फल लगने के 15 दिन बाद से बोरिक अम्ल (4 ग्राम/ली.) या बोरेक्स (5 ग्राम/ली.) के घोल का 15 दिनों के अंतराल पर तीन छिड़काव करने से फलों का झड़ना कम हो जाता है, मिठास में वृद्धि होती है, तथा फल के आकार एवं रंग में सुधार के साथ–साथ फल फटने की समस्या भी कम हो जाती है

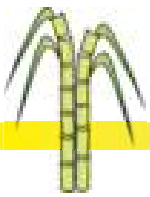

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

धान में जल बचत की तकनीकः एरोबिक धान

राम किशोर, वरूचा मिश्रा, ए. के. मल्ल एवं अश्विनी दत्त पाठक

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

बदलते हुऐ जलवायु परिस्थितियों में जल का संकट होना तय है। क्योकि विगत वर्षो का वर्षा हाने का अवधि का अध्ययन करे तो 2002 और 2009 के दौरान पानी की कमी ने विशेष रूप से पूर्वी उत्तर प्रदेश बिहार, ओडिशा, झारखण्ड, छत्तीसगढ़ राज्यों में चावल के उत्पादन को काफी हद तक प्रभावित किया हैं। हाल ही में जलवायु परिवर्तन के अनुसार आने वाले वर्षो में पानी के घाटे की स्थिति में गिरावट का अनुमान लगाते है। जिससे खेती करने में लागत अधिक लगेगी जो किसानों के लाभ को कम करेगा। जिससे परिणाम स्वरूप भोजन की असुरक्षा विशेष रूप से चावल में, जलवायु परिवर्तन में बढ़ती तापमान के कारण होती है। तराई जो धान उत्पादन को काफी हद तक प्रभावित किया है। हाल ही में जलवायु परिवर्तन के अनुसार आने वाले वर्षो में पानी के घाटे की स्थिति में गिरावट का अनुमान लगाते है। जिससे खेती करने में लागत अधिक आएगी जो किसानों के लाभ को कम करेगा। जिसके परिणाम स्वरूप भोजन की असुरक्षा विशेष रूप से, चावल में, जलवायु परिवर्तन में बढ़ती तापमान के कारण होती है। तराई जो धान उत्पादन का एक अच्छा क्षेत्र है, वहाँ पर भी पानी का स्तर लगातार कम हो रहा है। इसके साथ–साथ पंजाब और हरियाणा जैसे पारंपरिक सिचित क्षेत्रों में भी जल संकट का पता चलता है यहाँ सिचाई के लिए भूमिगत जल संसाधनों के अधिक से अधिक शोषण के कारण पानी का स्तर लगातार कम हो रहा है।

एरोबिक चावल भूमिगत जल संसाधनों की चुनौती के साथ पानी की कमी वाले क्षेत्रों के लिए एक आशाजनक तकनीकी के रूप में विकसित किया गया है। इसे मूल रूप में गेहूँ और मक्का फसलों की तरह प्रबंधित किया जाता है। जहाँ मृदा अबाधित रहती है, गैर संतृप्त और अच्छी तरह से सूखा हुआ है। यह सूखी मृदा में सीधे बारिश युक्त ऊपरी–ऊपरी अनुक्रम में जहाँ बारिश कम होता है। अनुकूल बंधे हुए ऊपरी इलाके में उथले निचले इलाकों और सिचाई से माध्यम् भूमि में होती है साथ में शोध प्रबंध क्षेत्रों में भारत के कुल चावल के बढ़ने वाले इलाकों में से लगभग आधा हिस्सा है। एरोबिक चावल सामान्य प्रत्यारोपित चालत की तुलना में कम से कम 30 प्रतिशत पानी की बचत करता है। एरोबिक चावल में भरपूर फसल के लिए उपयुक्त विविधता और साथ ही बेहतर प्रबंधन आवश्यक है।

उपयुक्त किस्में

- वैज्ञानिकों द्वारा अनुमोदित किस्में जो सूखा–सहनशीलता और उगने वाले चावल और उच्च क्षमता वाले निचले भूमि चावल की प्रतिस्पर्धा क्षमता के लिए उपयुक्त है।

फसल की स्थापना

- भूमि तैयार करने से पहले कम से कम एक महीने के लिए खेत को छोड़ देना।
- सीधे बीज बोने के लिए 50–60 किलोग्राम/हेक्टेयर बीज की आवश्यकता पड़ती है तथा 15 x 20 सेमी. की दूरी पर तथा शुष्क मौसम में 15 x 15 सेमी. की दूरी पर 4.5–50 किलोग्राम/हेक्टेयर की आवश्यकता पड़ती है।
- बुवाई का सबसे अच्छा समय जून का पहला सप्ताह से दूसरा सप्ताह का होता है।
- अच्छी कम्पोस्ट खाद का प्रयोग बुवाई के समय कूड़ में करने से उपज अच्छी मिलती है।
- बुवाई के बाद एक हल्की सिंचाई करनी चाहिए।

फसल प्रबंधन

- तेज प्रारभिक विकास करने वाली उपयुक्त किस्म का चयन करना चाहिए।
- खरपतवार नियंत्रण के लिए बुवाई के तीसरे एवं पाँच वे सप्ताह में प्रक्षेत्र से घास निकालने का काम करें।
- 2–3 सप्ताह के अन्तराल पर पूर्व निकलने वाली घास की रोकथाम के लिए 1 लीटर व्यूटा क्लोर या प्रीलेटाक्लोर का छिड़काव करना लाभप्रद रहता है।

पोषक तत्वों का प्रबंधन

- मृदा में पोषक तत्वों को बनाये रखने के लिए प्रति हेक्टेयर 375 किलोग्राम एस एस पी तथा
- खैरा रोग की रोगथाम के लिए 20 किलोग्राम जिंक सल्फेट और 30 किलोग्राम फेरस सल्फेट का प्रति हैक्टर से प्रयोग करें।

सिचाई को प्रबंधन

- कल्ले, बाली, आते समय, दाना बनते समय पानी देना अत्यन्त जरूरी होता है।
- प्रक्षेत्र में जब दरार आने लगे तब मृदा संतृप्ति के लिए पानी देना आवश्यक होता है।
- खेत में पानी उचित मात्रा में देने का प्रयास करना चाहिए।

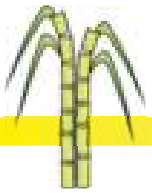

उत्पादकता और पानी का उपयोग

अन्तराल (दिनों में)	उपज टन/हे.	पानी की आवश्यकता (मि.मी./हे.)	जल बचत (%)
0. दिन	4.50–5.25	1700–1800	–
4–5 दिनों तक	4.35–4.90	1200–1300	29.0–30.0
6–7 दिनों तक	4.40–4.95	900–1000	40.0–45.0
8–10 दिनों तक	2.85–3.00	600–700	60.0–65.0

पादप संरक्षण

- अपेक्षाकृत गर्म एवं सूखा वातावरण होने के कारण कीट एवं रोग कम ही लगते है फिर भी रोग या कीट दिखाई दे तो उचित मात्रा में कीट नाशक का प्रयोग करें।
- मृदा जनित रोग की रोकथाम के लिए उचित मात्रा में कवकनाशक का प्रयोग करें।

फसल चक्र

- यदि पैदावार में गिरावट हो तो जाँच के लिए उपयुक्त फसल चक्र का पालन किया जाय।
- सूखे मौसम में उरद, लोबिया, मूँग (कम दिनों में पकने वाली किस्में) का प्रयोग करें।

उत्पादन तथा लागत का आकलन

- ऐरोबिक धान की खेती एक जल बचत तकनीक है जिसे उपज गिरावट के साथ किसी भी प्रकार समझौता के बिना पानी की अधिकतम बचत पर ध्यान रखते हुए विकसित किया गया है।
- इस तकनीक से 1500–1700 हे. मिली मी. से 1000–1200 हे. मिली मी. के पारपरिक सिंचाई पानी को कम करके पानी की दर 40 प्रतिशत पानी की बचत आँकी गई है।

महत्वपूर्ण बिन्दुओ पर विचार

- अनुमोदित किस्मों का चयन करें।
- उन्नत फसल प्रबन्धन, पोषक तत्व एवं खरपतवार नियंत्रण प्रबंधन का सुमूचित पालन किया जाय।
- उपयुक्त फसल चक्र अपना कर उपज में गिरावट से बचा जा सकता है।

ऊर्ध्वमूलमधःशाखमश्वत्थं प्राहुरव्ययम्।
छन्दांसि यस्य पर्णानि यस्तं वेद स वेदवित्।।

श्री भगवान बोले–आदिपुरुष परमेश्वररूप मूलावाले[1] और ब्रह्मारूप मुख्य शाखावाले[2] जिस संसाररूप पीपल के वृक्ष को अविनाशी[3] कहते है, तथा वेद जिसके पत्ते[1] कहे गये हैं– उस संसाररूप वृक्ष को जो पुरुष मूलसहित तत्त्व से जानता है, वह वेद के तात्पर्य को जानने वाला है[2]।

[1]आदिपुरुष नारायण वासुदेव भगवान् ही नित्य और अनन्त तथा सबके आधार होने के कारण ऊर्ध्व नाम से कहे गये हैं और वे मायापति, सर्वशक्तिमान् परमेश्वर ही इस संसार रूप वृक्ष के कारण हैं, इसलिये इस संसार–वृक्ष को 'ऊर्ध्व मूल वाला' कहते हैं।

[2]उस आदि पुरुष परमेश्वर से उत्पत्ति वाला होने के कारण तथा नित्यधाम से नीचे ब्रह्मलोक में वास करने के कारण, हिरण्यगर्भरूप ब्रह्मा को परमेश्वर की अपेक्षा 'अधः' कहा है और वही इस संसार का विस्तार करने वाला होने से इसकी मुख्य शाखा है, इसलिये इस संसार वृक्ष को 'अधः शाखा वाला' कहते हैं।

[3]इस वृक्ष का मूल कारण परमात्मा अविनाशी है तथा अनादिकाल से इसकी परम्परा चली आती है, इसलिये इस संसार वृक्ष को 'अविनाशी' कहते हैं।

स्रोत :– गीता अध्याय–18

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

चुकंदर बीज उत्पादन के तरीके

वरूचा मिश्रा, ए. के. मल्ल, अश्विनी दत्त पाठक एवं राम किशोर

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

स्वस्थ्य एवं उच्च गुणवत्ता वाले बीज का उपयोग किसी भी फसल की उच्च उत्पादन का एक मूल कारण होता है। चीनी उत्पादन करने वाली फसलों में, गन्ने के बाद चुकंदर की फसल का स्थान प्राप्त है। हालांकि चुकंदर एक शीतोष्ण फसल है परन्तु यह उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में सर्दी के फसल के रूप में लगाई जाती है जब कि कम तापमान वाले क्षेत्रों में इसको बसंत फसल के रूप में लगाया जाता है। इस सन्दर्भ में उच्च गुणवत्ता वाले चुकन्दर के बीज का उत्पादन एक अहम कदम है। चुकन्दर के बीज के उत्पादन हेतु आवश्यक अनुकूल शर्तों में से एक वनस्पतिक चुकंदर के पौधों का कई हफ्तों के लिए कम तापमान पर अनावरण है। इसके अतिरिक्त वर्नेलाईजेशन की प्रक्रिया के पश्चात् 15°C से अधिक मौसम का तापमान नहीं होना चाहिए क्योंकि ऐसा होने से डीवर्नेलाईजेशन की प्रक्रिया पर प्रभाव पड़ता है। उच्च बीज उत्पादन हेतु फसल की विभिन्न चरणों में अनुकूल परिस्थितयों का होना भी एक अहम शर्त है। जिसमें विशेषकर चुकन्दर की फसल में पुष्पन के लिए सापेक्ष वायु आद्रता 60 से 70 प्रतिशत व तापमान 35°C से अधिक नहीं होना चाहिए। पुष्पन की अवधि छोटी होनी चाहिए जिससे बीजों का परिपक्वन एक समान हो।

भारतीय स्थिति में, चुकंदर के बीज को जून माह में विभिन्न क्षेत्रों में बोया जाता है। जुलाई माह में विरलीकरण व एकीकरण की प्रक्रिया की जाती है जिससे चुकंदर की संख्या को नियमित किया जा सके। जुलाई माह में इस फसल में नत्रजन का उपयोग किया जाता है। दिसम्बर माह थर्मल प्रेरण प्रदान करने के लिए, पत्तियों को हटाया जाता है तथा जड़ों को 2 इंच मृदा से ढ़का जाता है। फरवरी माह के दौरान नई पत्तियाँ निकलती हैं तथा बाद में पुष्प निकलते हैं। इस तरह जुलाई माह में बीज का उत्पादन होता है।

चुकंदर की बीज उत्पादन हेतु प्रक्रियाएं

इस फसल के बीज उत्पादन प्रक्रिया में दो अहम चरण होते हैं

वनस्पतिक चरण (बीज से स्टेकलिंग तक)

वर्नेरलाईड पौधों से बीज उत्पादन

यह दोनों चरण एक खेत में (प्रत्यक्ष उत्पादन विधि) या दो अलग–अलग विशेष क्षेत्रों में अलग–अलग फसलों (स्टेकलिंग ट्रास्प्लार्टिंग विधि) के रूप में हो सकते हैं। मल्टीजर्म किस्मों के लिए बीज उत्पादन के सिद्धांत एकाकी अनंकुरण किस्मों के लिए बहुत अलग नहीं होती हैं। मल्टीजर्म बीज मुख्य रूप से प्रत्यक्ष उत्पादन विधि का उपयोग करके उत्पादन किया जाता है।

प्रत्यक्ष उत्पादन विधि

इस विधि में बीज को उस क्षेत्र में बोया जाता है जहाँ बीज उत्पादन किया जाना हो। यह विधि प्रमाणित चुकंदर के बीज उत्पादन हेतु पसंद की जाती है।

ट्रांस्प्लार्टिंग विधि

इस विधि में कुछ चयनित चुकंदर के पौधों की स्टेकलिंग को उस क्षेत्र में लगाया जाता है जहां बीज उत्पादन की अनुकूल परिस्थिति होती है। भारत में, मुक्तेश्वर स्थान को चुकंदर की बीज उत्पादन हेतु अनुकूल पाया गया है। इस सन्दर्भ में भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ चुकंदर के बीजों का उत्पादन मुक्तेश्वर केन्द्र में कर रहा है। इस संस्थान के वैज्ञानिक चुकंदर के स्टेकलिंग को लखनऊ में उगा कर मुक्तेश्वर केन्द्र में ट्रांसप्लांट करते हैं जिससे बीज के उत्पादन में कम समय लगता है। स्टेकलिंग को ठंड के मौसम आने से पूर्व ट्रेन्च में लगाया जाता है जिससे फसल को अत्याधिक कम तापमान का सामना करना पड़े। इसके साथ ही बसंत में इसको ट्रांस्प्लान्ट किया जाता है। यह विधि आमतौर पर अभिजात वर्ग व आधार बीज उत्पादन हेतु प्रयोग किया जाता है। यह पूर्णतः जड़ की विशेषताओं पर आधारित होती हैं। किसान इस विधि को प्रमाणित बीज उत्पादन हेतु अपना सकते हैं। इस विधि द्वारा बीज उत्पादन हेतु पंक्ति से पंक्ति के बीच की दूरी 50 सेंटीमीटर व पौधे से पौधे के बीच की दूरी 30 सेंटीमीटर रखी जाती है। फरवरी माह के बाद, उर्वरक का उपयोग किया जाता है। इस समय उर्वरक की मात्रा में नत्रजन 240 किलोग्राम (दो खुराखों में) 80 किलोग्राम P_2O_5 तथा 80 किलोग्राम K_2O प्रति हेक्टयर दी जाती है। एक अच्छी चुकंदर की फसल 16–18 कुन्तल बीज प्रति हेक्टेयर उत्पादित करती है।

चुकंदर के बीज उत्पादन हेतु कुछ आवश्यक जानकारियां

- जिन खेतों में चुकंदर की फसल को बीज उत्पादन हेतु लगाया गया हो उनको अन्य खेतों से दूर रखना चाहिए जिससे शुद्धता बनी रहे।
- उन चुकंदर की किस्मों के लिए जिनमें एक समान विशेषतायें हैं 0.8 किलोमीटर की दूरी पर्याप्त होती हैं। परन्तु उन किस्मों के लिए जो अभिजात है या विशेषताओं में भिन्न है उनके बीच की दूरी 3.2 से 4.8 किलोमीटर तक आवश्यक होती है।

चुकंदर के बीज उत्पादन हेतु शायद ही कभी एक खेत में लगातार चुकंदर की फसल को लगाया जाता है। ज्यादातर यह गेंहूँ, बीन्स, सब्जियों, इत्यादि के साथ चक्रानुक्रम में की जाती है जिससे रोगों, जड़ बेधक तथा निमेटोड को नियंत्रित किया जा सके।

चुकंदर के बीज के उत्पादन की प्रक्रिया

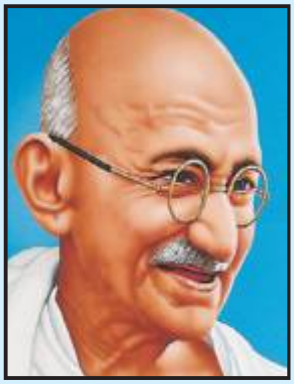

अगर हिन्दुस्तान को सचमुच एक राष्ट्र बनाना है तो चाहे कोई माने या न माने, राष्ट्रभाषा हिन्दी ही बन सकती है, क्योंकि जो स्थान हिन्दी को प्राप्त है, वह किसी दूसरी भाषा को कभी नहीं मिल सकता। हम किसी भी हालत में प्रांतीय भाषाओं को मिटाना नहीं चाहते, हमारा मतलब संबंधों के लिए हम हिन्दी सीखें।

– महात्मा गाँधी

आरोग्य एवं संजीवनी प्रभाग

संश्लेषित/कृत्रिम दुग्ध की जाँच

अतुल कुमार सचान, ब्रह्म प्रकाश, योगेन्द्र प्रताप सिंह, लाल सिंह गंगवार एवं अश्विनी दत्त पाठक

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

भारत में दुग्ध की माँग बढ़ती जा रही हैं, उतनी ही तेजी से इस माँग को पूरा करने के लिए अपराधिक एवं लालची प्रवृति के लोगों द्वारा कृत्रिम (सिन्थेटिक) दुग्ध बनाना शुरू कर दिया है। खासकर त्योंहारों एवं शादियों के दिनों में तो इसका प्रचलन और भी ज्यादा बढ़ जाता है। यह मिलावटी दुग्ध खासकर छोटे बच्चों एवं वृद्धों के स्वास्थ्य के लिए बहुत ही हानिकारक होता है।

संश्लेषित दुग्ध के रासायानिक घटक

कृत्रिम दुग्ध बनाने में प्रायः रिफाइन्ड ऑयल, माल्टोज, यूरिया, सोडियम सल्फेट, अरारोट, डिटर्जेंट, सस्ता शैम्पू, चीनी, पेंट, मोबिल ऑयल आदि पदार्थों का प्रयोग किया जाता है। इस कृत्रिम दुग्ध में वसा की मात्रा 4.5–5.0 प्रतिशत तथा एस.एन.एफ. की मात्रा लगभग 9.0 प्रतिशत रखी जाती है। कृत्रिम दुग्ध देखने तथा सूँघने में असली दुग्ध की तरह ही प्रतीत होता है। यह दुग्ध हल्की सी कड़वाहट लिए होता है। इस कड़वाहट को दूर करने के लिए इसमें 20–25 प्रतिशत तक असली दुग्ध मिलाया जाता है। अतः इस दुग्ध की जाँच करना आवश्यक हो जाता है ताकि मनुष्यों के सेहत से होने वाले खिलवाड़ से बचा जा सके।

सिन्थेटिक दुग्ध की जाँच

कृत्रिम दुग्ध की जाँच निम्न प्रकार की जा सकती है

दुग्ध में सोडा तथा डिटर्जेंट की जाँच मिलावटी दुग्ध की जाँच के लिए दुग्ध के सैम्पल को ध्यानपूर्वक देखना चाहिए एवं इसकी गन्ध को सूँघना चाहिए। कृत्रिम दुग्ध की जाँच के लिए राष्ट्रीय डेरी विकास बोर्ड एवं राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल (हरियाणा) द्वारा विकसित 'मिल्क टेस्टिंग किट' में दिये गये स्टिप पेपर 'बी' में से एक टुकड़ा लेकर उस पर दुग्ध की कुछ बूँदे डालें। यदि इसका रंग लाल हो जाये तो समझ लेना चाहिए कि दुग्ध में सोडा अथवा डिटर्जेंट मिलाया हो सकता है।

सामान्य दुग्ध में प्राकृतिक रूप से कोई खटास या क्षारीयपन का स्वाद नहीं होता है। परन्तु जब दुग्ध में रिफाइन्ड ऑयल अथवा डिटर्जेंट मिलाया जाता है तो दुग्ध का स्वाद क्षारीय तथा हल्का कड़वाहट लिए हुए साबुन के रंग जैसा हो जाता है। इसकी जाँच के लिए 5.0 मि.ली. दूध का सैम्पल लें और इसमें 5.0 मि.ली. रसायन (कृत्रिम दुग्ध जाँच किट में उपलब्ध) एस.आर.–1 मिलायें। यदि इसका गुलाबी अथवा लाल रंग हो जाये तो दुग्ध में सोडा, कास्टिक सोडा या डिटर्जेंट की मिलावट हो सकती है। यदि इसका रंग भूरा या नारंगी रंग दिखायी दे तो यह समझना चाहिए कि इसमें सोडा नहीं मिला हुआ है।

मिलावटी दुग्ध में सोडा की जाँच के लिए परखनली में सबसे पहले 5.0 मि.ली. दुग्ध का सैम्पल लें। फिर इसमें 5.0 मि. ली. इथाइल एल्कोहल डालें। इसके बाद उसमें एक बूँद रोजेलिक एसिड का विलयन (1 प्रतिशत) मिलाकर हिलाएं व परखनली के द्रव के रंग का निरीक्षण करें। यदि द्रव का रंग गुलाबी लाल रंग का दिखायी दे तो मान लेना चाहिए कि दुग्ध में सोडा मिला हुआ है। यदि द्रव पीलापन लिए हुए लाल रंग का दिखाई दे तो समझना चाहिए कि दुग्ध में सोडे की मिलावट नहीं है।

दुग्ध में यूरिया की मिलावट की जाँच

यूरिया की मिलावट की जाँच करने के लिए 5.0 मि.ली. दुग्ध के सैम्पल को एक परखनली में लें। दुग्ध डालने के बाद उसमें डी.ए.एम.बी. विलयन (1.6 प्रतिशत) 5.0 मि.ली. डालें। इसके बाद परखनली को हिलाकर दुग्ध तथा इस विलयन को मिश्रित करें। मिश्रित होने के बाद यदि परखनली में दुग्ध का रंग गहरा पीला हो जाता है तो यह समझना चाहिए कि दुग्ध में यूरिया मिलाया गया है। यदि दुग्ध का रंग हल्का पीला हो तो इस दुग्ध में यूरिया नहीं मिलाया गया है। दुग्ध में ग्लूकोज के मिलावट की जाँच – मिलावटी दुग्ध में ग्लूकोज की जाँच के लिए 1.0 मि.ली. दुग्ध परखनली में डालें। फिर इस परखनली के दुग्ध में 1.0 मि. ली. 'बारफायड रसायन' मिलाकर तीन मिनट की अवधि के लिए परखनली को उबलते पानी में रखें। तीन मिनट के बाद परखनली को बाहर निकालकर उसे तुरन्त ठण्डा करें तथा उसमें 1.0 मि.ली. '*फास्फोमालिब्डिक एसिड*' मिलायें। दोनों द्रवों का मिश्रण हो जाने के बाद परखनली में दुग्ध के रंग की जाँच करें। यदि परखनली का द्रव हल्के नीले रंग का दिखायी दे तो इस सैम्पल के दूध में ग्लूकोज नही मिलाया गया है। यदि परखनली का द्रव का रंग गहरा नीला हो जाता है तो इस सैम्पल में ग्लूकोज मिलाया गया है।

दुग्ध में चीनी मिलावट की जाँच : एक परखनली में 10.0 मि.ली. दुग्ध का सैम्पल लेकर उसमें 1.0 मि.ली. 'सांद्र *हाइड्रोक्लोरिक एसिड* तथा 100 मि.ग्रा. '*रिसारसिनाल फ्लेक्स*' मिलाकर 10 मिनट तक उबलते पानी में परखनली को रखें। 10 मिनट बाद परखनली के द्रव की जाँच करें। यदि परखनली के द्रव का रंग ईंट के समान लाल दिखाई दे तो यह मान लेना चाहिए कि सैम्पल के दुग्ध में चीनी मिली हुई है। यदि परखनली के द्रव में कोई रंग बूँद पोटेशियम क्रोमेट विलयन (1.0 प्रतिशत) मिलायें। इसके बाद परखनली में 1.0 मि.ली. दुग्ध के सैम्पल को

इस प्रकार धीरे–धीरे दुग्ध में मिलाएं कि तीनों द्रव भली प्रकार मिश्रित हो जाएं। इसके बाद परखनली के द्रव का निरीक्षण करें। यदि दुग्ध का रंग गहरा भूरा दिखयी देता है, तो यह मानना चाहिए कि दुग्ध में नमक नहीं मिला है और यदि द्रव का रंग पीला अथवा हल्का पीला दिखायी दे तो यह मान लेना चाहिए कि दूध में नमक की मिलावट की गयी है।

दुग्ध में स्टार्च, आटा, आरारोट, आलू या साबूदाना मिलावट की जाँच

आटा, अरारोट, आलू तथा साबूदाना के चूर्ण में स्टार्च बहुतायत में पाया जाता है। स्टार्च को दुग्ध में मिलाने से दूध गाढ़ा हो जाता है। दुग्ध में स्टार्च के परीक्षण के लिए सबसे पहले परखनली में 10.0 मि.ली. दुग्ध के सैम्पल को डालकर उबालें व फिर ठण्डा कर लें। द्रव को ठण्डा करने के बाद उसमें 1–2 बूँद आयोडीन विलयन की (1.0 प्रतिशत) मिलाएं और परखनली को हिलाने के बाद इसके द्रव के रंग का निरीक्षण करें। यदि परखनली के द्रव का रंग हल्का भूरा दिखायी देता है तो मान लेना चाहिए कि दुग्ध में स्टार्च का मिश्रण नहीं किया गया है। लेकिन यदि परखनली के द्रव का रंग हल्के से गहरा नीला दिखाई दे तो मान लेना चाहिए कि सैम्पल के दुग्ध में स्टार्च मिलाया हुआ है।

दुग्ध में फॉरमेलिन मिलावट की जाँच

चूंकि दुग्ध जल्दी खराब होने वाला तरल पदार्थ है उसको खराब होने से बचाने के लिए दूधिये फॉरमेलिन की मिलावट कर देते हैं इसकी जांच के लिए एक परखनली में 3.0 मि.ली. दूध का सैम्पल लें। फिर उसमें 1.0 मि.ली. *फेरिक क्लोराइड विलयन* (1 प्रतिशत) मिलाकर परखनली की दीवार के साथ–साथ 5.0 मि. ली. सान्द्र *सल्फ्यूरिक एसिड* धीरे–धीरे डालें जिससे कि परखनली में एसिड व दुग्ध की परत अलग–अलग बनी रहें। फिर दोनों परतों के मिलने की सतह का निरीक्षण करें। यदि मिलने वाली सतह पर बैंगनी रंग का घेरा दिखायी दे तो यह मान लेना चाहिए कि सैम्पल में फारमेलिन मिलाई गयी है। यदि दोनों परतों की सतह पर कोई रंग न दिखायी दे तो यह मानना चाहिए कि दूध के सैम्पल में फारमेलिन की मिलावट नहीं की गयी है।

दुग्ध में रिफाइन्ड ऑयल, वनस्पति तेल, घी की मिलावट की जाँच

एक परखनली में 2.0 मि.ली. दूग्ध वसा लें और उसमें 2.0 मि.ली. पी.आर. विलियन लें। यदि तत्काल लाल पारदर्शी रंग हो जाता है तो यह मान लेना चाहिए कि सैम्पल के दूध में दुग्ध वसा है और यदि उसका रंग नीला दिखायी दे तो यह वनस्पति तेल मिले होने का संकेत है।

दुग्ध में पशुओं की वसा तथा वनस्पति वसा की जाँचः एक परखनली में 3.0 मि.ली. 'टी.आर.–8' मिलायें। इसे उबलते पानी में तब तक रखें जब इस विलयन का रंग पारदर्शी न हो जाये। परखनली को बाहर निकालें और उसमें थर्मामीटर डालकर प्रतीक्षा करें एवं यह तापमान देखें। जब विलयन पुनः आविलग (*जनतइपक*) होता है, यदि 36–40 डिग्री सेंटीग्रेड के बीच आविलग होता है तो शुद्ध वसा है और 40 डिग्री सेंटीग्रेड से ऊपर आविलग होता है तो सैम्पल में पशु वसा अथवा वनस्पति वसा मिलाये जाने की आशंका है।

1.0 मि.ली. दुग्ध का घी या 5.0 मि.ली. दूध में 3.0 मि.ली. (एफ.आर.–9) विलयन मिलाकर गर्म करें तथा उसे सूँघें। यदि पके फल जैसी सुगन्ध आती है तो दुग्ध के सैम्पल में दुग्ध की वसा है। यदि उसमें साबुन जैसी गन्ध आती है तो यह मान लेना चाहिए कि सैम्पल में दुग्ध की वसा नहीं है।

दुग्ध में तालाब के पानी की जाँचः पहले दुग्ध को 10 प्रतिशत एसिटिक एसिड से फाड़ कर फिल्टर कर लें। छने हुए को परखनली धोकर 1.0 प्रतिशत '*डाइफिनायल एमीन*' विलयन की कुछ बूँदें परखनली के किनारे से डालते हैं अगर गहरा नीला रंग आता है तो यह तालाब के पानी की मिलावट को दर्शाता है।

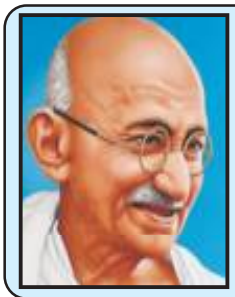

जिस भाषा में तुलसीदास जैसे कवि ने कविता की हो, वह अवश्य ही पवित्र है, और उसके सामने कोई भाषा नहीं ठहर सकती।

–महात्मा गांधी

आरोग्य एवं संजीवनी प्रभाग

गन्ने के कैंसर का इलाज है?

राघवेन्द्र कुमार, संगीता श्रीवास्तव एवं दिनेश कुमार पाण्डेय

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

गन्ने के फसल में अक्सर समुचित कृषि प्रबंधन के अभाव में पीले सूखे पत्तियों के झड़ने, तने के सिकुड़कर हल्का होकर गिरने तथा आस–पास के मिट्टी तथा वातावरण में कवक के भूरे, काले चूर्ण बिखरे देखने को मिलता हैं। अब तने को जरा तोड़कर गहन जाँच करें, गन्ना बिल्कुल आसानी से टूट जाएगा। अन्दर के हिस्सों में शर्करा रस के बजाए खून की तरह मटमैला गाढ़ा लाल तने का हिस्सा दिखलाई पड़ेगा जिसमें मोटाई सफेद धब्बे दिखलाई पड़ते हैं। सूंघने पर सिरके जैसी तीक्ष्ण गंध का आभास होता है। समय के साथ खेत में खड़ा गन्ना सूखने लगता है। इनके पोरियों तथा गाँठों पर रोग के छोटे–छोटे बीजाणु समूह बनने लगते हैं। इसके तने के अन्दर पिथ वाले हिस्सों पर सफेद तथा भूरे रंग की फफूँदी विकसित होकर आस–पास के वातावरण में फैलने लगती है। दूर से देखने पर मालूम होता है कि हमारे खेत का गन्ना मृत्यु शैय्या पर आराम से सो रहा है। हरियाली नजर नहीं आती। ...क्या है यह? गन्ना बहुत बीमार है। कृषि वैज्ञानिक इसे *रेड रॉट* अथवा लाल सड़न के नाम से सम्बोधित करते हैं, जबकि खेती किसानी में जुड़े लोग इसे गन्ने का कैंसर बतलाते चिन्तित दिखलाई पड़ते हैं। उनके मेहनत और आर्थिक समृद्धि लुट चुकी होती है। क्यों? क्योंकि इसका इलाज थोड़ा मुश्किल है, इसकी बचाव ही सबसे बड़ा इलाज है।

प्रारम्भिक अवस्था में अगोले की तीसरी तथा चौथी पत्ती किनारे से सूखने की प्रक्रिया शुरू होती है। बाद में गन्ने का अगोला अपने आप टूटकर गिरने लगता है। गाँठों के समीप लाल अथवा भूरे रंग की धारियों से लाल सड़न को आसानी से पहचाना जाता है। लाल सड़न से प्रभावित प्रक्षेत्र गन्ने के अलावा अन्य कई लोकप्रिय फसल को नुकसान पहुँचाते हैं। यह हवा, मृदा और बुआई में प्रयुक्त तना बीज के माध्यम से दूर–दूर तक संक्रमण फैलाते हैं। वास्तव में यह एक फफूँदीजनित व्याधि है। इस फफूँदी का वैज्ञानिक नाम *कोलीटोट्राईकम फल्केटम* है। इस बीमारी के बारे में सर्वप्रथम सन् 1893 में जावा (वर्तमान में इण्डोनेशिया) के कृषि वैज्ञानिक वेन्ट ने सूचित किया था। भारत में आंध्र प्रदेश के गोदावरी डेल्टा के गन्ना प्रक्षेत्र में प्रसिद्ध कृषि वैज्ञानिक बारबर ने सन् 1901 तथा बिहार प्रांत के पूसा प्रक्षेत्र से बट्लर (1906) ने विस्तृत वैज्ञानिक सूचनाएँ प्रकाशित किया था। पहली दफा फफूँदी जनित बीमारी को बट्लर ने '*रेड रॉट*' के नाम से सम्बोधित किया।

सन् 1939 से 1942 के काल खण्ड में बिहार तथा उत्तर प्रदेश में लाल सड़न का भयावह प्रकोप देखा गया था। उस वक्त इस बीमारी को काबू में रखना अत्यन्त चुनौती भरा काम था। बाद में, गन्ना प्रजनन सम्बन्धित उपायों की मद्द से उन्नत प्रतिरोधी प्रजातियों के समग्र विकास से सफलता मिल पाई हैं। नवीनतम जानकारी के अनुसार गन्ने के बुआई से लेकर कटाई तक सभी प्रक्षेत्र सम्बंधित कार्य कलाप सजगतापूर्वक करना चाहिए। इस क्रम में मृदा परीक्षण के उपरांत खेत का चयन, खेतों की गहरी जुताई, संक्रमित गन्ने के तना बीज से परहेज, रसायनिक फफूँदीनाशक दवा जैसे कार्बेन्डाजिम जो बाजार में 'बॉविस्टन' के नाम से बिकता है, से बीज के स्वस्थ रोगरहित टुकड़ों को बोने से पहले उपचार और अति आधुनिक तकनीकी से लैस सस्य क्रियाओं का समयबद्ध पालन विशेष रूप से महत्वपूर्ण हैं।

इस दिशा में बतलाना आवश्यक है कि खेत में पड़े अवशेष जैसे सूखी पत्तियों, ठूँठ आदि को जलाकर नष्ट नहीं करना चाहिए बल्कि उन्हें निर्धारित सिफारिश के अनुसार अपघटित करके जैविक खाद के रूप में उपयोग करना चाहिए। कटाई के उपरान्त खाली खेतों में पड़े अवशेषों को जलाने से वातावरण में कार्बन डाईऑक्साइड तथा अन्य घातक प्रदूषण का स्तर स्वतः बढ़ने लगता है। दूसरी तरफ मृदा में लवणीय संरचना घटने तथा बढ़ने से उर्वराशक्ति के साथ–साथ प्राकृतिक सूक्ष्मजीवी का विनाश होना स्वाभाविक है। फसल चक्र तथा समय के अन्तराल में हरित खाद जैसे ढैंचा, सनई, बिन्स इत्यादि फसल लगाना लाल सड़न रोग से बचाव में लाभकारी होता है। समकालीन परिवेश में किसानों को जैविक खेती करने के लिए सरकार तथा समाज द्वारा प्रोत्साहित भी किया जा रहा है। जैव आधारित कृषि प्रबंधन से महंगे रासायनिक दवा तथा खाद की जगह उच्च गुणवत्ता वाले जैविक नियंत्रणकारी अभिकर्ता जैसे *ट्राईकोडर्मा* आदि से उपचारित जैविक खाद का समुचित प्रयोग करना दीर्घकालिक रूप से लाभकारी होता है। इससे प्रदूषण को नियंत्रित रखने में विशेष मद्द मिलती है।

लाल सड़न से छुटकारा पाने हेतु गन्ना के तना बीज के टुकड़ों को ऊष्मायुक्त जल वाष्प से उपचारित करके बुवाई के लिए प्रयुक्त करते हैं। प्रायः चीनी मिल के समीप इस तरह के संयंत्र लगे होते है; जहाँ उन्नत प्रजातियों के गन्नों को उपचारित किया जाता है। यह प्रक्रिया निःसंदेह लाभकारी होती है किन्तु कुछ शोध अध्ययनों के आधार पर पाया गया है कि ऊष्मा उपचारित गन्नों में अंकुरण में दिक्कत आ सकती है। दूसरी ओर विद्युत आपूर्ति में बाधा तथा अन्य यांत्रिक रख–रखाव के कारण यह किसानों में अत्यधिक लोकप्रिय नहीं हो पा रहा है।

अब लाल सड़न के रोक-थाम की दिशा में जैविक विकल्प

के बारे में कुछ खास बाते जानना तथा समझना जरूरी हैं। *ट्राईकोडर्मा, स्यूडोमोनॉस* तथा अन्य प्रकार के मित्र कवक, प्राकृतिक रूप से मृदा में विद्यमान होते हैं। इनका जीवन-चक्र परजीवी के रूप में दूसरे घातक सूक्ष्मजीवी कवक पर निर्भर होता है। दूसरे शब्दों में कहें तो *रेड रॉट* कवक एक प्रकार से *ट्राईकोडर्मा* का भोज्य पदार्थ होता है। कवक परजीवी जीवन के इस अद्भुत स्थिति को वैज्ञानिक जैविक नियंत्रण विधि के रूप में व्याख्या करते हैं। *ट्राईकोडर्मा हरजियानम, ट्राईकोडर्मा विरिडी* आदि अत्यन्त लोकप्रिय कवक है जिन्हें प्रयोगशाला में संवर्धित किया जाता है। लाल सड़न के अलावा यह मित्र कवक कंडुवा (स्मट) तथा अन्य फफूँदी जनित बीमारी को भी नियंत्रित करते हैं। देश के केन्द्रीय कीटनाशी बोर्ड एवं पंजीयन समिति ने लगभग 10 जीवाणु (*स्यूडोमोनॉस फ्लोरेसन्स, बैसिलस सबटिलिस* इत्यादि), 20 कवक (*ट्राईकोडर्मा हरजियानम, ऐस्पर्जिलस नाइजर* इत्यादि) तथा अन्य सूक्ष्मजीवियों को जैव नियंत्रक उत्पाद के रूप में पंजीकृत किया है। ऐसे उत्पाद *इन्सेक्टीसाइड* एक्ट (1968) *सेक्शन* 9(3) एवं 9(3) के अन्तर्गत मान्य है।

इन दिनों वैज्ञानिकों ने ट्राईकोडर्मा के अत्यन्त सूक्ष्म उच्च सांद्रता वाले घोल तैयार करने में सफलता प्राप्त कर ली है। इस घोल में सामान्यतः 10^6 फफूँदी कोनिडिया प्रति मिलीलीटर की दर से विद्यमान होते हैं। ट्राईकोडर्मा से उपचारित गन्नों में लाल सड़न की बीमारी का संक्रमण प्रायः बहुत कम होता है।

खड़ी फसल में पत्तियों पर भी *ट्राईकोडर्मा* के घोल (10^5 से 10^6 कवक दाने प्रति मिलीलीटर) का छिड़काव सम्बन्धित स्प्रेयर मशीन की सहायता से समय–समय पर करते रहना लाभकारी होता है। देश के कई प्रतिष्ठित संस्थानों की प्रयोगशालाओं में कृषि वैज्ञानिक इन दिनों ट्राईकोडर्मा को गोबर की खाद अथवा अन्य सड़े गले जैविक अवशेष पर संवर्धित करके 'जैविक खाद' के तौर पर प्रयोग करने की सिफारिश करते हैं। किसान भी इससे सामान्य रूप से तैयार करके खेतों में प्रयोग कर सकते हैं, किन्तु ऐसा करने से पूर्व विशेषज्ञों से परामर्श अवश्य ले लेना चाहिए। जैविक खादों के उचित प्रयोग तथा प्रभावी रोग एवं कीट नियंत्रण सफल जैविक खेती का सबसे महत्वपूर्ण पहलू है।

चूँकि लाल सड़न बीमारी का प्रमुख स्रोत कवक होता है इसलिए इसके समूल नाश के लिए रोग प्रतिरोधी क्षमतावान बीज के उत्पादन के दिशा में वैज्ञानिक शोध अत्यन्त महत्वपूर्ण है। गन्ना बीज निर्माण प्रक्रिया में रोग रोधी गन्ना प्रजातियों की खेती इस बीमारी से बचाव का सबसे सरल एवं विश्वसनीय उपाय है, क्योंकि प्रायः ऐसा देखा गया है कि रोगग्राही प्रजातियाँ रोगों के कवक बीजाणुओं को पनपने तथा फैलने में सहायक होती हैं। प्रजनन सम्बन्धित कार्य में संलग्न कृषि वैज्ञानिक इस दिशा में वर्षों से प्रयास कर रहे हैं। इस कड़ी में विविध गुण धर्मों वाले अति विशिष्ट जीवद्रव्यों के संकरण से प्राप्त गन्नों को 'प्लग विधि' द्वारा खड़े गन्नों में संक्रमित करवा के रोग के प्रति सहनशीलता की स्थिति का आँकलन किया जाता है। इस प्रक्रिया में अनेक सहनशील प्रजातियाँ तैयार की जाती हैं जो किसानों के लिए अन्यन्त लाभकारी हो सकती है। चीनी मिल तथा किसान भी इसे व्यापक रूप से अपनाने में पहल करते हैं।

उत्तर पश्चिम क्षेत्र के लिए संस्तुत लाल सड़न से प्रतिरोधी गन्ना प्रजातियों में को 0238 (करन–4), कोपन्त 90223, कोशा 91230 (रसीली) जबकि मध्यम अवरोधी में को 05009 (करन–10), कोपीके 05191, कोपन्त 97222 प्रमुख हैं। उत्तर मध्य क्षेत्र हेतु अनुमोदित किस्मों में कोलख 94184 (बीरेन्द्र), कोलख 7201, कोलख 09204 जो भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान द्वारा विकसित की गयी हैं; किसानों के बीच अत्यन्त लोकप्रिय है तथा इस बीमारी के प्रकोप से मध्यम प्रतिरोधी सिद्ध हुई हैं। संस्थान द्वारा उत्तर–पश्चिम क्षेत्र के लिए नई प्रजाति कोलख 09204 विकसित की गई है। इन दिनों देश के विभिन्न शोध संस्थानों में लाल सड़न के बारे में ढेर सारे गहन आधुनिक शोध कार्य हो रहे हैं। संक्रमित कोशिका के डीएनए में अत्यन्त सूक्ष्म आण्विक विश्लेषण करने में लगातार सफलता प्राप्त हो रही है। इस बीमारी के कारक जीन्स को पहचानने वाले '*मॉलिक्यूलर मार्कर*' का खोज की जा रही है। इससे उच्च गुणवत्ता वाले गन्ना की प्रजातियों के विकास में सहायता मिलने की संभावना है। वह दिन दूर नहीं जब गन्ने के इस ला–इलाज कैंसर को पूर्णतः काबू में कर लिया जाएगा।

आरोग्य एवं संजीवनी प्रभाग

बोवाइन इफीमरल फीवर (अढ़ैया बुखार)

रमाकान्त एवं सत्यव्रत सिंह

पशु चिकित्सा विज्ञान एवं पशु पालन महाविद्यालय, नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, फैजाबाद

'*बोवाइन इफीमरल फीवर*' गाय एवं भैसों में होने वाला प्रमुख विषाणुजनित संक्रामक रोग है। तेज बुखार का आना, शरीर में कॅपकपी होना, मांसपेशियों में तनाव होना और पशु का लंगड़ा कर चलना इस रोग के प्रमुख लक्षण हैं। इस रोग को अन्य नामों से भी जाना जाता है, जैसे *थ्रीडेसिकनस, वोवाइन इपीजोटिक फीवर* और *स्टिफ सिकनस*। ज्यादातर इस रोग से पीड़ित पशु को तीन से पाँच दिन में निजात मिल जाता है। बहुत कम पशुओं में रोग जटिल होने से मृत्यु होने की संभावना रहती है।

रोग कारण

यह रोग *इफीमरो* नामक विषाणु से होता है। यह विषाणु मनुष्यों में डेंगू बुखार का कारण होता है। एक बार रोग हो जाने पर पशुओं में लगभग दो वर्ष के लिए रोग प्रतिरोधक क्षमता बन जाती है।

रोग से प्रभावित क्षेत्र

यह बीमारी विश्व के विभिन्न भागों में फैला हुई है। यह रोग अफ्रीका, भारत, पाकिस्तान, चीन आदि देशों में पाया जाता हैं। इस बीमारी में मृत्युदर प्रायः एक से तीन प्रतिशत तक होती है।

रोग होने का समय

यह बीमारी मुख्यतः बारिश और गर्मी के महीनों में ज्यादा होती है। बीमारी सभी उम्र के पशुओं में होती हैं, परन्तु इस रोग का बछड़ो में होने का खतरा ज्यादा रहता है। यह बीमारी पशुओं में कम समय के लिए होती है लेकिन पशुपालकों को इस बीमारी से आर्थिक नुकासान उठाना पड़ता है। यह बीमारी स्वदेशी एवं विदेशी दोनों प्रजातियों के पशुओं में होती है।

रोग के फैलने की विधि

इस रोग के फैलाने में *सैंडफ्लाई* (एक विशेष प्रकार की मक्खी) की विशेष भूमिका होती है। इसके इलावा मच्छरों की कुछ प्रजातियों जैसे *एडीज* और *क्यूलेक्स* भी इस रोग को फैलाते हैं। रोगी पशु के सीधे सम्पर्क या इसके किसी स्राव जैसे–लार, ऑख का स्राव आदि के सम्पर्क में आने से रोग नही फैलता है। तेज हवा के कारण विषाणु लम्बी दूरी तक पहुॅच सकते है। *सैंडफ्लाई* या मच्छर संक्रमित पशु को काटते समय रक्त के विषाणु को अपने शरीर में खीच लेता है। इनके द्वारा चूसी हुई रक्त में विषाणु उपस्थित रहता है, जो रोग उत्पन्न करने में सक्षम होते हैं।

विकृति जनन

संक्रमित पशु के शरीर में विषाणु के उद्भवन का समय लगभग 2 से 10 दिनों तक होता है। विषाणु संक्रमित पशु के रक्त में लगातार विभाजन करता रहता है, जिससे विषाणु की संख्या रक्त में काफी बढ़ जाती है। इसके अलावा विषाणु पशु के जोड़ों, लसीका ग्रन्थि और मॉस–पेसियों में पहुॅच जाते हैं। विषाणु रक्त में एक विशेष प्रकार के रसायन का स्राव करते हैं, जिससे पशु को बुखार आ जाता है और पशु के शरीर के कुछ भागों में सूजन आ जाती है, जिससे पशु को सॉस लेने में और सही ढंग से चलने में कठिनाई होती है।

रोग के प्रमुख लक्षण

रोग का पहला दिन

- पशु में तेज बुखार आना (103°F से 105°F)।
- दुग्ध उत्पादन का घट जाना। पशु का चारा और पानी लेना कम कर देना। पशु का सुस्त रहना।
- पशु का लंगड़ाकर चलना। पशु कभी एक पैर से लंगड़ा कर चलना, कभी दूसरे पैर से लगड़ाकर चलता है।
- नाक और ऑखों से पानी का आना। शरीर में कॅपकपी का होना।
- कुछ पशुओं में डायरिया (पेट का चलना) तो कुछ पशु में कब्ज का होना।

रोग का दूसरा दिन

- शरीर में कॅपकपी बढ़ जाती है। मांसपेशियों में तनाव का बढ़ जाना।
- पशु चलने में असमर्थ हो जाता है। पशु खाना–पानी एक दम बंद कर देता है।

रोग का तीसरा दिन

- बुखार कम हो जाना।
- पशु चारा और पानी लेना शुरु कर देता है। पशु जुगाली करने लगता है।

रोग का उपचार

इस रोग का उपचार लक्षण के आधार पर किया जाता है। पशु के शरीर का बुखार कम करने के लिए *मिलाक्सीकेम* 0.5 मि.ग्रा./कि.ग्रा. शारीरिक भार या किटोप्रोफेन 3 मि.ग्रा./कि.ग्रा. शरीर के भार के हिसाब से मांस में इंजेक्शन देकर किया जा सकता है। एन्टीबायोटिक जैसे स्ट्रैप्टोपेनसिलिन 10 मि.ग्रा./कि.ग्रा. शारीरिक भार या ऑक्सीटेट्रासाइक्लिन 5 से 10 मि.ग्रा./ कि.ग्रा. शारीरिक भार के हिसाब से पशु के मांस में इंजेक्शन देकर किया जा सकता है। एंटिबायोटिक्स देने से पशु को इस बीमारी के दौरान अन्य जीवाणुओं के संक्रमण का खतरा नही होता है। इसके अलावा, पशु को 10 मि.ली. प्रतिदिन की दर से लिवर टॉनिक का इंजेक्शन पशु के मांसपेशियों में दिया जाता है। उपर्युक्त इलाज से पीड़ित पशु को रोग से छुटकारा जल्दी मिल जाता है।

रोग से रोकथाम

- इस बीमारी को फैलाने में मदद करने वाले मच्छरों एवं *सैंडफ्लाई* की बढ़ती हुई जनसंख्या को नियंत्रण करना।
- स्वस्थ्य पशुओं का टीकाकरण करायें।
- स्वस्थ्य पशुओं को टीके की दो खुराकें तीन सप्ताह के अन्तराल पर दी जाती है। यह टीका पशु को एक साल तक इस रोग से बचाव करता है। परन्तु इस बीमारी से बचने के लिए टीकाकरण का प्रचलन न के बराबर है।
- बीमार पशुओं को स्वस्थ्य पशुओं से अलग कर लें। पीड़ित पशु का प्रशिक्षित पशुचिकित्सक से उचित इलाज करवायें।

आरोग्य एवं संजीवनी प्रभाग

धान के प्रमुख कीट एवं उनका एकीकृत प्रबन्धन

विनोद कुमार सिंह एवं सुरेश सिंह
कृषि विज्ञान केन्द्र, अम्बरपुर, सीतापुर

धान हमारे देश की एक मुख्य फसल है जिसकी खेती पूरे भारत में की जाती है। कीटों एवं बीमारियों द्वारा धान की फसल के उत्पादन पर दुष्प्रभाव पड़ता है। यद्यपि धान की उपलब्ध प्रजातियों की उपज क्षमता अच्छी है फिर भी बहुत से कीटों एवं बीमारियों के कारण उपज में कमी पायी गयी है। अभी तक कीटों की समस्याओं से निपटने के लिए सिर्फ रसायनों का ही प्रयोग होता रहा है। यह रसायन मंहगें होने के साथ–साथ वातावरण को प्रदूषित भी करते हैं। मनुष्य एवं पशु आहार में हानिकारक एवं विषैले रसायनों के अवशेष पहुंच रहे हैं तथा साथ ही पौधों को स्वस्थ बनाये रखने वाले मित्र कीटाणुओं की संख्या लगातार कम होती जा रही है और हानिकारक जीवों में इन रसायनों के प्रति प्रतिरोधक क्षमता का विकास होता जा रहा हैं। फलस्वरूप वांछित लाभ नही प्राप्त हो पा रहा है। इन सभी समस्याओं के प्रभावी निदान एवं खतरों से बचने के लिए किसान भाइयों को धान की फसल में एकीकृत कीट प्रबंधन विषय पर जागृति लाने की आवश्यकता है। जिससे वह कीटों का सही ढंग से पहचान कर सकें एवं उनकी रोकथाम के लिए उचित कदम उठा सके। प्रस्तुत लेख में धान में लगने वाले प्रमुख कीटों की पहचान एवं उनके समन्वित प्रबंधन पर प्रकाश डाला गया है।

प्रमुख कीटों की पहचान

दीमक

यह एक सामाजिक कीट है तथा कालोनी बनाकर रहते हैं। श्रमिक कीट पंखहीन छोटे पीले सफेद रंग के होते हैं तथा कालोनी के लिए सभी कार्य करते हैं। श्रमिक कीट जम रहे बीजों को, पौधों की जड़ों को खाकर नुकसान पहुँचाते हैं। ये पौधों को रात में जमीन की सतह से भी काटकर गिरा देते हैं। पौधे अनियमित आकार में कुतरे हुए दिखाई देते हैं।

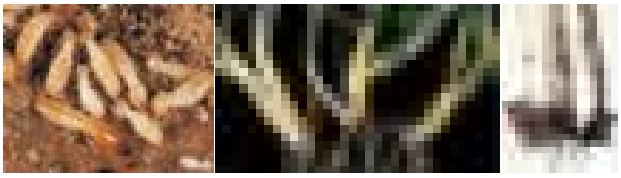

गोभ गिडार

प्रौढ़ मक्खी धूसर भूरे रंग वाली तथा सूँड़ियाँ पादहीन पीले रंग की होती हैं। सूँड़ियाँ गोभ मे बन रही पत्तियों के किनारों को खाती है। ये पत्तियाँ निकलने पर किनोर से कटी दिखाई देती हैं।

आर्थिक क्षति स्तर 20 प्रतिशत प्रकोपित पत्ती।

धान का मूल घुन

प्रौढ़ छोटा भूरे रंग का 3–4 मि.मी. लम्बा कीट होता है। सूड़ियाँ पाद रहित सफेद रंग की होती हैं। सूड़ियाँ जड़ के मध्य में रहकर हानि करती हैं जिसके फलस्वरुप पौधे गोलाई में पीले पड़ जाते हैं। अधिक प्रकोप होने पर पौधों का ओज घट जाता है और उपज पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

आर्थिक क्षति स्तरः 5 प्रतिशत प्रकोपित पौधे।

धान का पत्ती लपेटक कीट

सूड़ियाँ प्रारम्भ में सुनहरे पीले रंग की तथा बाद में हरे रंग की हो जाती हैं। प्रौढ़ कीट लगभग एक सेमी. लम्बा पीले हल्के भूरे रंग का पतंगा होता है जिसके अगले पंखों पर तीन टेढ़ी–मेंढ़ी रेखाएं होती हैं। इनकी सूड़ियाँ पत्तियों को लम्बाई में मोड़कर अन्दर से उनके हरे भाग को खुरचकर खाती हैं।

आर्थिक क्षति स्तरः दो ताजी प्रकोपित पत्ती प्रति पूजा।

हिस्पा

प्रौढ़ लगभग 3 से 4 मि.मी. लम्बा कॉटेंदार चमकीले काले

रंग का कीट होता है। इस कीट की सूड़ियाँ पत्तियों की ऊपरी व निचली परत के मध्य रहकर हरे भाग को खाती हैं जिससे उनपर फफोले जैसी आकृति बन जाती है। प्रौढ़ कीट पत्तियों के हरे पदार्थ को खुरचकर खाता है।

आर्थिक क्षति स्तरः एक से दो प्रकोपित पत्ती या दो प्रौढ़ कीट प्रति पूजा।

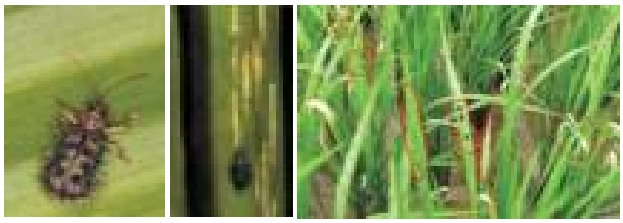

बंका कीट

सूड़ियॉ हल्के हरे रंग तथा भूरे सिर वाली होती हैं। प्रौढ़ कीट सफेद पंख वाला होता है जिस पर टेढ़ी मेंढ़ी लकीरें पायी जाती हैं। सूड़ियॉ पत्तियों को अपने शरीर के बराबर काटकर खोल बना लेती हैं तथा उसी के अन्दर रहकर दूसरी पत्तियों से चिपककर उनके हरे भाग को खुरचकर खाती हैं ।

आर्थिक क्षति स्तरः 2 ताजी प्रकोपित पत्ती प्रति पूजा।

धान का तना बेधक कीट

कीट का प्रौढ़ पीले भूसे के रंग जैसा नाव के आकार का नुकीला एक इंच लम्बा पतंगा होता है। मादा प्रौढ़ के अगले पंख पर एक काली बिन्दी तथा उदर के अन्त में भूरे बालों का एक गुच्छा होता है। मादा प्रौढ़ पत्तियों पर समूह में अंडा देने के बाद बालों से ढक देती है। इन अण्डों से सूड़ियाँ निकलकर तनों के अन्दर घुस जाती हैं तथा बढ़वार बिन्दु को क्षति पहुँचाती हैं जिससे विकास की अवस्था में मृतगोभ तथा बालियाँ आने पर बाली सफेद दिखाई देती हैं।

आर्थिक क्षति स्तरः पॉच प्रतिशत मृत गोभ या एक अण्ड समूह या एक शलभ प्रति वर्ग मीटर।

धान का हरा फुदका

ये लगभग 3–4 मिमी. लम्बे हरे रंग के छोटे कीट होते हैं। इनके अगले पंखों पर एक–एक काली बिन्दी भी पायी जा सकती है। कीट के शिशु तथा प्रौढ़ दोनों ही पत्तियों से रस चूस कर हानि पहुँचाते हैं। ग्रसित पत्तियॉ ऊपर से नीचे की तरफ सूख जाती है अथवा पहले पीली व बाद में कत्थई रंग की हो जाती हैं।

आर्थिक क्षति स्तरः पौधशाला में 1–2 कीट प्रति वर्ग मीटर, कल्ले निकलने के पूर्व 10 कीट, कल्ले निकलने के मध्य 10–20 कीट एवम् बलियाँ निकलते समय 20 कीट प्रति पूजा।

धान का भूरा फुदका

ये लगभग 3–4 मि.मी. लम्बे भूरे रंग के पंखयुक्त व बिना पंख वाले कीट होते हैं। कीट के शिशु तथा प्रौढ़ दोनों ही पौधों के किल्लों के मध्य रह कर रस चूसकर नुकसान पहुँचाते हैं जिससे पौधे सूख जाते हैं। प्रारम्भ में प्रकोप होने पर गोलाई में पौधों की बढ़वार रूक जाती है तथा बाद में वे सूख जाते हैं। इस तरह के प्रकोप को *हापर* बर्न के नाम से जाना जाता है।

आर्थिक क्षति स्तरः कल्ले निकलने के पूर्व 5–10 कीट, कल्ले निकलने के मध्य 10 कीट, बालियाँ निकलते समय 15– 20 कीट एवम् दुग्धावस्था व बाद में 25–30 कीट प्रति पूजा।

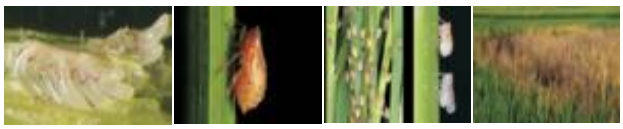

सफेद पीठ वाला फुदका

प्रौढ़ काले से भूरे रंग तथा पीले शरीर वाले होते हैं। इनके पंखों के जोड़ पर सफेद पट्टी होती है। शिशु सफेद रंग के पंखहीन होते हैं। इनके उदर पर सफेद एवं काले धब्बे पाये जाते हैं। शिशु तथा प्रौढ़ दोनों कल्लों के मध्य रह कर रस चूसते हैं जिससे पौधे पीले पड़ कर सूख जाते हैं। अधिक चूसा हुआ रस निकलने के कारण पत्तियों पर काला कवक उग आता है जिससे पौधों की प्रकाश संश्लेषण क्रिया बाधित हो जाती है।

आर्थिक क्षति स्तरः कल्ले निकलने के पूर्व 10 कीट, कल्ले निकलने के मध्य 10 कीट एवम् बालियाँ निकलते समय 15– 20 कीट प्रति पूजा।

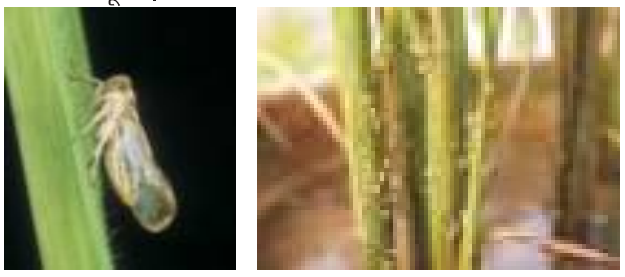

नरई कीट (*गालमिज*)

यह चमकदार लाल रंग का मच्छर जैसा लम्बी टांगों वाला एक कीट है तथा रात में प्रकाश पर आकर्षित होता है। कीट की सूँड़ी गोभ के अन्दर बढ़वार बिन्दु को प्रभावित कर प्याज के तने के आकार की रचना बना देती है। जिसे *सिल्वर सूट* या *ओनियन सूट* कहते हैं। ऐसे प्रकोपित पौधों में बाल नहीं आती है।

आर्थिक क्षति स्तरः 5 प्रतिशत *सिल्वर सूट*।

गन्धी कीट

ये लगभग 14–17 मि.मी. लम्बे एवं 3–4 मि.मी. चौड़े भूरे रंग के विशेष गन्ध वाले कीट होते हैं। इस कीट के शिशु तथा प्रौढ़ दोनों ही बालियों की दुग्धावस्था में दानों में बन रहे दूध को चूस कर नुकसान पहुँचाते हैं। प्रकोपित दानों में चावल नहीं बनते हैं।

आर्थिक क्षति स्तरः एक से दो कीट प्रति पूजा।

सैनिक कीट (कटुआ कीट)

इस कीट की सूड़ियाँ भूरे रंग की लगभग 30–35 मि.मी. लम्बी एवं 6–7 मि.मी. चौडी होती हैं जो दिन के समय किल्लों के मध्य/भूमि की दरारों में छिपी रहती हैं। सूड़ियाँ शाम को कल्लों से निकलकर तथा ऊपर चढ़कर बालों को छोटे–छोटे टुकड़ों में काट कर नीचे गिरा देती हैं।

आर्थिक क्षति स्तरः 4–5 सूँड़ी प्रति वर्ग मी. क्षेत्रफल।

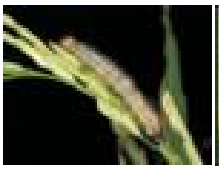

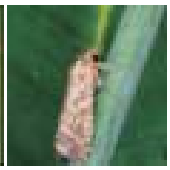

धान की फसल में एकीकृत कीट प्रबन्धन

- ग्रीष्म ऋतु की जुताई एवं मेड़ो की छंटाई करनी चाहिए।
- स्वस्थ एवं जीवनाशी सहिष्णु प्रजातियों का चयन करना चाहिए। शोधित बीज का ही प्रयोग करना चाहिए।
- सैनिक कीट बाहुल्य क्षेत्रों के लिए कम समय में पकने वाली प्रजातियों का चयन करना चाहिए।
- छुटपुट रोपाई को हतोत्साहित करना चाहिए। समय से रोपाई करना चाहिए।
- रोपाई के पूर्व क्लोरपाइरीफास 20 ई.सी. 1 मि.ली. प्रति ली. पानी में बने घोल में रात भर डुबोकर पौध शोधन करना चाहिए।
- पौधे की पत्तियों को ऊपर से 1/3 भाग काटकर रोपाई करना चाहिए।
- खेत एवं मेंड़ों को घासमुक्त एवं साफ–सुथरा रखना चाहिए।
- कीटों के प्राकृतिक शत्रुओं के संरक्षण हेतु शत्रु कीटों के अण्ड़ो को इकट्ठा कर *बम्बू केज कम परचर* में डालना चाहिए।
- भूरा फुदका एवं सैनिक कीट बाहुल्य क्षेत्रों में 20 पंक्तियों के बाद एक पंक्ति छोड़ कर रोपाई करनी चाहिए।
- उर्वरकों की संस्तुति मात्रा का ही प्रयोग करना चाहिए।
- जल निकास का समुचित प्रबन्ध करना चाहिए।
- दीमक बाहुल्य क्षेत्र में कच्चे गोबर एवं हरी खाद का प्रयोग नहीं करना चाहिए। फसलों के अवशेषों को नष्ट करना चाहिए।
- दीमक के घरों को खोजकर नष्ट करना चाहिए तथा रानी एवं उनके सहयोगियों को मार देना चाहिए।
- नीम की खली 10 कु./हे. की दर से बुआई से पूर्व खेत में मिलाने से दीमक के प्रकोप में धीरे–धीरे कमी आती है।
- सप्ताह के अन्तराल पर फसल का निरीक्षण करना चाहिए।
- दीमक के लिए बबेरिया बैसियाना 1.15 डब्लू. पी. की 4–5 कि.ग्रा. मात्रा को 800–1000 ली. पानी में घोल कर प्रति हे. की दर से या क्लोरपाइरीफास 20 ई.सी. 1 मि.ली. प्रति ली. पानी में बने घोल से प्रकोपित क्षेत्र की भूमि का शोधन करना चाहिए।
- धान के मूलघुन का प्रकोप दिखाई देने पर क्लोरपाइरीफास 20 ई.सी. 1 मि.ली. प्रति ली. पानी में बने घोल से प्रकोपित क्षेत्र की भूमि का शोधन करना चाहिए।
- रोपाई के 30 दिनों के बाद से सप्ताह के अन्तराल पर ट्राइकोग्रामा जैपानिकम परजीवी 50,000/हे. की दर से लगातार 6 सप्ताह तक अवमुक्त करना चाहिए।
- अच्छे पानी निकास वाले खेत के दोनों सिरों पर रस्सी पकड़कर पौधों के ऊपर से तेजी से गुजारने तथा पानी को निकाल देने से बंका कीट की सूड़ियों की संख्या काफी कम हो जाती है।
- तना बेधक कीट के पूर्वानुमान हेतु पॉच फेरोमोन ट्रैप (गंधपाश)/हे. की दर से लगाना चाहिए।
- प्रातः पाँच से सात बजे के मध्य पत्तियों पर बैठे तना बेधक

कीट के प्रौढ़ों को पकड़कर मार देना चाहिए तथा पत्तियों के सिरे पर पाये जाने वाले मटमैले रंग के अण्ड समूहों को एकत्र कर नष्ट करना चाहिए।

- धान के पत्ती लपेटक कीट से ग्रसित एक–दो पत्ती प्रति पूजा पाये जाने पर क्वीनालफास 25 ई.सी. की 1.50 ली. मात्रा को 800 ली. पानी में घोल कर प्रति हे. की दर से छिड़काव करना चाहिए।
- पॉच प्रतिशत मृत गोभ या एक शलभ प्रति वर्ग मीटर दिखाई देने पर 1.5 ली. नीम के तेल को 800 ली. पानी में तथा एक ग्राम/ली. घोल की दर से साबुन मिला कर छिडकाव करना चाहिए या कार्बोफ्यूरान 3 जी 20 कि.ग्रा./हे. या कारटाप हाइड्रोक्लोराइड 4 प्रतिशत की 17–18 कि. ग्रा. मात्रा 3 से 5 सें.मी. पानी में प्रति हे. की दर से बुरकाव करना चाहिए।
- पौधशाला में 1–2 प्रति वर्ग मीटर, कल्ले निकलने के पूर्व 10, कल्ले निकलने के मध्य 10–20 एवं बालियाँ निकलते समय 20 हरे फुदके प्रति पूजा दिखाई पड़ने पर कार्बाफ्यूरान 3 जी 3–5 सें.मी. खड़े पानी में 20 कि.ग्रा./हे. की दर से बुरकाव करना चाहिए अथवा डाईक्लोरवास 76 ई.सी. 500 मि.ली. मात्रा/हे. की दर से 800 ली. पानी में घोल कर छिड़काव करना चाहिए।
- कल्ले निकलने के पूर्व 5–10, कल्ले निकलने के मध्य 10, बालियाँ निकलते समय 15– 20 एवं दुग्धावस्था के बाद में 25–30 भूरा फुदका कीट प्रति पूँजा दिखाई पड़ने पर कार्बाफ्यूरान 3 जी 3 से 5 सेंमी. खड़े पानी में 20 कि.ग्रा./हे. की दर से बुरकाव करना चाहिए अथवा क्लोरपाइरीफास 20 ई.सी. की 1.50 ली. या क्वीनालफास 25 ई.सी. की 1.25 ली. मात्रा को 800 ली. पानी में घोल कर छिड़काव करना चाहिए। कीटनाशकों का छिड़काव पत्तियों पर न करके प्रकोपित तनों पर करना चाहिए।
- कल्ले निकलने के पूर्व एवं मध्य 10 तथा बालियाँ निकलते समय 15–20 सफेद पीठ वाला फुदका कीट प्रति पूँजा दिखाई पड़ने पर कार्बोफ्यूरान 3 जी 3 से 5 सें.मी. खड़े पानी 20 कि.ग्रा./हे. की दर से बुरकाव करना चाहिए अथवा क्लोरपाइसीफास 20 ई.सी. की 1.50 ली. या क्वीनालफास 25 ई.सी. की 1.25 ली. मात्रा को 800 ली. पानी में घोल कर छिड़काव करना चाहिए।
- 5 प्रतिशत सिल्वर सूट दिखाई देते ही कार्बाफ्यूरान 3 जी 3 से 5 सें.मी. खड़े पानी 20 कि.ग्रा./हे. की दर से बुरकाव करना चाहिए।
- 1 से 2 गन्धी कीट प्रति पूजा दिखाई देते ही नीम आधारित कीटनाशकों का प्रयोग करना चाहिए अथवा प्रातः ओस समाप्त होने के बाद किसी कीटनाशी धूल का बुरकाव करना चाहिए।
- सैनिक कीट की सूँड़ी दिखाई देंने और कार्यिकी परिपक्वता आते ही कटाई कर लेनी चाहिए।
- मेंड़ों पर पका चावल बिखेर दें जिससे पक्षी आकर्षित होते हैं एवं सूड़ियों को खा जाते हैं।
- सूड़ियों के छुपने के लिए मेंड़ों पर जगह–जगह पुआल रख दें। शाम होने से पहले इकट्ठा करके नष्ट करें।
- 4–5 सूड़ी/वर्ग मी. में दिखायी देने पर क्लोरपायरीफास (20 ई.सी.) 1.5 ली. की दर से छिड़काव करें या फेन्थोएट 2 डी., 25–30 किग्रा./हे. की दर से सायंकाल बुरकाव करें या बी. टी. की 0.5–1.0 किग्रा./हे. की दर से छिड़कें।

- देश के सबसे बड़े भू–भाग में बोली जाने वाली हिन्दी ही राष्ट्रभाषा की अधिकारिणी है।
- हिन्दी के विरोध को कोई भी राष्ट्र आंदोलन राष्ट्र की प्रगति में बाधक है।

आरोग्य एवं संजीवनी प्रभाग

पोषण दोगुना

मिथिलेश तिवारी, एस.आई. अनवर एवं ए.के. सिंह
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

स्वास्थ्यकारी चीजें खरीदना अच्छी डाइट की दिशा में पहला कदम है। लेकिन सही ढंग से बनाने से उसके काफी पोषक तत्व नष्ट होने से बच जाते हैं। हरी सब्जियों को उबालकर भण्डार करने के बजाय थोड़े से ऑलिव ऑयल में पकाकर रखें, तो इससे नजर को तेज करने वाला एंटी ऑक्सीडेंट बीटाकैरोटिन 5 गुना अधिक मिलेगा। तब क्यों ना सब्जियों को काटते और पकाते समय कुछ बातों को ध्यान में रखा जाए।

दिल की रक्षा के लिए

लाइकोपेन से भरपूर टमाटरों को गरम करने से दिल को स्वस्थ रखने वाले पोषक तत्व मिलते हैं और शरीर के लिए इसे सोखना आसान होता है। बड़े टमाटरों को बीच से लम्बाई में आधा काट लें। इन्हें बेंकिंग डिश में रखकर ऊपर से नमक और काली मिर्च डालें। इन्हें 15–20 मिनट तक पकाकर खाएं। सब्जी बनाते समय कैन में बन्द टमाटर प्यूरी का पेस्ट इस्तेमाल करें।

कैंसर से बचाव के लिए

लहसुन को उच्च तापमान पर गरम करने से उससे कैंसर से लड़ने के लिए पाया जाने वाला एंजाइम एलिनेस नष्ट हो जाता है। इस एंजाइम से प्रतिरोधक क्षमता भी बढ़ती है। पेनसिल्वानिया स्टेट यूनिवर्सिटी और नेशनल कैंसर इंस्टीट्यूट के वैज्ञानिकों के अनुसार लहसुन को पीसकर 10–15 मिनट तक खुलें में ही रखें। इससे आँच पर पकाते समय उसके पोषक तत्व नष्ट नहीं होंगे। बेहतर है कि कच्चा लहसुन खाया जाए। लहसुन को पीसकर इसका पेस्ट बना लें और चटनी की तरह इसे ब्रेड या रोटी पर लगाएं।

आयरन 10 गुना लें

टमाटर, सेब और नींबू जैसी अम्लीय गुणों वाली चीजों को लोहे की कड़ाही में पकाने से ऊर्जा बढ़ाने वाले आयरन की मात्रा खूब बढ़ जाती है और हमारा शरीर अधिक आयरन सोखता है। अगर लोहे की कड़ाही नहीं इस्तेमाल कर पा रहे हों, तो आयरन से भरपूर सब्जी को अम्लीय गुणों वाली चीजों के साथ बनाने से शरीर 10 गुना अधिक आयरन सोखता है। अगर पालक के पत्तों का सलाद बना रहे हों, तो उसमें आम के कुछ स्लाइस मिलाएं, इससे शरीर को आयरन अधिक मिलेगा।

आँखों और हड्डियों के लिए

लाल, हरे, संतरी, पीले फलों और सब्जियों में एवोकाडो, ऑलिव ऑइल, गिरिदार फल, आंवले या फिर अन्य स्वास्थ्य वर्धक वसा के स्रोत के साथ मिलाकर खाने से वसा में घुलनशील विटामिन जैसे ए, ई और के, की मात्रा बढ़ जाती है। इन पोषक तत्वों को खाने से आँखें तेज होती हैं, प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है और स्ट्रोक व ऑस्टियोपोरोसिस जैसी बीमारियों से बचाव होता है।

कैल्शियम की मात्रा बढ़ाएं

अगर आप चिकन सूप बना रहे हों, तो उसमें नींबू का रस, विनेगर या टमाटर मिलाएं। हार्वर्ड यूनिवार्सिटी और बोस्टन में बेथ इजरायल हॉस्पिटल के अनुसंधानकर्ताओं के अनुसार, हड्डी वाले चिकन में थोड़ा सा अम्लीय रस मिला देने से सूप में कैल्शियम की मात्रा 64 प्रतिशत तक बढ़ जाती है। अध्ययनों से पता चलता है कि हड्डी वाले चिकन में यदि अम्लीय विनेगर से तैयार सॉस मिला दें, तो कैल्शियम की मात्रा बढ़ जाती है।

जुकाम और फ्लू से बचाव

ताजे फल–सब्जियां बड़े–बड़े टुकड़ों में काटें। छोटे–छोटे टुकड़ों में काटने से उनके पोषक तत्व हवा और रोशनी के संपर्क में आते ही निकल जाते हैं। गाजर, आलू और टमाटर को मोटे–मोटे 4 टुकड़ों व खरबूजे को लंबी–लंबी फांकों में काटें। इससे विटामिन सी अधिक मात्रा में इनमें रह जाता है, जो प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाने में मदद करता है। इस तरह जुकाम–फ्लू आदि से बचाव होता है।

पोषक तत्वों को सुरक्षित रखें

बैंगन, आलू, सेब और दूसरी चीजों को इस्तेमाल में लाने से पहले उनका छिलका न उतारें। इससे महत्वपूर्ण पोषक तत्व सुरक्षित रहेंगे। छिलका प्राकृतिक कवच की तरह काम करता है और पोषक तत्वों को नुकसान नहीं पहुँचने देता। छिलके या इसके नीचे के हिस्से में कई तरह के विटामिन और खनिज तत्व होते हैं। रतालू या अरबी का छिलका फाइबर से भरपूर होता है। फल–सब्जियों को अच्छी तरह साफ कर इसके बाद इस्तेमाल में लाएं।

आरोग्य एवं संजीवनी प्रभाग

पौधों के पोषण में बोरॉन का महत्व

प्रतिभा कुमारी[1], रीना कुमारी[2] एवं बबलू शर्मा[3]

[1]अंतर्राष्ट्रीय चावल अनुसंधान संस्थान (आईआरआरआई), डीएपीओ बॉक्स 7777, मेट्रो मनीला, फिलीपींस।
(सीरियल सिस्टम्स इनीशिएटिव फॉर साउथ एशिया (सीसा), इंडिया ऑफिस, पटना
[2]कृषि अभियांत्रिकी विभाग, एनएम कॉलेज ऑफ एग्रीकल्चर, नवसारी कृषि विश्वविद्यालय, नवसारी
[3]मृदा और जल संरक्षण विभाग, बिधान चंद्र कृषि विश्वविद्यालय, मोहनपुर, नाडिया

पौधों के सम्पूर्ण वृद्धि एवं विकास के लिए 17 पोषक–तत्वों की आवश्यकता होती है। पौधों के लिए आवश्यक पोषक तत्व जिनकी आवश्यकता अधिक मात्रा में होती है, बहुमात्रिक तत्व कहलाते है, दूसरी ओर वैसे तत्व जिनकी आवश्यकता पौधों को कम मात्रा मे होती हैं, सूक्ष्म पोषक तत्व कहलाते हैं। पौधों की सामान्य वृद्धि एवं विकास मे बोरॉन एक आवश्यक सूक्ष्म पोषक तत्व की तरह कार्य करता हैं। मिट्टी और सिंचाई–जल में बोरॉन की उपलब्धता कृषि उत्पादन में महत्वपूर्ण निर्णायक हैं। पौधों के लिए बोरॉन की आवश्यकता महत्वपूर्ण हैं, लेकिन पर्याप्त वृद्धि के लिए इसकी केवल सूक्ष्म मात्रा की आवश्यकता होती है, अतः इसे सूक्ष्म पोषक तत्व की श्रेणी में रखा गया है। यह पौधों में शर्करा के परिवहन को नियंत्रित करने में मदद करता है। यह कोशिका विभाजन, फल और बीज विकास तथा हार्मोन विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है साथ ही पौधों की कोशिका–भित्ती में संरचनात्मक संपूर्णता प्रदान करता है। सूक्ष्म पोषक तत्व के रूप में, मिट्टी में बोरोन की मात्रा तुच्छ है, लेकिन सूक्ष्म पोषक तत्वों के बीच, इसकी कमी पौधों में सबसे अधिक देखी जाती है। पौधों में बोरॉन घुलनशील और अघुलनशील दोनों ही रूप मे पाये जाते हैं।

पूर्ण विकसित पौधो मे घुलनशील बोरॉन की मात्रा प्रदान किए गए बोरॉन की मात्रा के साथ रूपांतरित होती रहती है जबकि अघुलनशील बोरॉन की मात्रा स्थिर रहती है। पौधों में, बोरॉन के कुछ कार्य नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटेशियम, और कैल्शियम से जुड़े होते हैं। सभी पौधों के विकास के लिए बोरॉन आवश्यक हैं। इसकी पर्याप्त मात्रा उच्च पैदावार और फसलों की गुणवत्ता के लिए महत्वपूर्ण है। फसलों के सर्वोत्कृष्ट विकास के लिए संतुलित पोषण आवश्यक है। बोरॉन का प्रयोग सीधे मिट्टी मे या पर्णीय छिड़काव के रूप मे किया जा सकता है

बोरॉन के प्रमुख कार्य

बोरॉन पौधे में विभिन्न प्रकार के कार्यों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, पौधों में इसका सबसे महत्वपूर्ण क्रियात्मक प्रभाव कोशिका–भित्ति मे पाया गया है, बोरॉन के प्रमुख कार्य निम्नलिखित है:

कोशिका–भित्ति संरचना

बोरॉन, कैल्शियम के साथ कोशिका–भिती संरचना में शामिल रहता है। यह पौधों में कैल्शियम के चलन एवं समान्य कैल्शियम पोषण में भाग लेता है।

कोशिका विभाजन

बोरॉन पौधों के सक्रिय रूप से बढ़ते हुए भाग जैसे जड़ों के अग्रस्थ भाग, नए पत्ते और कली के विकास में सहायक है, यह पौधों या कोशिकाओं के मेरिस्टेमेटिक ऊतक जिसका विकास तेजी से हो रहा होता है, उसमे शामिल होता है फलस्वरूप पौधे की वृद्धि तेजी से होती है।

बोरॉन की कमी प्रायः पौधों के सक्रिय रूप से बढ़ते भागों की संरचना में बदलाव के द्वारा देखी जाती है। बोरॉन, पौधों के इन हिस्से में पानी, पोषक तत्वों, और कार्बनिक यौगिकों के ट्रांसपोर्ट को सुनिश्चित करता है।

शर्करा ट्रांसपोर्ट

प्रकाश–संश्लेषण की प्रक्रिया, सौर–ऊर्जा को पादप ऊर्जा जैसे कि शर्करा एवं कार्बोहाइड्रेट में रूपांतरित करती है, बोरॉन, सक्रिय रूप से बढ़ते हिस्से तथा बढ़ते फलों मे शर्करा (जो परिपक्व पौधों के पत्तों में प्रकाश संश्लेषण द्वारा उत्पादित होते हैं) ट्रांसपोर्ट की गति को बढ़ाता है, साथ ही शर्करा और स्टार्च के बीच संतुलन बनाए रखता है। सभी पौधों में जड़ के विकास के लिए तथा दलहनी फसलें जैसे अल्फाल्फा, सोयाबीन और मूँगफली मे जड़ों की ग्रंथियों के सामान्य विकास के लिए बोरॉन आवश्यक है।

फूल एवं फल का विकास

अधिकांशतः पौधों की प्रजातियों में बोरॉन की आवश्यकता वानस्पतिक विकास की तुलना में प्रजनन विकास के लिए बहुत अधिक है। बोरॉन, फूल उत्पादन एवं धारण करने की क्षमता, पराग नली का बढ़ाव एवं अंकुरण तथा बीज एवं फलों के विकास को बढ़ाता हैं।

पादप हार्मोन विनियमन

पादप हार्मोन कई विकास और प्रजनन कार्यों को विनियमित करते हैं। फूल बनने की शुरुआत, फलों का विकास, कोशिका–भित्ति एवं ऊतक का निर्माण एवं जड़ का विस्तार सभी क्रिया हार्मोन से प्रभावित होते हैं। बोरान पौधों में हार्मोन के स्तर को विनियमित करने में, नाइट्रोजन उपापचय तथा प्रोटीन निर्माण मे महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

आंतरिक जल संतुलन

बोरॉन, कोशिका झिल्ली के उचित कार्य में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है तथा आंतरिक जल संतुलन के समुचित नियंत्रण के लिए पोटाश का परिवहन करता है।

बोरॉन की उपलब्धता को प्रभावित करने वाले कारक

पीएचः मिट्टी मे मौजूद उच्च पीएच बोरॉन की उपलब्धता को कम कर देता है, जबकि निम्न पीएच इसको बढ़ाता है। लीचिंग स्थितिः बोरॉन मिट्टी मे गतिशील है, अतः दानेदार मिट्टी मे और अधिक बारिश होने से इसकी कमी खेतों में हो सकती है। निम्न कार्बनिक पदार्थः कार्बनिक पदार्थ, बोरॉन और कई अन्य पोषक तत्वों का संचयन करता है। निम्न नमी : बोरॉन का अवशोषण, जल अवशोषण की गति से निर्धारित होता हैं, फलस्वरूप मिट्टी की शुष्कता बोरॉन अवशोषण की गति को कम कर देता है। मिट्टी में कैल्शियम, बोरॉन संतुलनः कुछ शोध दर्शाता है कि मिट्टी मे कैल्शियम की उच्च मात्रा बोरॉन की मात्रा को कम करता है। पोटैशियम, बोरॉन संतुलन : कुछ शोध कार्यो से पता चलता है कि मक्का मे बोरॉन की मात्रा सीमित हो तो पोटैशियम की उच्च मात्रा मक्का के पैदावार को कम कर सकती है। जिंक, बोरॉन एवं फास्फोरस : बोरॉन संतुलन, जौ मे किए गए कुछ परीक्षण दर्शाते हैं कि जिंक का प्रयोग बोरॉन के संचय को कम करता है तथा फास्फोरस का उच्च प्रयोग बोरॉन के संचय को बढ़ाता है। नाइट्रोजन दबाव : नाइट्रोजन की कम उपलब्धता पौधों की शक्ति को उस हद तक कम करती है कि पौधे पर्याप्त मात्रा में अन्य पोषक तत्वों को भी ग्रहण करने में सक्षम नहीं होते इस प्रकार बोरॉन को ग्रहण करने की क्षमता प्रभावित होती है।

उच्च उतरदायी फसल

यद्यपि बोरॉन सभी पौधों के लिए एक अनिवार्य तत्व है, निम्नलिखित फसलें विशेष रूप से बोरॉन के प्रति उत्तरदायी हैं:

अल्फाल्फा, सेब, ब्रोकोली, पत्तागोभी, गाजर, फूलगोभी, अजवाइन, नींबू, क्लोवर, गेंहू, मकई, प्याज, आड़ू, मूंगफली, नाशपाती, सूरजमुखी, चुकंदर, टमाटर, और शलजम

बोरान की कमी के लक्षण

दुनिया भर में सूक्ष्म पोषक तत्व की कमी में सबसे अधिक बोरॉन की कमी है इसकी कमी के कारण फसल उत्पादन और फसल की गुणवत्ता में काफी नुकसान होता है। बोरॉन की कमी पौधों की वानस्पतिक और प्रजनन विकास को प्रभावित करती है, फलस्वरूप कोशिका–विस्तार, फल एवं बीज का बनना, प्रजनन क्षमता इत्यादि बाधित होती है। इसकी कमी के लक्षण फसल की प्रजातियों के बीच भिन्न होते हैं, लेकिन आम तौर पर यह पौधों के बढ़ते भाग, फूल और फलने वाले हिस्सों में प्रकट होते हैं। नये पत्ते अक्सर सामान्य क्लोरोसिस दिखाते हैं, जैसा कि अल्फाल्फा के मामले में होता है। क्लोवर के ऊपरी पत्ते लाल रंग के हो जाते हैं, दोनों फसलों में अंतिम इंटरनोड्स छोटे हो जाते है, तथा विकास विकृत हो जाता है। अमरूद के पौधे में बोरॉन की कमी से फलों के अन्दर, बीजों के पास एक धब्बा बन जाता है जो गूदे की तरफ बढ़ कर गूदे को भूरे या काले रंग का कर देता है जिससे प्रभावित भाग कड़ा हो जाता है तथा फलों का आकार छोटा हो जाता है। आलू की फसल मे बोरॉन की कमी से नई बढ़ती कलियाँ सूख जाती हैं, पौधा बोना रह जाता है। तना छोटा रह जाता है। पत्ते मोटे व ऊपर की ओर मुड़े हुए हो जाते हैं। आलू पर मृत धब्बे नजर आते हैं। दलहनी फसल तथा राई को अधिक बोरॉन की आवश्यकता होती है जबकि अनाज वाली फसल को इसकी आवश्यकता कम होती है।

बोरॉन की कमी होने पर प्रत्येक फसल विशेष लक्षण प्रकट करते हैं, इसकी कमी होने पर फसल का पैदावार घट सकता है, मिट्टी में बोरान की स्तर मे कमी होने के बावजूद अनाज वाली फसल में इसकी कमी कभी– कभी होती है, इसकी कमी होने पर गेहूं की फसल में सामान्य शीर्ष बनता है, लेकिन फूल नहीं खिलता, जौ की फसल में शीर्ष नहीं बनता, जबकि जई मे पूर्ण परागकण विकसित नहीं होता है, सभी अनाज वाली फसलों मे तना मोटा हो जाता है तथा पत्तियाँ मुड़ जाती हैं। राई की फसल मे इसकी कमी होने पर पत्तियाँ मुड़ जाती हैं तथा मुख्य तना की वृद्धि रुक जाती है, तने पर गहरे पानी के धब्बे दिखाई देते हैं, इस स्थिति में अक्सर कम फूल आता है। खराब बीज बनता है, फली का विकास अपरिपक्व या अनुपजाऊ बीज युक्त होता है। बोरॉन की कमी से फल फट जाते हैं, तनों और डंठल में भी दरारें पड़ जाती है, फलों के आकार अनियमित हो जाते हैं, तने छोटे रह जाते हैं, जड़ की वृद्धि अच्छी नहीं होती, पत्ते मोटे और भद्दे हो जाते हैं। वार्षिक और बहुवार्षिक फसल में बोरॉन का प्रयोग मिट्टी परीक्षण के आधार पर किया जाना चाहिए।

	बोरॉन की कमी के लक्षण
फसल	प्रकट लक्षण
अल्फाल्फा	अंतिम कली का मरना, ऊपरी भाग का पीला होना, कम फूल एवं फली का बनना
सेब	दाग बनना, छिलके का रंग फीका होना एवं फल में दरार पड़ना
ब्रोकोली	खोखला तना, अंदरूनी धब्बा, कर्ड का भूरा होना
पत्तागोभी	खोखला तना, जलीय भाग, खोखला शीर्ष, अविकसित पौधे
फूलगोभी	मुड़ी हुई पत्तियाँ, खोखला तना, बौना एवं भूरा कर्ड
गाजर	पत्तियों का लाल होना एवं जड़ का फटना
कपास	नए बॉल का गिरना, जड़ का फटना, फटे हुए भाग से गहरे रंग का तरल निकलना, बॉल का आधा खुलना
आलू	पौधों का झाड़ीदार होना, पत्तियों का मोटा होना एवं मार्जिन का ऊपर की तरफ मुड़ना
टमाटर	पत्तियों का मोटा होना, भंगुर पत्ते, फलों का सेट न हो पाना
गेहूँ	विकृत शीर्ष एवं पत्तियों का क्लोरोसिस

फूलगोभी की फसल में बोरान की कमी से खोखला तना

राई की फसल में बीज फली का विफलन

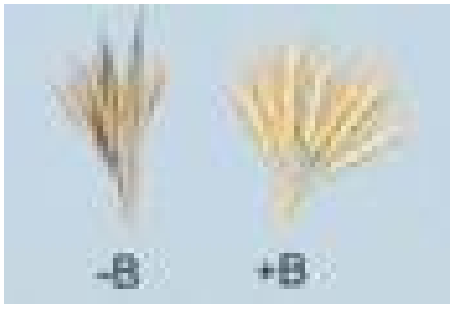

गेहूँ की फसल में शीर्ष का विकृत होना

पौधों में बोरॉन की कमी को प्रभावित करने वाले मृदा कारक :

फसलों में बोरॉन की कमी मुख्यतः कम कार्बनिक पदार्थ वाली मिट्टी अम्लीय मिट्टी तथा आर्द्र क्षेत्रों में, रेतीली मिट्टी में पायी जाती हैं। पौधों के लिए बोरॉन की उपलब्धता आम तौर पर बढ़ती मृदा पीएच के साथ विशेष रूप से पीएच 6.5 से ऊपर होने पर कम हो जाती है। बोरॉन की उपलब्धता का आकलन जुताई और सूखे की स्थिति के आधार पर किया जाना चाहिए।

बोरॉन के प्रयोग के तरीके

बोरॉन का प्रयोग बुआई के समय मिट्टी मे प्रयोग, बैंडिंग और पत्ते पर छिड़काव द्वारा मुख्यतः किया जाता है।

बोरॉन की कमी को सुधारने के लिए मिट्टी में बोरिक एसिड (16.5% बोरॉन), बोरेक्स (11.3% बोरॉन) या सोलूबोर (20.5% बोरॉन) का प्रयोग किया जा सकता है। चुनायुक्त मिट्टियों मे 15–20 कि.ग्रा./हे. एवं चूनारहित मिट्टियों मे 10–15 कि.ग्रा./हे. की दर से बोरेक्स (सुहागा) का प्रयोग बुआई के समय करना चाहिए, खड़ी फसल मे बोरॉन की कमी के लक्षण दिखाई देने पर 2–3 बार 10–12 दिनों के अंतराल पर 2.0–4.0 ग्राम बोरेक्स प्रति ली. की दर से तैयार घोल का छिडकाव फसल पर करना चाहिए। इसके प्रयोग से दलहनी एवं तिलहनी फसलों की पैदावार मे अच्छी वृद्धि होती हैं। तिलहनी फसलों के बीजों में तेल की मात्रा में भी बढ़ोतरी होती है। फूलगोभी में बोरेक्स के इस्तेमाल से फूल का आकार एवं वजन बढ़ जाता हैं तथा उसका भूरापन एवं सड़ना भी रुक जाता है एवं फूल का रंग सफेद चमकीला हो जाता है। फूलगोभी की फसल बोरॉन की कमी दर्शाने का बहुत अच्छा सूचक है, यह इसकी कमी के प्रति संवेदनशील है और विशिष्ट लक्षण दर्शाता है।

मिट्टी मे बोरॉन का अवशिष्ट प्रभाव

कुछ मिट्टी में बोरॉन का अवशेष (पिछला साल प्रयोग किया हुआ) अगले 3 से 4 साल के लिए बना रहता है, यह बोरॉन की दर, मिट्टी के प्रकार (बनावट), वर्षा की मात्रा या सिंचाई बलुई या हल्की मिट्टी या बहुत ही कम क्ले और कार्बनिक पदार्थ वाली मिट्टी में बार–बार छिड़काव की जरूरत होती है।

बोरॉन का पत्तियों पर छिड़काव का कोई दीर्घ कालीन प्रभाव नहीं होता है, एवं आमतौर पर प्रत्येक फसल के लिए छिडकाव की जरूरत होती है कभी–कभी एक मौसम के दौरान कई बार छिड़काव की जरूरत होती है। बोरॉन के प्रयोग से पहले यह जानना जरूरी है कि फसल को बोरॉन की आवश्यकता है कि नहीं, तथापि बोरॉन का अत्यधिक प्रयोग हानिकारक हो सकता है।

बोरॉन विषाक्तता

बोरॉन विषाक्तता अन्य सूक्ष्म–पोषक तत्वों के विषाक्तता के समान है आम तौर पर बोरॉन विषाक्तता पत्तियों के मार्जिन पर पीलापन या जले हुए की तरह दिखता है। धीरे–धीरे पतियों का गलना तथा झड़ना शुरू हो जाता है। यह तेजी से सभी निचले पत्तों को प्रभावित कर सकता हैं। सही प्रयोग दर एवं विषाक्त प्रयोग दर के बीच की रेंज बहुत ही संकीर्ण है। वैसे फसल जिनको बोरॉन की आवश्यकता कम होती है जैसे जौ, गेहूँ तथा सेम मे विषाक्तता के लक्षणों को दिखाने की संभावना ज्यादा होती है।

सारांश

बोरॉन, कोशिका–भित्ति एवं कोशिकीय गतिविधियों में कई कार्य करता है। इसकी कमी से कोशिका–भित्ति के प्लास्टिकता में कमी आती है, नए विभाजित कोशिकाओं का बढ़ाव सुचारु रूप से नहीं होता, पौधों की प्रजनन संबंधी विकास रूक जाता है। बोरॉन, प्रभावकारी जड़–ग्रंथि के माध्यम से नाइट्रोजन स्थिरीकरण के लिए नाइट्रोजिनेज की गतिविधि को बढ़ाता है। यह सभी पौधों के लिए एक अनिवार्य तत्व है, और फसल की गुणवत्ता और उपज को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। कोशिका–भित्ति तथा प्लाज्मा–झिल्ली के साथ ही साथ फेनोलिक यौगिकों के संघटकों के साथ बोरॉन काम्प्लेक्स का निर्माण, बोरॉन के क्रियात्मक कार्यों को प्रभावित करने का एक प्रमुख कारण है। प्रत्येक फसल के लिए इसके प्रयोग का तरीका, मात्रा और समय अलग होता है, प्रत्येक फसल के लिए संतुलित पोषक–तत्वों का प्रयोग आवश्यक है।

धान की फसल में बोरॉन विषाक्तता

जई की फसल में बोरॉन विषाक्तता

आरोग्य एवं संजीवनी प्रभाग

जानो लाल सड़न को

प्रियम वन्दना एवं दिनेश सिंह

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

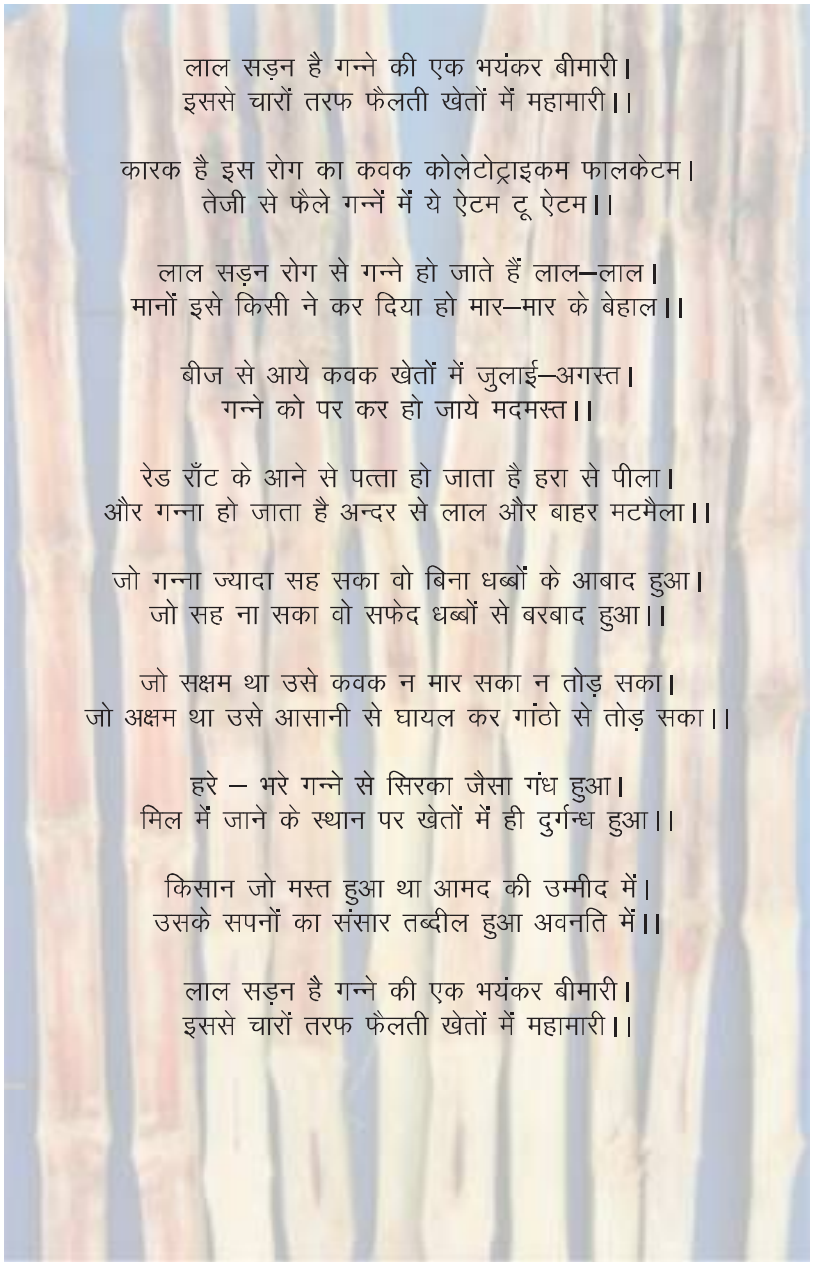

लाल सड़न है गन्ने की एक भयंकर बीमारी।
इससे चारों तरफ फैलती खेतों में महामारी।।

कारक है इस रोग का कवक कोलेटोट्राइकम फालकेटम।
तेजी से फैले गन्नें में ये ऐटम टू ऐटम।।

लाल सड़न रोग से गन्ने हो जाते हैं लाल–लाल।
मानों इसे किसी ने कर दिया हो मार–मार के बेहाल।।

बीज से आये कवक खेतों में जुलाई–अगस्त।
गन्ने को पर कर हो जाये मदमस्त।।

रेड रॉट के आने से पत्ता हो जाता है हरा से पीला।
और गन्ना हो जाता है अन्दर से लाल और बाहर मटमैला।।

जो गन्ना ज्यादा सह सका वो बिना धब्बों के आबाद हुआ।
जो सह ना सका वो सफेद धब्बों से बरबाद हुआ।।

जो सक्षम था उसे कवक न मार सका न तोड़ सका।
जो अक्षम था उसे आसानी से घायल कर गांठो से तोड़ सका।।

हरे – भरे गन्ने से सिरका जैसा गंध हुआ।
मिल में जाने के स्थान पर खेतों में ही दुर्गन्ध हुआ।।

किसान जो मस्त हुआ था आमद की उम्मीद में।
उसके सपनों का संसार तब्दील हुआ अवनति में।।

लाल सड़न है गन्ने की एक भयंकर बीमारी।
इससे चारों तरफ फैलती खेतों में महामारी।।

आरोग्य एवं संजीवनी प्रभाग

लाल सड़न रोग की महत्ता एवं बचाव का प्रबंधन

मुकेश कुमार, ए. के. मल्ल, वरूचा मिश्रा, बी. डी. सिंह एवं अश्विनी दत्त पाठक

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

लाल सड़न रोग गन्ने का प्रमुख रोग है तथा इसको गन्ने का कैंसर, लालसर, लाल विगलन, पोरी विगलन या कानारोग भी कहा जाता है। यह रोग *"कोलेटोट्राइकम फालकेटम"* नामक फफूंद के द्वारा होता है। इससे गन्ने की पैदावार एवं गुणवत्ता में ह्रास होता है। भारत में यह रोग पहली बार 1901 में ''बारबर'' ने आंध्र प्रदेश में गोदावरी के क्षेत्र में देखा था।

बीज के गन्ने एवं अंकुरित पौध पर लाल सड़न रोग के लक्षण

प्रसुप्त अवस्था में इस रोग के लाल भूरे रंग के छोटे–छोटे धब्बे गांठ के जड़ आक्षक, क्षत चिन्ह, जड़ पट्टी तथा आँख के पास चाकू से खुरचने पर दिखाई पड़ते हैं। इस प्रकार के गन्ने के टुकड़ों को बोने से अंकुरण में भारी कमी हो जाती है तथा रोग का फैलाव भी होता हैं। अप्रैल–जुलाई माह के आस–पास रोग के लक्षण पौधे की पत्तियों पर दिखाई पड़ते हैं। गोभी की पत्ती की मध्य शिरा एवं पर्णच्छद पर लाल भूरे रंग के विक्षत मध्य शिरा की दोनों सतह पर दिखाई पड़ते हैं। इस प्रकार की संक्रमित पौधे 30 दिन के अन्दर ही मरने लगते हैं। खेत में कभी–कभी रोग गन्ने के जमने के उपरान्त ही दिखाई पड़ता है जिससे पौधे मर जाते हैं।

पत्तियों पर रोग के लक्षण

गन्ने की पत्तियों के पर्ण पटल पर अनेकों छोटे–छोटे लाल–भूरे रंग के धब्बें बन जाते हैं। लेकिन इनका महत्व तने के लाल सड़न में नहीं के बराबर होता है। गन्ने की पत्तियों की मध्य शिरा पर रोग का संक्रमण जून से दिखाई पड़ता है। मध्य शिरा लाल भूरे रंग के धब्बे पैदा करता है। वर्षा ऋतु में धब्बे अधिक बढ़ते हैं तथा कभी–कभी पूरी मध्य शिरा को ग्रसित कर देते हैं।

खड़ी फसल में रोग के लक्षण

प्रायः वर्षा ऋतु के आरम्भ होने के बाद जुलाई के माह से गन्ने में इस रोग के मुख्य लक्षण दिखाई पड़ते हैं जो कि फसल कटने तक बने रहते हैं। पौधों की पत्तियों का हरापन समाप्त होने लगता है तथा गन्ने के अगोले की ऊपर से तीसरी या चौथी पत्ती सूखने लगती है। पत्तियों का सूखना किनारे से आरम्भ होकर मध्य शिरा की ओर बढ़ता हैं एवं ये पत्तियाँ सूखने के बाद सीधी खड़ी रहती हैं और धीरे–धीरे गन्ने का पूरा अगोला तथा सभी पत्तिया सूख जाती हैं। सितम्बर माह के बाद रोग के लक्ष्ण गन्ने के तने पर दिखाई देते हैं। रोगग्रस्त गन्ने की पोरियो का रंग लाल या बैगनी होने लगता है इस गन्ने को लम्बाई से चीरा जाय तो अन्दर ऊतकों का रंग मटमैला लाल दिखाई देता है। चौड़ाई में बीच–बीच में सफेद रंग के धब्बे दिखाई पड़ते हैं तथा यही मुख्यरोग की पहचान है। इनको प्रारम्भिक अवस्था में आसानी से देखा जा सकता है। रोगग्रस्त गन्ने से खट्टे रस अथवा एल्कोहल जैसी गंध आती है। रोग की बढ़ी हुई अवस्था में तना सूखने लगता है। फलस्वरूप गन्ने का वजन कम तथा चीनी की मात्रा बहुत कम हो जाती है। रोगी गन्ने की गाठें बहुत ही कमजोर होने के कारण आसानी से गाठों से टूट जाते हैं।

रोग का प्रसार

यह रोग मृदा एवं बीज द्वारा संचारित होता है। इस रोग के लैंगिक एवं अलैंगिक जनन भाग भूमि में पड़े गन्ने के बीज में उत्पन्न होते हैं और धीरे–धीरे फैलने लगते हैं। रोग तीन प्रकार से संचरण करता है–घाव; गन्ने में मौजूद बीजाणुओं तथा गन्ने में बेधन द्वारा।

आमतौर से गन्ने में रोग घाव सूड़ियों या वृद्धि दरार द्वारा होता है तथा ऐसे घावो में यह फफूंद बहुत जल्दी पहुँच जाती हैं। जब पत्तियां गन्ने से अलग हो जाती हैं उस समय फफूंद के बीजाणु अन्दर घुस कर रोग फैलाते हैं। यदि एक बार किसी रोग के बीजाणु तने के अन्दर प्रवेश कर जाते हैं। तो वह रोपण सामग्री, वायु, अथवा सिंचाई माध्यम द्वारा एक फसल/खेत में दूसरी फसल/खेत तक फैल जाते हैं। रोग ग्रसित बीज बोने से रोग अप्रत्यक्ष रूप से खेतों व प्रजातियों में फैलते चले जाते है। इस तरह से संक्रमित बीज बोने से रोगों की वार्षिक पुनरावृत्ति गुणित अनुपात में होती रहती हैं जिसके कारण रोगों का नियंत्रण बृहत स्तर पर करना अत्यन्त कठिन हो जाता है।

लाल सड़न रोग का समेकित प्रबंधन

निम्नलिखित क्रियाओं के करने से इस रोग का प्रबंधन किया जा सकता है :

यांत्रिक और सस्य प्रक्रियाओं द्वारा–

जिन खेतो में लाल सड़न रोग हो उस खेत से बीज का चयन नही करना चाहिए। गन्ने की बीज की जातीय शुद्धता शत प्रतिशत होनी चाहिए। गन्ने की रोग प्रतिरोधी प्रजातियों का चयन करना चाहिए। गन्ने की बुवाई करने के लिये उन्हीं जिनकी अच्छी उर्वरा शक्ति वखेतों का चयन करना चाहिए। गन्ने की बुवाई से पहले मिट्टी की जाँच अवश्य करनी चाहिए। खेत से पानी की निकासी का उचित प्रबन्ध होना चाहिए क्योंकि जल भराव वाले क्षेत्रों में प्रायः लाल सड़न एवं अन्य रोगों का प्रादुर्भाव अधिक होता हैं। जल भराव प्रभावित क्षेत्र में खेत के चारों ओर ऊँची मेड़ बनानी चाहिए जिससे रोगग्रस्त खेत का पानी दूसरे खेत में न जाये। पेडी की फसल से बीज का चयन नही करना चाहिए क्योंकि इसमें मुरहन फसल की अपेक्षा रोगों एवं बेधक

कीटों की संख्या अधिक होती हैं। गन्ने के खेत में विभिन्न तरह के बेधक कीटों द्वारा क्षतिग्रस्त गन्नों को काटकर बाहर निकाल देना चाहिए एवं बुवाई करते समय भी कीटों से प्रभावित टुकड़ों को निकाल देना चाहिए। गन्ने के खेत को खरपतवार से मुक्त रखना चाहिए क्योंकि रोगों के रोगाणु को फैलाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। गन्ने की फसल में समय–समय पर निराई–गुडाई करते रहना चाहिए तथा खरपतवारों को निकाल कर नष्ट कर दें। बसंत ऋतु में बोये गये गन्ने के पौधे जुलाई–अक्टूबर महीने में रोग ग्राहय अवस्था से गुजरते हैं। यह समय रोग संक्रमण के लिये अनुकूल होता है। इसलिये खेत की सप्ताह में एक बार रोग की जाँच अवश्य करनी चाहिए। यदि खेत में रोगी पौधें दिखें तो उन्हें तुरन्त जड़ से उखाड कर बाहर निकाल के जला देना चाहिए एवं उखाडे गये पौधों की जगह पर कवकनाशी का छिड़काव कर गड्डे को भर देना चाहिए। बीज में प्रयोग किये जाने वाले गन्ने की गांठें एवं कटे सिरे लाल हो तो उसे बाहर निकाल दें। गन्ने की बुवाई करते समय किसी प्रतिरोधी प्रजाति के साथ रोगग्राही प्रजाति की मिलावट नही होनी चाहिए। रोगग्रस्त गन्ने को जल्द से जल्द काटकर मिल में पेराई के लिये भेजना चाहिए।

रोग प्रतिरोधी प्रजातियों को उगाने से ही इस रोग को आसानी से रोका जा सकता हैं। परन्तु यह देखने में आया है कि कुछ साल के बाद प्रजातियों की प्रतिरोधिता कम हो जाती है क्योंकि इस रोग जनक की नई प्रभेद पैदा होती रहती हैं। इस बात को ध्यान में रखते हुये रोग प्रतिरोधी प्रजातियों का विकास का कार्य लगातार करना पड़ रहा है।

फसल चक्र प्रणाली को अपनाकर

एक ही खेत में लगातार गन्ना बोने से इस रोग का निवेश द्रव्य बढ़ने का अवसर अधिक रहता है। इस कारण से फसल चक्र अपनाकर सहयोगी खेती तथा हरी खाद की फसले उगाने से इस रोग का संक्रमण कम किया जा सकता है। धान, धनिया, सरसों, प्याज, लहसुन, आलसी व ग्वार की फसलों को फसल चक्र लेने से रोग का आयतन कम होता हैं। फसल चक्र में हरी खाद लेना श्रेयस्कर होता है।

उष्मोपचार विधि को अपनाकर

गन्ने के बीज का उष्मोपचार करने से लाल सड़न रोग का काफी हद तक प्रभाव कम हो जाता है तथा इसके साथ ही अन्य रोगों का पूर्ण रूप से प्रभाव खत्म हो जाता है। गन्ने के उष्मोपचार की दो विधियाँ प्रचलित हैं :

1. गर्म जल– इसमें गन्ने के टुकड़ों को 50 डिग्री सेल्सियस पर दो घंटे तक गर्म करते है।
2. नम–गर्म–वायु द्वारा 54 डिग्री सेल्सियस पर 2 घंटे 30 मिनट तक गर्म करते हैं। गन्ने का उपचार करते समय संयंत्र के अन्दर की आर्द्रता 99 प्रतिशत होनी चाहिए। उपचारित गन्नों को निकालकर तीन आँख के टुकड़ो में काट लेते हैं और बाविस्टिन 0.2 प्रतिशत के घोल में 30 मिनट तक डुबोने के पश्चात् बुवाई कर देते हैं ऐसा करने से बीज का अंकुरण अधिक होता है एवं उनके कल्ले शीघ्र बढ़ते है तथा फसल पर रोगों का प्रभाव भी कम हो जाता है।

त्रिस्तरीय बीज उत्पादन कार्यक्रम को अपनाकर

प्रजनक बीज का चयन

प्रथम वर्ष ⬇

शुष्क नम गर्म वायु शोधन (8 क्वि./दिन)

प्रजनक बीज का उत्पादन (60 क्वि.) — प्रथम चरण

द्वितीय वर्ष ⬇

आधार बीज का उत्पादन (600 क्वि.) — द्वितीय चरण

तृतीय वर्ष ⬇

व्यवहारिक बीज का उत्पादन (6000 क्वि.) — तृतीय चरण

बिहार क्षेत्र के लिये इस समय निम्नलिखित प्रजातियों में इस रोग के लिये प्रतिरोधिता है जैसे– कोलख 94184, को. 0232, को. पा. 9301, को. पा. 2061, बी.ओ. 139, बी.ओ. 141, कोशा 8432, बी.ओ. 153, को. 98014, को. 0118, को. 0238, को. 0239 इत्यादि।

जैविक उपचार

गन्ना बुवाई के समय 200 किग्रा. संबधित ट्राइकोडर्मा प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करें। 20 किग्रा. ट्राइकोडर्मा कल्चर को 200 किग्रा. प्रेसमड/कम्पोस्ट में मिलाकर 10–15 दिन छाया में पालीथीन से ढक्कर रखें एवं उसमें सूरज की रोशनी/धूप नहीं लगनी चाहिए। प्रेसमड/कम्पोस्ट बहुत अधिक गीला या बहुत अधिक सूखा नहीं होना चाहिए। ट्राइकोडर्मा में किसी दूसरी फफूंदी का मिश्रित नही होना चाहिए जिससे दुष्प्रभाव होने से बचा जा सके।

रासायनिक उपचार

लाल सड़न रोग संभावित क्षेत्र में गन्ना बुवाई से पहलें बाविस्टिन या किसी कवकनाशी (2 ग्राम/लीटर पानी) से उपचारित करके बुवाई करे। लाल सडन रोग से बचाव के लिये वर्षा प्रारम्भ होने से पहले ही किसी स्पर्श/आन्तरिक फफूंदनाशी का एक बार छिड़काव करना चाहिए। वर्षा के समाप्त होने के बाद या अगस्त के महीने में थियोफिनेट मिथाइल नामक कवकनाशी का छिड़काव करना चाहिए।

आरोग्य एवं संजीवनी प्रभाग

ग्लूटेन मुक्त गन्ने का आटा

राजीव कुमार, अंशु सिंह, अमरेश चंद्रा, सी. पी. सिंह एवं राधा जैन

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

ग्लूटेन एक गोलाकार संग्रहित प्रोटीन है जो कि तनु क्षार एवं अम्ल में घुलनशील है। सामन्यातरू गेहूं में यह चिपचिपे द्रव्य के रूप में होता है जो कि इसके आटे को गूँदने पर धोवन के रूप में पाया जाता है। ग्लूटेन जौ, राई, जई और उनकी सभी प्रजातियों तथा संकरों जैसे कि स्पेल्ट, खोरासन, एमर, फिंकोम, ट्रिटिकेल्स आदि में भी पाया जाता है। रोटी (ब्रेड) बनाने में ग्लूटेन के लसलसेपन का गुण एक महत्वपूर्ण कारक है। जब ब्रेड पकाई जाती है तब इसके आकार को बढ़ाने और उसे बनाए रखने में आटे की क्षमता में ग्लूटेन का योगदान होता है।

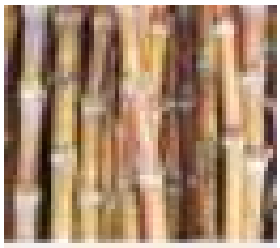

आंत में ग्लूटेन असहिष्णुता एक भौतिक अवस्था है जिसमें अपाच्य ग्लूटेन प्रोटीन मनुष्यों की आंत में चिपक जाती है जिसे हमारा शरीर इसे एक बाहरी आक्रांता के रूप में लेता है तथा इस अपाच्य ग्लूटेन के कारण आंत में जलन और छोटी आंत की दीवाल सहित माइक्रोविल्ली फैल जाती है। उन माइक्रोविल्ली के बगैर सतह का क्षेत्रफल कम होने से भोजन के पोषक तत्वों का अवशोषण कम हो जाता है। इससे अवशोषण विकार, अतिशय मोटापा, स्नायुविक व्यवधान, पोषक तत्वों की कमी, एनीमिया, मितली, त्वचा पर चकत्ते और अनेकों परेशानियाँ उत्पन्न हो जातीं हैं। जो व्यक्ति ग्लूटेन असहिष्णु होते हैं उनके लिए उपचार के रूप में एकमात्र वैकल्पिक उपाय का स्रोत है ग्लूटेन मुक्त आटा। ग्लूटेन असहिष्णुता से ग्रस्त व्यक्ति ग्लूटेन मुक्त आटा लेकर शांतिपूर्ण जीवन व्यतीत कर सकता है। गन्ना से प्राप्त ग्लूटेन मुक्त आटा को अनाज और मोटे अनाज के आटा के एक प्रमुख वैकल्पिक तत्व के रूप में माना जा सकता है। जब गन्ना से चीनी निकाल ली जाती है तो बचे हुए शेष डंठल/बगास का प्रयोग आटा निकालने के लिए किया जाता है जिसमें कोई ग्लूटेन नहीं होता है। गन्ने से प्राप्त किए गए ऐसे आटे में निहित पोटैशियम–फाइबर या फाइबासेल जिसमें उच्च फाइबर, कम चीनी और आयरन, विटामिन बी, कैल्शियम तथा खाद्य रेशे अधिक होते हैं। शरीर में कोलेस्ट्रॉल को कम करने के मामले में अघुलनशील फाइबर लाभदायक होता है। गन्ने की डंठल/बगास से तैयार आटा मानव खाद्य पदार्थों के रूप में बंछित रूप से उपयोगी साबित हो सकता है, जो मानव जाति के लिए एक उपयोगी विकास होगा।

उच्च गुणवत्ता और बहुमुखी प्रयोग में आने वाला गन्ने का आटा खाद्य प्रसंस्करण कला के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण उन्नति (प्रगति) है। ब्रेड बेक्ड और सेंके हुए उत्पादों में भी गन्ने के डंठल/बगास से तैयार आटा को इस्तेमाल किया जा सकता है। और इसका उपयोग गैर–एलर्जी छोटे वस्तु को बनाने में किया जाता है जो कि कार्यात्मक खाद्य पदार्थ में मिलाए जाते है।

कुछ देशों में गन्ने को (फेक्सनल फूड) आटा व्यावसायिक रूप से उपलब्ध है। वहाँ बढ़ती हुई ग्लूटेन एलर्जी वाले व्यक्तियों के बीच गन्ना के आटे की मांग अधिक है। यदि सस्ती तकनीक पर बल देते हुए इस महत्वपूर्ण उत्पाद को उपलब्ध करवाया जाय तो प्रचुर मात्रा में विदेशी मुद्रा की बचत की जा सकती है। इस उत्पाद के महत्व को देखते हुए यह संस्थान ग्लूटेन मुक्त गन्ने के आटे का व्यवसायीकरण करने की योजना पर विचार कर रहा है।

काला-धोला बादल आया संग ये अपने बरखा लाया।
रिम-झिम का संगीत सुनाता खुशियों का संदेश लाया।
जंगल महका, चिड़िया चहकी, नाचा मोर, पपीहा गाया।
काला-धोला बादल आया वर्षा की बौछारें लाया।

– रामशंकर चंचल

अमोद–प्रमोद प्रभाग

फ्री वाई–फाई का प्रयोग करें, परंतु सोच–समझ के

आशीष सिंह यादव, ब्रह्म प्रकाश, अतुल कुमार सचान, अवधेश कुमार यादव एवं योगेश मोहन सिंह

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

दूरसंचार की एक सेवा प्रदाता कंपनी द्वारा आरंभ की गयी सेवा से पूरे भारत में लोगों को इंटरनेट की लत सी लग गयी है। यद्यपि मुफ्त में इंटरनेट के उपयोग में कभी–कभी इंटरनेट की अत्यंत धीमी स्पीड से हम सबको अक्सर असुविधा या झुंझलाहट होती है। आजकल तो कई जगह जैसे एयरपोर्ट, रेलवे स्टेशन, बस स्टेशन, विश्वविद्यालयों, प्रमुख ऐतिहासिक स्थलों व महत्वपूर्ण स्थानों तक में इंटरनेट की मुफ्त सेवा उपलब्ध हैं। इनको सर्च कर कनेक्ट करने के लिए आप निम्नलिखित उपाय अपना सकते हैं :

फाइंड वाई–फाई फेसबुक एप

फ्री वाई–फाई सुविधा का लाभ उठाने हेतु आप अपने फोन में फेसबुक एप का भी उपयोग कर सकते हैं क्योंकि फेसबुक एप के मोर के आप्शन में जाकर उपलब्ध विकल्पों में थोड़ा नीचे स्क्रौल करके फाइंड वाई–फाई के विकल्प को चुनकर नजदीक उपलब्ध वाई–फाई के बारे में जानकारी पा सकते हैं। इनमें से किसी भी ओपेन वाई–फाई का उपयोग कर सकते हैं। विशेषतया आपरेटर्स द्वारा प्रदान की जा रही वाई–फाई सेवा से आप सीधे जुड़ सकते हैं।

वेफी–प्रो

मुफ्त में वाई–फाई सुविधा का लाभ उठाने हेतु आप गूगल प्ले स्टोर में मुफ्त में उपलब्ध वेफी प्रो एप को इन्स्टाल कर लें। इससे आप बार–बार वाई–फाई सर्च करने की परेशानी से बच सकते हैं क्योंकि यह स्वतः ही खोजकर आपको वाई–फाई की मुफ्त सुविधा की जानकारी देगा। आपकी लोकेशन के आधार पर आपके क्षेत्र में उपलब्ध सार्वजनिक वाई–फाई की जानकारी उपलब्ध कराना इस एप्लीकेशन की उल्लेखनीय विशेषता है। एक समय में कई वाई–फाई उपलब्ध होने पर यह सबसे तेज वाई–फाई नेटवर्क से आपको जोड़ेगा।

इन्स्टाब्रीज

गूगल प्ले स्टोर पर उपलब्ध इन्स्टाब्रीज एप को डाउनलोड करके भी आप मुफ्त वाई–फाई सेवा का लाभ उठा सकते हैं। आपके मार्ग में पड़ने वाले किसी भी वाई–फाई नेटवर्क से खुद को जोड़ने में यह एप सक्षम है। नेटवर्क उपलब्ध न होने की दशा में यह डाटा बंद न करने के लिए यह एप स्वयं ऑटोमोबाइल नेटवर्क पर आ जाता है।

इसी प्रकार कभी–कभी घर के बाहर जाने पर बाजार, कार्यालय या किसी रिश्तेदार या मित्र के घर जाने पर यदि आपको अच्छा नेटवर्क कनेक्शन प्राप्त नहीं हो रहा है तो भी आप उपरोक्त एप की सहायता से आप सार्वजनिक वाई–फाई की सुविधा का लाभ उठा सकतें हैं। परंतु ऐसा करते समय इस बात का सदैव ध्यान रखना चाहिए कि सार्वजनिक वाई–फाई नेटवर्क अत्यंत असुरक्षित होते हैं। अतः सार्वजनिक वाई–फाई द्वारा फेसबुक/ व्हाट्सएप / यूट्यूब खोलने या ई–मेल करते समय निम्नलिखित सुरक्षित रणनीति का पालन अवश्य करना चाहिए :

फोन के ऑपरेटिंग सिस्टम को नवीनतम एवं सुरक्षित रखना

ऑपरेटिंग सिस्टम को नवीनतम रखने से एकमात्र लाभ आपके स्मार्टफोन पर नए फीचर्स का आना ही नहीं है, अपितु वे ऑपरेटिंग सिस्टम को सुदृढ़ करने हेतु भेजे जाते हैं जिससे वे हैकर्स द्वारा आपके डाटा को न चुराने देने से बचाने में सक्षम हो सकें। इससे आप अपने से जुड़े सभी व्यक्तिगत डाटा को सदैव सुरक्षित रख सकेंगे, चाहे आप सार्वजनिक वाई– फाई का प्रयोग करें अथवा नहीं।

मोबाइल के एंटी–वाइरस टूल्स का प्रयोग

सार्वजनिक वाई–फाई का प्रयोग करने से पूर्व यह अवश्य सुनिश्चित कर लेना चाहिए कि आपके फोन में सुरक्षा के आवश्यक सॉफ्टवेयर इन्स्टाल हों। यद्यपि यह सलाह आईओएस पर लागू नहीं होती परंतु एंडरोइड फोनों के साथ मालवेयर की समस्या होती है। एंटी–वाइरस जैसे सुरक्षित सॉफ्टवेयर आपके फोन के मालवेयर चिन्हित करके तथा उनको हटाकर आपके फोन को सुरक्षा कवच प्रदान करते हैं। असुरक्षित वाई– फाई नेटवर्क के प्रयोग करने से आपके फोन पर किसी मालवेयर का आक्रमण हो सकता है।

धीमे सार्वजनिक वाई–फाई संभावित खतरे का संकेत

किसी सार्वजनिक वाई–फाई का प्रयोग करने पर धीमा नेटवर्क कनेक्शन मिलने अथवा साइन इन पेज करने में भी असुविधा होने पर तुरंत डिस्कनेक्ट करना बेहतर विकल्प है। राउटर से समझौता करने के कारण ही इंटरनेट की स्पीड धीमी हो सकती है अथवा राउटर से कनेक्ट न हो पाने अथवा अन्य किसी डिवाइस का राउटर की भांति दर्शाना समस्या का एक कारण हो सकता है। डाटा का किसी अन्य डिवाइस के द्वारा आने से भी इंटरनेट की स्पीड धीमी हो सकती है।

ऑनलाइन शॉपिंग या बैंकों के लेन–देन से बचें

असुरक्षित सार्वजनिक वाई–फाई से ऑनलाइन बैंकिंग तथा

शॉपिंग करना सदैव जोखिम भरा कृत्य हो सकता है। यह जासूसी स्क्रेमर्स इन साधनों को अपने मार्ग में आने वाले किसी भी अनएनक्रिपटेड डाटा को अपने स्वार्थवश प्रयोग करके आपको मुसीबत में डाल सकते हैं। आपको उन प्रतिष्ठित कंपनियों से ही शॉपिंग करनी चाहिए जो आपके पासवर्ड को सुरक्षित रखती हों आप वीपीएन का प्रयोग करके भी अपने इंटरनेट ट्रैफिक को एनक्रिपट कर सकते हैं।

दो कारक प्रयोग द्वारा प्रमाणीकरण

दो कारकों के प्रयोग द्वारा प्रमाणीकरण से आप सुनिश्चित हो सकते हैं कि आप सही ऑनलाइन सेवा से संचार कर रहे हैं। मानक 2एफए में प्रयुक्त दो कारक आपके लॉगिन क्रेडेंशियल जिसे आप पहले से जानते हैं तथा दूसरा अपने फोन पर जैनरेट किया गया कोड होता है। उपरोक्त दोनों कारकों के प्रयोग करने पर आप सुनिश्चित हो सकते हैं कि आप उचित वेबसाइट का प्रयोग कर रहें हैं।

आवश्यकता न होने पर वाई –फाई को डिसएबिल करना

अधिकांश व्यक्ति आवश्यकता न होने पर भी वाई–फाई को डिसएबिल करने को अधिक तवज्जो नहीं देते परंतु अपने स्मार्टफोन या टेबलेट पर तारारहित इंटरनेट को स्विच ऑफ रखना एक अत्यंत बुद्धिमानीपूर्ण कृत्य है। इसके साथ ही साथ इंटरनेट कनेक्शन शेयर करने वाले साधन जैसे वाई–फाई सेंस टूल के विंडो 10 मोबाइल वर्जन को भी कनेक्ट करने से पूर्व डिसएबिल कर देना चाहिए।

वीपीएन के बगैर कभी भी सार्वजनिक वाई – फाई का प्रयोग गलत

वीपीएन के प्रयोग द्वारा सार्वजनिक वाई–फाई को प्रयोग करने के खतरों को न्यूनतम अवश्य किया जा सकता है। पहले तो डेस्कटॉप व लैपटॉप में ही परंपरागत रूप से वीपीएन उपलब्ध होता था परंतु अब कई वीपीएन प्रदाता मोबाइल एप भी बनाने लगे हैं। इनके प्रयोग से आप सुरक्षित वीपीएन सर्वर से जुड़ते हैं जिससे आपकी डिवाइस से निकलते ही यह आपके इंटरनेट ट्रैफिक को एनक्रिपट कर देता है।

यदि आप उपरोक्त सावधानियाँ बरत कर सार्वजनिक वाई–फाई का प्रयोग करेंगे तभी आप मुफ्त की इंटरनेट सेवा से किसी भी प्रकार का धोखा खाने से बच सकेंगे।

बरखा रानी आई कर सोलह श्रृंगार, आने से उसके छा गई बहार ही बहार।

मेघों की काली साड़ी में लगी अति सुंदर, बिजली की पायल पहने वह मनहर।

आषाढ़ के पहले बादल ने की उसकी अगवानी, सावन-भादो में की उसने भी मनमानी।

तोड़ दिए सारे तट बंध ऐसी छाई मस्ती, वैभव रूप का ऐसा सब मान बए हस्ती।

रह-रहकर बरसाती वह ऐसी रसधार, मगन हो जाएं सब नाच उठे सारा संसार।

-कवि चौधरी

अमोद–प्रमोद प्रभाग

जीएसटी इंडिया: एक 17 साल पुराना सपना

राघवेन्द्र तिवारी, सुधीर कुमार शुक्ल, वी.पी. जायसवाल, एस.के. अवस्थी, आशा गौर एवं लालन शर्मा

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

भारत अपने जटिल कर प्रणाली के लिए कुख्यात था। नए व्यवसायों की शुरुआत के लिए, विभिन्न प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष करों के माध्यम से संचालन करना असंभव हो जाता था। सेवा कर जैसे करों में लगातार बदलाव चीजों को खराब कर रहे थे। लेकिन अब चीजें नए वस्तु और सेवा कर के साथ बदल जाती हैं। इसे सामान्यतः जीएसटी के नाम से जाना जाता है। भारतीय संविधान का एक सौ बाइसवा संशोधन विधेयक, आधिकारिक तौर पर संविधान (एक सौ एक संशोधन) अधिनियम, 2016 जिसने भारत में 1 जुलाई 2017 से राष्ट्रीय वस्तु और सेवा कर पेश किया ।

जीएसटी क्या है ?

जीएसटी वस्तु और सेवाओं की आपूर्ति पर लगाया जाने वाला एकमात्र कर है, जो निर्माता से लेकर उपभोक्ता तक है। जीएसटी भारत के कर ढांचें में सुधार का एक बहुत बड़ा कदम है। वस्तु एंव सेवा कर (Goods and Service Tax) एक अप्रत्यक्ष कर कानून है। जीएसटी एक एकीकृत कर है जो वस्तुओं और सेवाओं दोनों पर लगता है। जीएसटी लागू होने से पूरा देश, एकीकृत बाजार में तब्दील हो गया और ज्यादातर अप्रत्यक्ष कर जैसे केंद्रीय उत्पाद शुल्क, सेवा कर, वैट, मनोरंजन, विलासिता, लॉटरी टैक्स आदि जीएसटी में समाहित हो गए। इससे पूरे भारत में एक ही प्रकार का अप्रत्यक्ष कर लगता है ।

जीएसटी के चरण

1. सन 2000 में अटल बिहारी बाजपेयी सरकार ने पश्चिम बंगाल की वाममोर्चा सरकार के तत्कालीन वित्त एवं उत्पाद शुल्क मंत्री श्री असीम दास गुप्ता की अध्यक्षता में जीएसटी पर समीक्षा के लिए एक समिति का गठन हुआ, जिसमें उन्हे जीएसटी का पूरा मॉडल तैयार करने की जिम्मेदारी दी गई थी।
2. केलकर टास्क फोर्स ने जीएसटी के रूप में अप्रत्यक्ष करों को एकजुट करने की सलाह दी।
3. अप्रैल, 2010 में प्रस्तावित राष्ट्रीय स्तर का जीएसटी पहले 2006 के बजट भाषण के दौरान रखा गया था।
4. मई 2007 में, भारत के विभिन्न राज्यों के राजस्व और जीएसटी के कार्यान्वयन पर जीएसटी के प्रभाव को जानने के लिए वित्त मंत्रियों की एक अधिकार प्राप्त समिति (राज्य अधिकारित समिति) का गठन किया गया था ।
5. 2008–09 में केलकर टास्क फोर्स ने जीएसटी पर एक रिपोर्ट सौंपी जिसे 'एक मॉडल और भारत में जीएसटी के लिए रोडमैप' कहा गया ।
6. 2010 में वित्त मंत्री श्री पी. चिदंबरम ने अपने भाषण में घोषणा की थी कि जीएसटी अप्रैल, 2011 से लागू होगी।
7. 2011 में, 115वें संविधान संशोधन विधेयक को लोकसभा में सभी वस्तुओं और सेवाओं पर जीएसटी की उगाही के लिए पेश किया गया।
8. 2013 में, स्थायी समिति ने जीएसटी पर अपनी रिपोर्ट पेश की।
9. 2014 में, 122जी संविधान संशोधन लोकसभा में पारित किया गया।
10. दो साल की प्रतीक्षा के बाद 3 अगस्त, 2016 को राज्यसभा ने जीएसटी विधेयक पारित कर दिया और सितंबर 2016 में राष्ट्रपति का अनुमोदन प्राप्त किया।
11. 2017 में, सरकार ने जीएसटी बिलों की शुरूआत की, जिसमें सेंट्रल जीएसटी, इंटीग्रेटेड जीएसटी, जीएसटी विधेयक केंद्र शासित प्रदेश और जीएसटी विधेयक शामिल हैं।
12. अगस्त 2016 में, जीएसटी पारित करने वाला असम सबसे पहला राज्य बना।
13. 22 सितंबर को नए अप्रत्यक्ष कर प्रणाली के लिए कर की दर एवं इसमें दी गई छूट और इसकी सीमाओं पर निर्णय लेने के लिए जीएसटी परिषद का गठन किया गया ।
14. 23 सितंबर 2016 को, जीएसटी नेटवर्क का गठन किया गया, यह एक ऑनलाइन नेटवर्क है जो उपभोक्ताओं और व्यवसायियों की समस्याओं और सवालों के समाधान के लिए बनाया गया है।
15. 20 मई को, जीएसटी परिषद ने जीएसटी की चार दरे (5%, 12%, 18% तथा 28%) तय की।
16. मई 2017 में जीएसटी की शुरुआत की घोषणा की गई।
17. 20 जून, 2017, को वित्तमंत्री श्री अरुण जेटली ने घोषणा कर 30 जून की आधी रात को आजादी की रात के तर्ज पर जीएसटी का शुभारंभ किया ।

जीएसटी ने कौन से करों को प्रतिस्थापित किया ?

केंद्रीय स्तर पर

1. केंद्रीय उत्पाद शुल्क
2. अतिरिक्त एक्साइज ड्यूटी
3. सेवा कर
4. अतिरिक्त सीमा शुल्क ड्यूटी जो आमतौर पर प्रतिकारी ड्यूटी के रूप में जाना जाता है
5. विशेष अतिरिक्त सीमा शुल्क

राज्य स्तर पर

1. राज्य मूल्य वर्धित कर / बिक्री कर
2. मनोरंजन कर (स्थानीय निकायों द्वारा लगाए गए टैक्स के अलावा), केंद्रीय बिक्री कर (केंद्र द्वारा लगाए गए और राज्यों द्वारा एकत्र किए गए)
3. चुंगी और प्रवेश टैक्स
4. क्रय कर
5. विलासिता कर
6. लॉटरी, सट्टेबाजी आर जुए पर कर

सीजीएसटी, एसजीएसटी और आईजीएसटी क्या हैं?

वस्तु और सेवा कर का तीन प्रकार से विभाजन किया गया : सीजीएसटी, एसजीएसटी और आईजीएसटी।

सीजीएसटी (केंद्रीय जीएसटी): जहां राजस्व केंद्र सरकार द्वारा एकत्र किया जाएगा।

एसजीएसटी (राज्य जीएसटी): जहां राजस्व अंतर–राज्यीय बिक्री के लिए राज्य सरकारों द्वारा एकत्र किया जाएगा।

आईजीएसटी (एकीकृत जीएसटी): जहां राजस्व अंतर–राज्यीय बिक्री के लिए केंद्र सरकार द्वारा एकत्र किया जाएगा।

जीएसटी का सकारात्मक प्रभाव

जीएसटी के लागू होने से पूरे भारत में एक ही प्रकार का अप्रत्यक्ष कर लगेगा जिससे वस्तुओं और सेवाओं की लागत में स्थिरता आएगी।

संविधान के मुताबिक केंद्र और राज्य सरकारें अपने हिसाब से वस्तुओं और सेवाओं पर टैक्स लगा सकती हैं।

अगर कोई कंपनी या कारखाना एक राज्य में अपने उत्पाद बनाकर दूसरे राज्य में बेचता है तो उसे कई तरह के टैक्स दोनों राज्यों को चुकाने होते हैं जिससे उत्पाद की कीमत बढ़ जाती है। जीएसटी लागू होने से उत्पादों की कीमत कम होगी।

इसके लागू होने से टैक्स का ढांचा पारदर्शी होगा जिससे काफी हद तक टैक्स विवाद कम होंगे

जीएसटी लागू होने पर कंपनियों और व्यापारियों को भी फायदा होगा. सामान एक जगह से दूसरी जगह ले जाने में कोई दिक्कत नहीं होगी. जब सामान बनाने की लागत घटेगी तो इससे सामान सस्ता भी होगा।

एक समान कर से भ्रष्टाचार में कमी को जन्म देगा जो परोक्ष रूप से आम आदमी को प्रभावित करेगा

- "मेरे देश में हिन्दी की इज्जत न हो, यह मैं सहन नहीं कर सकता"
- भाषा के क्षेत्र में घृणा का नहीं, प्रेम और सौहार्द का स्थान होना चाहिए। देवनागरी भारत के लिए वरदान है।

– आचार्य विनोवा भावे

अमोद–प्रमोद प्रभाग

ऑफिस के काम को कैसे दें बखूबी अंजाम ?

ब्रह्म प्रकाश

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

अच्छी नौकरी पाने की चाहत तो सभी में होती है। बच्चे भी किसी प्रतिष्ठित संस्था में रोजगार पाने के स्वप्न को साकार करने के लिए बाल्यावस्था से कड़ी मेहनत करते हैं। नियमित शिक्षा अर्जित करने के साथ उचित प्रशिक्षण प्राप्त करने के बाद मिली नौकरी निश्चित ही अत्यन्त प्रसन्नता प्राप्त करती है। लोग अच्छी नौकरी मिलने को ही लक्ष्य मानते हैं। अधिकांश व्यक्तियों को प्रतीत होता हैं कि एक बार नौकरी मिल जाने के पश्चात कुछ विशेष करने की आवश्यकता ही नहीं होती, मात्र रूटीन कार्य व गतिविधियों से आराम से नौकरी की जा सकती है। परन्तु यह धारणा अब निर्मूल्य सिद्ध हो चुकी है। आज नौकरी में नयी से नयी चुनौतियाँ सिर उठाती नजर आती हैं। आवश्यकता है तो इनको योजनाबद्ध पद्धति से इनका समाधान ढूँढने की। प्रस्तुत लेख में कार्यालयों में आने वाली सामान्य समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया गया है:

किन बातों का रखें विशेष ध्यान ?

कार्यस्थल पर आप अपने जीवन का अच्छा खासा वक्त गुजारते हैं। अतः वहाँ की संस्कृति के अनुसार ही जिंदगी गुजारनी चाहिए। उदाहरणार्थ कार्यालय में समय प्रबन्धन को अपनाना होता है। साथ ही आपको यह भी ध्यान रखना होता है कि आपकी बात किसी की परेशानी का कारण तो नहीं बन रही।

अगर आपके अधिकारी ने आप पर विश्वास करके आपको कुछ गोपनीय बाते बताई हैं तो किसी भी दशा में साथियों के मध्य इन्हें शेयर न करें। इसके अतिरिक्त, किसी परियोजना पर यदि आप 'साइलैन्ट मोड' में कार्य कर रहे हैं तो इसके बारे में भी किसी से बात न करें। यदि आपको किसी अन्य संस्था/विभाग मे सेवा का अवसर मिल रहा है तो उससे जुड़ी जानकारी किसी साथी से शेयर न करें। अपने वीकेंड के बारे में साथियों से बात करने से बचें। कार्यस्थल पर कार्य निष्पादित करने में किसी से भी कोई गलती हो सकती है। आपके साथ भी ऐसा होने पर उसमें सुधार का प्रयत्न तो अवश्य करते रहें पर किसी भी दशा में अपनी गलती को किसी से हाईलाइट न करें। कोई दूसरा व्यक्ति आपकी गलती से अनुचित लाभ उठाने की चेष्टा कर सकता है। अपने व्यक्तिगत जीवन के बारे में किसी को बताना कभी भी उचित नहीं होता। घर की बात को कार्यालय व कार्यालय की बातों को घर पर शेयर करने से बचें। किसी सहकर्मी की शिकायत किसी दूसरे से कभी न करें। कार्यस्थल पर गौसिप से दूर रहें क्योंकि इससे भी कुछ हासिल नहीं होता है।

कैसे करें सही प्लानिंग ?

सफल व्यक्ति अपनी सफलता की कहानी स्वयं ही लिखते हैं। कार्यस्थल पर उनका नजरिया नितान्त अलग दिखता है। वह किसी कार्य को बोझ नहीं समझते। जोखिम उठाने में ही उन्हें अलग आनन्द मिलता है तथा सही योजनाबद्ध तरीके से हर कार्य को सही दिशा में ले जाकर लक्ष्य हासिल करके ही दम लेते हैं।

उचित योजना बनाने के लिए अपने को अधिक से अधिक व्यक्तियों से जोड़ें। इससे आपको उन सबसे कुछ न कुछ सीखने को मिलेगा। योग्य लोगों का मार्गदर्शन लें। बेहतर लोगों को अपने अच्छे व्यवहार से प्रभावित करके उनकी नजर में खास जगह बनाएं। दूसरों की बातों को धैर्यपूर्वक सुनें। सुनना एक अच्छी आदत है। इससे कार्यस्थल पर लोग आपको अहमियत देते हैं तथा आपकी छवि अच्छी बनती है। निर्णय करना भी एक हुनर है जो अनुभव से प्राप्त किया जा सकता है। कोई भी निर्णय लेने से पूर्व उस पर भली–भाँति विचार–मंथन करें।

रचनात्मक कैसे बनें ?

रचनात्मकता वह खूबी है जो आपको औरों से अलग करती है। दैनिक कार्यो को अलग व बेहतर तरीके से करने के प्रयत्न करने की आदत भी रचनात्मकता का ही प्रतीक है। आप उबाऊ व नीरस कार्यो को रचनात्मक ढ़ंग से बेहतर कर सकते हैं। जीतने वाले कोई अलग काम नहीं करते अपितु हर कार्य को अलग ढ़ंग से करते हैं। रचनात्मक कार्य करने वाले व्यक्तियों में तनाव की शिकायत कम होती है। कार्य चाहे छोटा हो या बड़ा, रचनात्मकता उसमें नया रंग भर देती है। रचनात्मकता कोई विशेष गुण नहीं अपितु लगातार बेहतर प्रयास करने की इच्छा मात्र है। इसे स्वीकार करें कि आप परफैक्ट नहीं हैं। परफैक्ट बनने के प्रयत्न में आप उन चीजों को भी नष्ट कर सकते हैं जो आपको अनूठा बना सकती थी। जब तक आप जीवन में रचनात्मक नहीं होते, आप जड़ रहेंगे व खिल नहीं पाएंगे।

कम्फर्ट जोन से कैसे बाहर निकलें ?

सपने देखना आसान होता है पर हकीकत में उसे साकार करना उतना ही मुश्किल होता है। सफलता अचानक नहीं मिलती इसके लिए लम्बा समय लगता है। सफलता पाने के लिए आपको लगन व कड़ी मेहनत के साथ कार्य करना होता है।

सफल होने के लिए काम से प्यार करें। सदा तटस्थ बने रहें व आरोप–प्रत्यारोप से बचें। मानसिक तौर पर अपने कार्य से जुड़ाव के लिए सकारात्मक सोच को अपनाना आवश्यक है। सफल व्यक्ति कभी इस बात की शिकायत नहीं करते कि उनके प्रयासों और उनकी मेहनत पर कोई ध्यान नहीं दे रहा है फिर अपने हक के अनुसार प्रशंसा नहीं पा सके। अन्याय से पाला पड़ने पर किसी की शिकायत करने से आपकी छवि ही खराब होती है, लाभ कुछ नहीं होता। बदलाव की इच्छा ही सफल व्यक्तियों के व्यक्तित्व का प्रमुख गुण है। जितनी सुगमता से आप सभी चीजों को स्वीकार करेंगे, सफलता मिलने की संभावनाऐं भी उसी तेजी से बढ़ेंगी। दूसरे को बगैर कोई क्षति पहुचाएं व सहयोगियों की मदद करना सफलता हासिल करने के लिए आवश्यक है। असंभव कुछ भी नहीं। अतः अपने मार्ग में आने वाली बाधाओं को रूकावट न मानें अपितु चुनौती मानकर उत्साहपूर्वक उसका सामना करके सही समस्याओं का हल निकालें। असफल होने पर खुद को न कोसें। अपितु पुरानी गलतियों से सीखकर नए उत्साह से काम पर लगने से सफलता अवश्य मिलेगी। एक मार्ग बंद होने पर दूसरा मार्ग अवश्य खुल जाता है। सफलता प्राप्त होने के लिए कोई न कोई रास्ता ढूँढने की आवश्यकता होती है। इस प्रकार कम्फर्ट जोन से निकलते ही आप सफलता के शिखर पर पहुँच जाएंगे।

ऐसे कैसे बोलें कि सुने दुनिया ?

आज व्यावसायिक जगत में पहचान वही बना पाता है जिसमें बुलन्दी के साथ अपनी उपस्थिति दर्ज करने की क्षमता हो। राजनीतिक जीवन की भाँति ही पेशेवर जिंदगी में भी अच्छा वक्ता होना आपकी उन्नति का मार्ग प्रशस्त कर सकता है। कामयाबी के लिए आपके काम व छवि के साथ–साथ आपका चर्चा में रहना भी नितान्त आवश्यक है। जिसे बोलने की कला आती है उसकी तरक्की को कोई नहीं रोक सकता। एक अच्छे वक्ता को सदैव जिस विषय पर, जिस स्थान पर व जिस समूह के सामने वक्तव्य देना हो, उसके अनुसार ही स्वयं को तैयार करना चाहिए। इंटरनेट, समाचार पत्रों व पुस्तकालयों का पूरा प्रयोग कर अच्छी स्पीच तैयार की जा सकती है। शीशे के सामने बोलने का अभ्यास करें तथा यदि सम्भव हो तो अपनी स्पीच को रिकॉर्ड करके सुनें व गलतियाँ सुधारने का कार्य करें। 'कम्युनिकेशन स्किल्स' मजबूत बनाने के लिए सही शब्दों का प्रयोग करें। अन्यथा सुनने वाले आपका सन्देश सही रूप में ग्रहण न करने के कारण आपकी बात को महत्व नहीं देंगे। सही उच्चारण भी अपनी बात रखने के लिए बेहद जरूरी हैं तथा इससे आप उपहास का पात्र बनने से भी बच सकेंगे। प्रभावी वक्ता बनने के लिए बातों को अच्छे ढ़ंग से कहने का प्रयास करिए। आप अपने साथ कुछ नोटस या पूरी स्पीच भी लिखकर ले जा सकते हैं। परन्तु बगैर पढ़ें दिए गए वक्तवय हमेशा प्रभावशाली होता है। बोलते समय सुनने वाले की आँखों में देखना आपके आत्मविश्वास को दर्शाता है। किसी समूह को सम्बोधित करते समय इधर–उधर देखने की बजाए श्रोताओं को देखें तथा अपना चेहरा एक ही तरफ या कुछ विशेष व्यक्तियों पर ही केन्द्रित न करें। बोलते समय हाथ, सिर व शरीर के मूवमेन्ट पर भी ध्यान देना चाहिए। बॉडी लैंग्वेज व शब्दों में तालमेल रखकर ही आप अपनी बात सही ढ़ंग से रख सकेंगे।

आपदा प्रबन्धन कैसे करें ?

क्राइसिस का सामना प्रत्येक संस्थान को कभी–कभार करना ही पड़ता है। ऐसी दशा में प्रबन्धन को सभी कर्मचारियों से एकजुटता दिखाने की आशा होती है। नकारात्मक वातावरण में हर किसी को अपनी सोच को सकारात्मक रखकर सर्वश्रेष्ठ करने की चुनौती होती है। एक बार ऐसा हो जाने पर हर किसी का आपमें विश्वास बढ़ जाता है। संकट के समय पूरे दल का फोकस वर्तमान को बेहतर बनाने पर होना चाहिए। इससे भविष्य तो सुन्दर हो ही जाएगा। प्रत्येक कर्मचारी को संस्था की स्थिति की जानकारी देना चाहिए। इसके बाद दल उचित रणनीति बनाकर कार्य करता है व आरम्भिक सफलता के बाद उनका आत्मविश्वास बढ़ने लगता है। इससे आप बड़ी सी बड़ी मुसीबतों का सामना सुगमता से करते हुए संस्था को उबारने में सफल हो जाते हैं। संकट के समय जब दल के सदस्यों का उत्साह व मनोबल कमजोर पड़ जाता है तब दल के सदस्यों का हौसला बढ़ाना नितान्त आवश्यक हो जाता है। टीम लीडर के द्वारा सभी सदस्यों को प्रोत्साहित करने से उनमें सकारात्मक सोच के संचार होने से वे प्रेरित होकर आगे की ओर सोचने लगते हैं। ऐसे समय में संस्था के लक्ष्यों को हासिल करने की लिए एक सुनियोजित योजना बनाने की आवश्यकता होती है। दल का नेतृत्व करने वाले लीडर को ऐसे अवसर पर खुद को मजबूत दिखाना होता है। लीडर अगर फ्रंट पर आकर समस्याओं का सामना करता है तो वह अपने सहकर्मियों के भीतर विश्वास, सुरक्षा तथा कार्यक्षमता में वृद्धि करने में सहायक सिद्ध हो सकता है।

कार्यस्थल में तनाव कैसे करें कम ?

समय के महत्व से आदिकाल से सभी परिचित हैं। परन्तु आज के दौर में इसका महत्व प्रतिदिन और भी बढ़ता ही जा रहा है। समय पर कार्य पूरा न करने से उस कार्य का महत्व ही समाप्त हो जाता है। इसी डेडलाइन से शुरू हुई अजीब दौड़ की परिणति तनाव बढ़ने से होती है। कार्यस्थल पर उचित शेडयूल अपनाकर कार्यस्थल में सन्तुलन बनने लगता है।

दिन की शुरूआत उचित योजना से करें। इसके लिए 30 मिनट अवश्य निकालें तथा उस दिन की प्राथमिकता के अनुसार सूची तैयार करें। डायरी रखकर भी आप अपने कार्यों की प्राथमिकता का निर्धारण उचित तरीके से कर सकते हैं। इससे आपको बेहतर किए गए कार्यों की जानकारी तो प्राप्त होती है, साथ ही किन क्षेत्रों में और प्रयास करने की आवश्यकता है, का भी

ज्ञान हो जाता है। काम की प्राथमिकताओं का निर्धारण करना भी एक कला है जिसे सीखने की जरूरत है। इसके बगैर आप किसी भी कार्य को डेडलाइन के भीतर समाप्त नहीं कर सकेंगे। एक बार शेडयूल बन जाने पर हर कीमत पर उसे लागू करें। जब आप सजग होकर काम को अंजाम देते हैं तो सफलता अवश्य आपके कदम चूमेगी। सफल होते ही आपके तनाव का स्तर भी कम हो जाता है।

मनोवैज्ञानिक तनाव को दो प्रकार का मानता है। एक सकारात्मक तनाव तथा दूसरा नकारात्मक तनाव। सकारात्मक तनाव सदैव अच्छा माना जाता हैं जबकि नकारात्मक तनाव से नुकसान के सिवा कुछ भी प्राप्त नहीं होता है। तनाव से निपटने हेतु सर्वोत्तम उपाय सोच को सार्थक बनाना है तथा यह मानकर चलना चाहिए कि आप बेहतर परिणाम देने जा रहे हैं।

अच्छे नेतृत्व के गुण कैसे विकसित करें ?

अच्छा टीम लीडर अपनी सोच व कार्यशैली दोनों से ही सफलता के नए मानक स्थापित करने का प्रयत्न करता है जिससे संस्था के साथ–साथ सहकर्मियों को भी लाभ मिलता है। खुद में नेतृत्व कुशलता लाने का प्रयत्न करके आप बुंलदियाँ छू सकते हैं। अपनी बुद्धिमत्ता व तार्किकता के बल पर संस्था को लाभ पहुँचाना एक अच्छे नेतृत्व की पहचान होती है। आप भी अपने कार्य व व्यवहार से दूसरों को प्रभावित कर सकते हैं। कोई भी जन्मजात स्टार नहीं होता, लेकिन कोई भी नेतृत्व के गुणों को विकसित करके लोगों के लिए रोल मॉडल बन सकता है।

एक अच्छा लीडर सीखने को सदैव तत्पर रहता है। 'अप टू डेट' रहकर ही आप अपना ज्ञान बढ़ा सकते हैं तथा अपने दल को भी इसके लिए प्रेरित कर सकते हैं। इससे आप व आपका दल किसी भी चुनौती का सामना करने के लिए सदा तैयार रहेगा। इस प्रक्रिया को भविष्य के लिए निवेश के रूप में ही लेना चाहिए। अच्छे नेतृत्व के लिए काम करने में आने वाली प्रत्येक चुनौती को सामना करने की क्षमता होनी चाहिए। हालात पर नजदीकी नजर रखकर ही आप सटीक फैसला लेते हुए काम को उचित अंजाम दे सकेंगे। नेतृत्व का उचित अर्थ दूसरों पर असर डालना, दिशा दिखाना तथा हमेशा समर्थन करना होता है न कि चीजों को नियंत्रण में रखना। आपको कार्य तथा व्यवहार में अधिक पारदर्शिता दिखाने की आवश्यकता होती है। अतः अच्छे लीडर के लिए अपने कार्य के प्रति सदैव ईमानदार दिखने की जरूरत होती है। जब किसी संस्था में आपको नेतृत्व का अवसर मिलता है तो आपसे यह अपेक्षा होती हैं कि आप उसके लिए हर तरीके से बेहतर सिद्ध हों। अपनी परियोजना में अच्छा करने के साथ आपको स्वयं में अहंकार न बढ़ने पर भी ध्यान देना होगा। कार्यस्थल पर आपकी जिम्मेदारी व जवाबदेही बनती है कि आप सहयोग की भावना से कार्य करें तभी आप सकारात्मक परिणाम दे पाएंगे। अतः सहयोग करने में कभी भी हिचकिचाहट न दिखाएं।

कार्यस्थल पर कैसे बढ़ाएं विश्वास व डालें दूसरों पर अमिट छाप ?

कार्यस्थल पर बेहतर इमेज का लाभ तो अवश्य होता है। लेकिन कई बार कुछ गलत आदतों के कारण आपकी छवि खराब हो जाती है। अतः आवश्यक है कि कार्यालय में वहाँ के मूल्यों के अनुसार ही कार्य करें। सदा स्मरण रखें कि अच्छा प्रभाव बनाने में तो बहुत समय लगता है परन्तु आपकी एक गलती से एक पल में आपके इंप्रेशन पर पानी फिर सकता है।

कार्यस्थल पर आपका सम्पूर्ण फोकस कार्य पर ही होना चाहिए। अपने हिस्से का प्रत्येक कार्य स्वयं ही करने का लक्ष्य बनाएं। कार्यस्थल पर नैतिक मूल्यों का सदैव ध्यान रखें। बातचीत व पत्र–व्यवहार में मर्यादित भाषा का ही प्रयोग करें। साथ ही अपनी वस्त्र–भूषा का भी ध्यान रखें व दूसरों पर टिप्पणी करने से बचें। अपने सहकर्मियों के कार्य व व्यक्तिगत बातों में हस्ताक्षेप न करें। सलाह मांगने पर ही किसी को सलाह दें व उसकी बातों को किसी से शेयर न करें। कार्यस्थल पर दूसरों की बातें सुनने की आदत डालने से आपको लाभ ही होगा। आप मित्रों से फीडबैक माँगकर उन पर गंभीरता से विचार करें। अपने दल का नेतृत्व करते समय अच्छा कार्य करने वाले प्रत्येक सदस्य को उसका क्रेडिट देने से भरोसे का वातावरण पैदा होता है। कार्यस्थल पर अनावश्यक बातें न करके, सन्तुलित बातें करें। बैठक में भी न कम बोलें, न अधिक। कम व स्पष्ट शब्दों में विश्वास के साथ अपना पक्ष रखें। कोई नयी रणनीति बनाते समय उसके लाभ व संभावित नुकसान पर अवश्य सोचें।

कार्य दिवस का अन्तिम घंटा क्यों होता है खास ?

यद्यपि कार्यस्थल पर व्यतीत किया गया प्रत्येक पल महत्वपूर्ण होता है परन्तु अन्तिम घंटे की बात ही कुछ और होती है। कार्यस्थल पर अच्छे दिन के लिए अच्छी शुरूआत की दरकार की तरह ही अन्तिम घंटा भी आपका विशेष ध्यान चाहता है क्योंकि इसका सीधा प्रभाव अगले दिन पर पड़ता हैं।

कार्यस्थल छोड़ने से पूर्व अगले दिन के कार्यो की सूची तैयार करके आप अगली सुबह का उपयोग अधिक बेहतर तरीके से कर पाएंगे। घर जाने से पूर्व अपनी डेस्क को व्यवस्थित करके जाएं। इससे अगले दिन कार्य शुरू करने में आपको सुगमता होगी। जरूरी कागजों को उचित स्थान पर रखने से समय व्यर्थ नहीं होता है। दिन भर किए गए कार्यो की समीक्षा करें। किसी काम में कोई कमी नजर आने पर उसे नोट करते जाएं व अगले दिन से उसे दूर करने का प्रयत्न करें। दिन भर के काम में आपको सहयोग देने वाले व्यक्तियों को कार्यालय से जाने से पूर्व धन्यवाद कहना न भूलें। इससे उनको अच्छा तो लगेगा ही, परन्तु उनका नजरिया भी आपके प्रति सदैव सार्थक रहेगा।

कैसे बनें प्रमोशन के काबिल ?

प्रत्येक व्यक्ति चाहता है कि उसके कार्य को पहचान मिले व उसे समय पर पदोन्नति मिले। प्रतिस्पर्द्धा के इस दौर में पदोन्नति की राह सुगम नहीं होती। पदोन्नति के लिए आपको उस समय की प्रतीक्षा नहीं करनी चाहिए, जब कोई दूसरा आपके कार्य का आकलन करें। बॉस के मापदण्डों पर खरा उतरने के लिए आपको स्वयं अपने कार्यों का समय–समय पर आकलन करते रहना चाहिए। अपने कार्य का फीडबैक लेकर ईमानदारीपूर्वक अपने को अंक दें। अच्छे अंक होने पर आपके आत्मविश्वास में वृद्धि तो होगी ही, आप किसी भी लक्ष्य को सहजता से हासिल कर सकेंगे। बॉस से बात करते समय अपनी बात को तर्क के साथ प्रस्तुत करने के साथ–साथ अपने को बेहतर बनाने की उनकी अपेक्षा जानने का भी प्रयत्न करें। अपने कार्य को शो करना अत्यन्त आवश्यक है। कार्यस्थल पर बहुत सारे व्यक्तियों के द्वारा कार्य किए जाने के कारण आपकी उपलब्धियाँ हर किसी को नजर नहीं आतीं। अतः आप कुछ ऐसा करें जिनसे उनकी नजर आपके काम पर टिक जाए। काम के साथ नेटवर्किंग का भी महत्व है। साथियों का भरोसा जीतने के लिए कार्य दिवसों में भी उनके साथ समय बिताकर सही सम्बन्ध बनाएं। बॉस भी इंसान होते हैं। उनको भी अपनी तारीफ सुनना अच्छा लगता है। अगर वह आपके लिए कुछ करें तो उनका शुक्रिया अदा करना न भूलें। इससे आपके और उनके बीच बेहतर बॉन्ड बनता है। आप महत्वाकांक्षी तो बनें पर संस्था पर बोझ न बनें। सभी क्षेत्रों में प्रतियोगिता के बढ़ते मौहाल में अपने में मल्टी–टांस्किंग एप्रोच विकसित करके अपने जॉब प्रोफाइल को मजबूत करें।

कैसे करें आत्म सुधार ?

हम चाहे जितने अच्छे कार्मिक क्यों न हों, अन्य की तरह हम भी *परफैक्ट* नहीं हैं। अतः सुधार की संभावनाएं सदैव बनी रहती हैं। यदि आप स्वयं सुधार का प्रयत्न नहीं करते हैं तो स्पष्ट समझ लें कि आप जीवन का आनन्द नहीं ले रहे। अपनी कमियों पर जीत हासिल कर लेने मात्र से आप सफलता के अधिक निकट पहुँच जाते हैं व आप अन्य लोगों के लिए आदर्श बनने लगते हैं। इसके लिए आपको सामने आने वाली हर बाधा को उचित रणनीति बनाकर आगे बढ़ना होता है। अपना आलोचक स्वयं बने बगैर आप अपने *करियर* की गति को नहीं बढ़ा सकते।

इसके लिए सुबह से ही शुरूआत करनी पड़ेगी। प्रातः जल्दी उठें व अच्छा नाश्ता करें। जिससे दिन भर आपकी ऊर्जा का स्तर ऊँचा रहेगा। सुबह के रूटीन में टहलना व यौगिक क्रियाओं को भी समाहित कर सकते है। प्रेरणात्मक पुस्तकें पढ़ें व सकारात्मक सोच वाले व्यक्तियों के साथ अधिक समय गुजारें। स्वयं पर नजर रखें। अपने अंर्तमन से पूछें कि आप जो उपलब्धि अर्जित करना चाहते हैं, उसमें आपको सफलता मिल भी रही है अथवा नहीं। आवश्यकता होने पर किसी मेंटर की सलाह भी ले सकते हैं। प्रत्येक दिन कुछ न कुछ नया सीखने व करने का प्रयत्न करें। निसन्देह इससे आपको जीवन में एक नया व सुखद अनुभव होगा। कार्यालय तथा घर के साथ बाजार, बस व ट्रेन में मिलने वाले प्रत्येक व्यक्ति के व्यवहार व चेहरे की अभिव्यक्ति पर करीबी नजर रखकर भी आप काफी कुछ सीख सकते हैं। किसी भी तरह का भय न पालें। हिचक लगने वाले कार्यो को करने का प्रयत्न अवश्य करें। नए–नए कार्यो को करने से आपमें आत्म–विश्वास आएगा।

यदि प्रत्येक व्यक्ति कार्यालय में काम करते समय उपरोक्त बातों का ध्यान रखेगा, तो निश्चित ही वह तनावरहित रहकर प्रसन्नतापूर्वक अपने समय का उचित उपयोग करके कम समय में अधिक काम कर सकेगा।

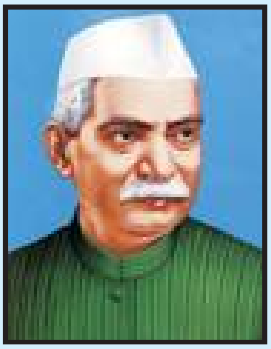

- हिन्दी चिरकाल से ऐसी भाषा रही है जिसने मात्र विदेशी होने के कारण किसी शब्द का बहिष्कार नहीं किया।
- राष्ट्रभाषा का प्रचार करना, मैं राष्ट्रीयता का एक अंग मानता हूँ।
- जब तक देशो के अंग्रेजी का अधिपत्य है तब तक स्वतंत्रता पर जनता का अधिकार अधूरा है।

– डा. राजेन्द्र प्रसाद

अमोद–प्रमोद प्रभाग

मुहावरेः अर्थ एवं उत्पत्ति

ब्रह्म प्रकाश एवं अभिषेक कुमार सिंह

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

मुहावरों तथा कहावतों के प्रयोग से भाषा में उत्कर्ष आता है। इसी कारण अपने कथन को अधिक प्रभावशाली बनाने हेतु इनका प्रयोग प्राचीन समय से किया जाता रहा है। सभी श्रेष्ठ रचनाकार पुराकाल से वर्तमान समय तक मुहावरों तथा लोकोक्तियों का प्रयोग करते रहें हैं। मुहावरा मूलतः अरबी भाषा का शब्द है जिसका अर्थ होता है अभ्यास। परंतु आजकल यह शब्द अन्य अर्थ में प्रयुक्त होता है। मुहावरे का हिन्दी पर्यायवाची शब्द वाक पद्धति है। प्रत्येक भाषा के मुहावरे अलग–अलग होते हैं। कोई मुहावरा एक ही रूप में सभी भाषाओं में नहीं होता है। मुहावरा अभिव्यक्ति की इकाई है जो शब्द समूह या वाक्यांश के रूप में प्रयुक्त होता है। मुहावरों के शब्दों को जस का तस ही प्रयोग किया जाता है। इनको किसी अन्य शब्द से बदलने पर इसका प्रभाव ही समाप्त हो जाता है। इसी कारण मुहावरों का ठीक–ठीक अनुवाद दूसरी भाषा में नहीं किया जा सकता है। डॉ. भोलानाथ तिवारी के शब्दों में "मुहावरा भाषा विशेष में प्रचलित उस अभिव्यक्तिक इकाई को कहते हैं जिसका प्रयोग प्रत्यक्षार्थ से अलग रूढ़ि लक्ष्यार्थ के लिए किया जाता है"। हिन्दी शब्द सागर मुहावरे को "किसी एक भाषा में दिखाई पड़ने वाली असाधारण शब्द योजना अथवा प्रयोग" के रूप में परिभाषित करता है। प्रस्तुत लेख में हिन्दी के मुहावरों की उत्पत्ति के बारे में कुछ प्रचलित कथाओं का वर्णन किया गया है।

लेना एक न देना दो

एक तालाब के पास पेड़ पर रहने वाले मोर व तालाब में रहने वाले कछुए में अत्यंत मित्रत्रा थी। एक बार एक बहेलिया मोर को अपने जाल में पकड़कर बेचने के लिए बाजार ले जाने लगा तो मोर ने बहेलिये से अनुरोध किया कि यहाँ से ले जाने से पूर्व कृपया मुझे पास के तालाब में रहने वाले मेरे मित्र कछुए से मिला दें। इस पर बहेलिया उसे लेकर तालाब में कछुए से मिलाने ले गया। अपने मित्र को बहेलिये के जाल में फंसा देखकर कछुआ अत्यंत दुखी हुआ तथा उसने बहेलिये से मोर को छोडने के बदले एक अत्यंत कीमती उपहार देने की बात की। बहेलिये के मान जाने पर कछुआ तालाब में डुबकी लगाकर एक बहुमूल्य हीरा लेकर आ गया। बहेलिये ने हीरे के बदले में मोर को छोड़ दिया। बहेलिये के जाने के बाद कछुए ने मोर को तुरंत कहीं दूर चले जाने की सलाह दी। रास्ते में बहेलिये के मन में लालच उत्पन्न हो गया। उसने सोचा कि उसको मोर के बदले कछुए से एक नहीं, अपितु दो हीरे लेने चाहिए थे। ऐसा सोचकर वह पुनः तालाब पर आया तथा कछुए से एक के स्थान पर दो हीरे देने के लिए कहा। कछुआ बहेलिये का लालच समझ गया। कछुए ने बहेलिये से कहा कि तुम वो हीरा मुझे दे दो। मैं तालाब के भीतर से इसके साथ वाला दूसरा हीरा ला दूंगा। बहेलिये ने कछुए को तुरंत हीरा वापस कर दिया। कछुआ हीरा लेकर तालाब में भीतर चला गया। बहेलिया काफी देर इंतजार के बाद समझ गया कि दूसरे के लालच में वह अपना हीरा भी खो चुका है। सबको जब इस किस्से का पता चला तो सभी कहने लगे कि बहेलिये ने दो हीरे के लालच में एक हीरा भी खो दिया। तभी से यह कहावत प्रचलित हो गयी "लेना एक न देना दो"।

अधजल गगरी छलकत जाए

एक बार एक किसान को नदी के पार दूसरे गाँव पहुँचना था। नदी के किनारे पहुँचने पर कोई नाव उपलब्ध नहीं थी व किसान को तैरना भी नहीं आता था। अतः उसने कम पानी वाले स्थानों से नदी को पैदल पार करने की सोची। परंतु दूसरे गाँव की नदी होने के कारण किसान को विभिन्न स्थानों पर पानी की गहराई का अंदाज नहीं था। तभी उसके अपने ही गाँव का एक अन्य व्यक्ति वहाँ आ गया। उस व्यक्ति ने किसान से उसकी परेशानी का कारण पूछा। किसान द्वारा समस्या बताए जाने पर वह हँसते हुए बोला "जिस स्थान पर नदी गहरी होगी वहाँ का जल शांत होगा। इसके विपरीत जिस स्थान पर नदी का पानी उथला होगा वहाँ वो शोर कर रहा होगा। वह व्यक्ति पुनः हँसते हुए बोला कि क्या तुमने यह कहावत नहीं सुनी है कि "अधजल गगरी छलकत जाए, भरी गगरिया चुपके जाए"। इसका अर्थ यही है कि गुणवान व्यक्ति हमेशा सरल एवं गंभीर रहते हैं।

नदी में रहकर मगर से बैर

एक नदी में बहुत सारी मछलियाँ रहतीं थीं। आस–पास के गाँवों के बच्चे नदी किनारे खेलने आते तो उनको पकड़ने का प्रयत्न करते परंतु मछलियाँ उनके हाथ नहीं आतीं थीं। नदी में एक मगरमच्छ भी रहता था जो निकट के मरघट पर जलाए जाने वाले मुरदों को खाकर अपना पेट भरता था। मरघट के निकट ही एक धोबी घाट भी था जहां पास के धोबी कपड़े धोया करते थे। मगर वहाँ भी अक्सर चक्कर लगाया करता था। मगर के पीठ पर एक कछुआ भी सबको नजर आता था। लोग आपस में दोनों की मित्रता की बातें किया करते थे। अचानक लोगों को मगर की पीठ पर कछुआ नजर आना बंद हो गया। धोबियों ने समझा कि या तो कछुए की मृत्यु हो गयी है या दोनों की मित्रता टूट गयी है। कुछ दिनों बाद लोगों ने मगरमच्छ को कहुए का पीछा करते हुए देखा।

सब जान गए कि दोनों की मित्रता शत्रुता में बदल गयी है। एक दिन कछुआ छपाक से नदी के किनारे आ लगा। वह अभी संभल भी न पाया था कि मगर ने उसे अपने नुकीले दातों से पकड़कर निगल लिया। यह नजारा देखकर सब लोग अत्यंत दुखी हुये। तभी वहाँ उपस्थित एक बुजुर्ग के मुख से अचानक निकला गया "जल में रहकर मगर से बैर संभव नहीं है"।

विनाश काले विपरीत बुद्धि

पांडवों के जंगल जाने के बाद नगर में अनेक अपशगुन होने लगे। एक दिन द्रोणाचार्य ने वहाँ आकर कौरवों से कहा कि आज से ठीक चौदह साल पश्चात पांडवों के द्वारा कुरुवंश का नाश हो जाएगा। द्रोणाचार्य की बात सुनकर धृतराष्ट्र ने कौरवों से गुरुजी की बात मानकर पांडवों को लौटा लाने को कहा तथा न आने की दशा में उनके अस्त्र, सेवक व रथ वन में ही छोड़ आने हेतु कहा जिससे पांडवों को वन में कोई तकलीफ न हो। उसी समय संजय ने धृतराष्ट्र से कहा कि पांडवों का राजपाठ छीनकर आप शोकाकुल क्यों हो रहें हैं। निश्चित ही पांडवों से बैर करके किसी का भी भला नहीं होगा तथा कुल का नाश अब अवश्य होगा। हम सभी ने आपके पुत्रों को मनाने की कोशिश की परंतु वे नहीं माने। विनाशकाल आने पर अन्याय भी न्याय के समान दिखने लगता है। मनुष्य अनर्थ को स्वार्थ तथा स्वार्थ को अनर्थ के रूप में देख मर मिटता है। काल डंडा मारकर किसी का सिर नहीं तोड़ता। उसका बल ही इतना होता है कि बुद्धि को विपरीत करके भले को बुरा व बुरे को भला दिखलाने लगता है। धृतराष्ट्र ने कहा मैं भी तो यही कहता हूँ 'विनाश काले विपरीत बुद्धि'।

जिस कारण सिर मुड़ाया, वो ही दुख सामने आया

एक गाँव में रहने वाले एक लड़के का मन पढ़ने–लिखने में नहीं लगता था। जब वह बड़ा हुआ तो पूरे गाँव में दिन भर आवारागर्दी करता रहता था। किसी भी काम में उसका मन नहीं लगता था। मेहनत से वह हमेशा बहुत कतराता था इसलिए नौकरी के कई अवसर उसने गवां दिये। सभी लोग उसे बहुत समझाते परंतु उसपर किसी की बात का कोई प्रभाव नहीं पड़ता था। अंत में उसके एक मित्र ने उसे सिर मुड़ाकर किसी तीर्थ स्थान पर जाकर किसी डेरे में शामिल हो जाने की सलाह दी। अपने मित्र की बात मानकर सिर मुड़ाकर वह लड़का हरिद्वार पहुँच गया तथा एक डेरे में शामिल हो गया। डेरे के महंत को प्रणाम करके वह लड़का बोला कि मैं अपना घर–बार छोड़कर आपके डेरे में आपके साथ रहने आया हूँ। महंत ने उससे पूँछा कि तू डेरे में क्या काम कर सकता है ? महंत की बात सुनते ही उसके पैरों के नीचे से जमीन खिसक गयी। उसने सोचा कि काम ही करना होता तो वह यहाँ क्यों आता। फिर मन ही मन बोला "जिस कारण सिर मुड़ाया, वो ही दुख सामने आया"।

कड़वा सच

एक फकीर को एक दिन एक स्वप्न दिखा। स्वप्न में फकीर को मार्ग में पाँच गधों पर बड़ी–बड़ी गठरियाँ लादे ले जा रहा एक सौदागर मिला। बोझ के कारण वे सभी गधे बहुत मुश्किल से चल पा रहे थे। ऐसा देखकर फकीर ने सौदागर से पूंछा कि इन गठरियों में क्या है? सौदागर ने बताया कि इसमे दैनिक काम–काज की चीजें हैं जिनको लेकर में बाजार जा रहा हूँ। फकीर ने पूंछा कि ऐसी क्या चीजें हैं इन गठरियों में? सौदागर ने कहा पहले गधे पर अत्याचार की गठरी लदी है। फकीर ने पूंछा कि भला अत्याचार कौन खरीदेगा? सौदागर बोला कि इसको राजा–महाराजा व सत्ताधारी लोग खरीदेंगे। फकीर ने दूसरी गठरी के बारे में पूंछा। सौदागर ने बताया कि दूसरी गठरी अहंकार से भरी है जिसे पंडित तथा विद्वान खरीदेंगे। तीसरे गधे पर ईष्या की गठरी लदी है जिसे धनवान लोग खरीदेंगे। चौथे गधे पर गठरी में बेईमानी भरी है तथा कारोबारियों के बीच में इसकी बहुत मांग है। पांचवें गधे पर छल–कपट से भरी गठरी रखी है जो औरतों में बेहद पसंद है। तभी फकीर की नीद खुल गयी। इस स्वप्न में फकीर को उसके कई प्रश्नों का जवाब मिल गया था।

अद्धी के वास्ते पैसे का तेल जलाना

प्राचीन समय में लखनऊ में एक नवाब साहब रहते थे। एक शाम मीठा खाने का मन होने पर नवाब साहब ने एक दुकान से कुछ रेवड़ियाँ खरीद लीं। रेवड़ी खरीद कर लौटते समय उनके लिफाफे से दो रेवड़ियाँ जमीन पर गिर गयीं। नवाब साहब चिराग लेकर उन गिरी रेवड़ियों को ढूंढने लगे। तभी वहाँ से निकलने वाले राहगीर ने नवाब साहब से पूंछा कि महाशय, आप इतनी देर से क्या ढूंढ रहें हैं?नवाब साहब ने अपनी दो रेवड़ियों के गिरने के बारे में बताया। नवाब साहब के बात सुनकर राहगीर ने कहा "महाशय, आपने तो एक अद्धी (पैसे का सोलहवां भाग) की रेवड़ियों के लिए एक रुपए का तेल फूँक दिया होगा। इसी पैसे से और रेवड़ियाँ ले लेते"। तभी से यह कहावत मशहूर हो गयी 'अद्धी के वास्ते पैसे का तेल जलाना'।

अमोद–प्रमोद प्रभाग

नव वर्ष बधाई संदेश 2018

नव वर्ष तभी मंगलमय हो। नव वर्ष तभी मंगलमय हो।

सुधीर कुमार शुक्ल परियोजना समन्वयक (गन्ना)

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

कर्त्व्य पर अपने ध्यान धरें। निज गुरुओं का सम्मान करें।।
बढ़ते कदमों को तेज करें। छल दंभ द्वेष निस्तेज करें।।
शिक्षा का यहाँ प्रसार बढ़े। धोती टोपी का प्यार बढ़े।।
जब जन–जन में स्वावलंबन हो। अपनी वसुधा व अंबर हो।।
नव वर्ष तभी मंगलमय हो।। नव वर्ष तभी मंगलमय हो।।
कृषकों में अलख जगाएँगे। नूतन संधान सजाएँगे।।
कृषि लागत यहाँ घटाएंगे। कृषकों की आय बढ़ाएँगे।।
गन्ने का जब आधार बढ़े। फिर चीनी का व्यापार बढ़े।।
सब कुछ इस पर जब अर्पण हो। कृषि क्रांति का आगे गुंजन हो।।
नव वर्ष तभी मंगलमय हो।। नव वर्ष तभी मंगलमय हो।।
अपनी संस्कृति का ध्यान रहे। निज गौरव का भी मान रहे।।
बेटे बेटी में भेद न हो। शिक्षा पर उसके खेद न हो।।
आपसी समझ से जीवन है। नहिं व्यर्थ यहाँ यह तन–मन है।।
जागृत सारा जब जन–जन हो।। अरि के हिय में तब कम्पन हो।।
नव वर्ष तभी मंगलमय हो।। नव वर्ष तभी मंगलमय हो।।
कृषि में जब सूखा रहे नहीं। जब कोई भूखा रहे नहीं।।
कुछ नव प्रजाति लेकर आयें। धरती पर हरियाली लाएँ।।
जिनके भी हाथों में हल हो। उनके प्रश्नों का भी हल हो।।
कृषि के विकास का चिंतन हो। फिर उस पर पूर्ण समर्पण हो।।
नव वर्ष तभी मंगलमय हो।। नव वर्ष तभी मंगलमय हो।।
भ्रष्टाचारी की बेल न हो। बाबाओं का भी खेल न हो।।
जब राष्ट्रवाद ही धर्म रहे। उस पर सारा ही कर्म रहे।।
कुछ करने का अन्तर्मन हो । न करने पर आंदोलन हो।।
जब रिश्तों में न अनबन हो। सारी खुशियों का संगम हो।।
नव वर्ष तभी मंगलमय हो।। नव वर्ष तभी मंगलमय हो।।
रिश्तों में शीतलता न हो। अपनों संग व्याकुलता न हो।।
जो प्रहरी बन कर तने खड़े। धरती का करते मान बड़े।।
निज सम्बन्धों को छोड़ यहाँ। हमको रक्खे हैं जोड़ यहाँ।।
जब दया धर्म गठबंधन हो। माटी की खुशबू चन्दन हो।।
नव वर्ष तभी मंगलमय हो।। नव वर्ष तभी मंगलमय हो।।

अमोद–प्रमोद प्रभाग

भ्रष्टाचार का जिम्मेदार कौन?

सी. पी. सिंह एवं देवेंद्र सिंह

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

सामान्य शब्दों में भ्रष्टाचार का शाब्दिक अर्थ है भ्रष्ट–आचरण यानि गलत तरीके से किया जाने वाला व्यवहार। आजकल सामान्य वार्तालाप में भी भ्रष्टाचार शब्द का उच्चारण ऐसी सरलता व स्वभाविकता से होता रहता है जैसे समाज में यह एक प्रचलित व व्यवहारिक शब्द हो जोकि इस शब्द की व्यापकता एवं सार्वभौमिकता का प्रमाण है। यह शब्द जितना सरल व प्रचलन में है, दरअसल में उतना सरल है नहीं। भ्रष्टाचार अपने आप में एक इतनी बड़ी बुराई बन चुका है कि समाज का शायद ही कोई व्यक्ति इससे अछूता रह पाया है। प्रत्येक वर्ग का कोई न कोई व्यक्ति या तो भ्रष्टाचार का शिकार होता है या शिकारी। यह इस बात पर निर्भर करता है कि अवसर एवं दुस्साहसिक शक्ति किसके पक्ष में है।

मानव एवं भाषा विकास के क्रम में किसी भी शब्द की व्युतपत्ति बगैर किसी कारण या आवश्यकता के नहीं होती है। सामाजिक संरचना में निश्चय ही ऐसे नियम एवं उपनियम बनाए गए होंगे कि समाज का प्रत्येक व्यक्ति या वर्ग अपना–अपना जीविकापार्जन करते हुए सुख व शांति से जीवन व्यतीत कर सके। इन नियमों एवं उपनियमों में एसे प्रावधान अवश्य किए गए कि नैसर्गिक सच्चाई और स्वाभाविक आचरण को नीति के स्तम्भ के रूप में प्रस्थापित किया गया। सत्यपरक व स्वाभाविक नीतियों के अनुपालन को सदाचार तथा गलत एवं अस्वाभाविक नीतियों के अनुसरण को भ्रष्टाचार कहा गया।

भ्रष्टाचार की उत्पत्ति

दरअसल सामाजिक व आर्थिक विकास के समानान्तर ही प्रतिस्पर्धाओं का सृजन हुआ और इन प्रतिस्पर्धाओं में गलत नियत के वशीभूत होकर ईष्या, द्वेष, बैर, आदि की भावना से ग्रस्त व्यक्तियों द्वारा अपने को सर्वोच्च सिद्ध करने की उत्कंठा के परिणामस्वरूप भ्रष्टाचार का जन्म हुआ। हांलाकि भ्रष्टाचार की शुरुआत कब हुई, के बारे में कहना अत्यंत कठिन है। सृष्टि की उत्पत्ति और जीव विकास के क्रम में जीवन संघर्ष एक स्वाभाविक प्रक्रिया है और इसमें प्रतिस्पर्धा होना भी संभव है। मगर प्रकृति में जीवों का प्रतिस्पर्धात्मक व्यवहार स्वाभाविक एवं प्राकृतिक होता है जहां पर भ्रष्ट आचरण की संभावना न के बराबर पाई जाती है। जहां तक भ्रष्टाचार की प्राचीनता का प्रश्न है तो इसका प्रमाण पौराणिक काल से ही प्राप्त होता रहा है। पौराणिक कथाओं के अनुसार इन्द्र पर अहिल्या के संदर्भ में चरित्रहीनता जैसे भ्रष्टाचार का आरोप है तो दानवों में रावण, मेघनाथ आदि द्वारा मायावी युद्धों के साथ सीता हरण जैसे भ्रष्टाचार भी शामिल हैं। रामायण के अनुसार मंथरा के प्रपंचों द्वारा राम को वनवास, पेड़ की आड़ से श्रीराम द्वारा बालि का बध, सूर्पनखा द्वारा विवाहित श्रीराम से परिणय प्रस्ताव आदि अनेकों भृष्ट आचरणों के उदाहरण हैं। इसी प्रकार महाभारत में लाक्षागृह, द्रौपदी चीरहरण के अलावा महारथियों का धोखे से वध आदि भ्रष्टाचार के अनेकों उदाहरण हैं।

भ्रष्टाचार के कारण

यदि हम भ्रष्टाचार के कारणों का विश्लेषण करें तो इसके केंद्र में मानवीय विकारों जैसे लालच, भय, स्वार्थ, अहंकार, मद, मोह, मत्सर, ईष्या, द्वेष, महत्वाकांक्षा, आदि की अहम भूमिका है। अधिकतर भ्रष्टाचार इन्हीं विकारों की उत्पत्ति होते हैं। हांलाकि कभी–कभी भ्रष्टाचार की रोकथाम के लिए किसी को मजबूरी में भ्रष्ट आचरणों का सहारा लेना पड़ सकता है मगर यह विशेष परिस्थिति में उठाया गया अस्थाई कदम हो सकता है। इसे अगर स्थाई उपाय बनाया जाता है तो यह भी भ्रष्टाचार की परिधि में आ जाता है। जीवन संघर्ष में कमर तोड़ प्रतिस्पर्धा भी भ्रष्टाचार का एक महत्वपूर्ण कारण है। अपने आप को सर्वोच्च बनाने या दिखने की महत्वाकांक्षा ने तो भ्रष्टाचार की सीमाएं ही पार कर दी हैं। वर्तमान युग में धन–संपत्ति ने लोगों को ऐसा इतना जकड़ कर रखा है कि मुद्रा के लिए कोई भी व्यक्ति कुछ भी करने को तैयार हो सकता है। इसके लिए आकर्षण हो भी क्यों न, आखिर इसके बल पर संसार की समस्त भौतिक वस्तुओं के साथ–साथ समाज के भ्रष्ट लोगों का जमीर तक भी खरीदा जा सकता है। इसलिए धन प्राप्त करने लिए नित्य–प्रति भ्रष्टाचार के नवीनतम तरीके आविष्कृत हो रहे हैं।

भ्रष्टाचार के प्रकार

भ्रष्टाचार कितने तरह का होता है, पर कुछ प्रकाश तो डाला जा सकता है मगर इसकी सीमा इतनी व्यापक है कि भ्रष्टाचार के अंतिम प्रकार तक पहुंचना कठिन ही नहीं, असंभव है क्यों कि हर क्षण नए–नए भ्रष्टाचारों का उदय होता रहता है। भ्रष्टाचार की इस अनंत सीमा में कुछ सामान्य प्रकार के भ्रष्टाचारों का उल्लेख इस प्रकार है।

1. सामाजिक भ्रष्टाचार,
2. धार्मिक भ्रष्टाचार,
3. आर्थिक भ्रष्टाचार,
4. प्रशासनिक भ्रष्टाचार,
5. व्यावसायिक भ्रष्टाचार,
6. राजनैतिक भ्रष्टाचार

सामाजिक भ्रष्टाचार

मानव के सामाजिक विकास के क्रम में सर्वप्रथम एकल परिवारों का उदय हुआ और फिर संयुक्त परिवारों के समूहों से अनेकों सामाजिक इकाइयों का निर्माण हुआ। प्राचीन काल में समाज की प्राथमिक इकाई यानि परिवार में सामान्यता सामाजिक भ्रष्टाचार की संभावना बहुत कम होती थी क्योंकि परिवार के मुखिया का नेतृत्व काफी दृढ़ होता था और उसके भय से किसी सदस्य में भृष्ट आचरण करने की हिम्मत न होती थी मगर कालांतर में अधिकारों एवं शक्ति का दुरुपयोग करके कई मुखियाओं द्वारा ही भ्रष्ट आचरणों का प्रादुर्भाव हुआ और तदुपरान्त परिवार के अन्य सदस्य भी समाज से अनेकों दुष्प्रवृत्तियों को ग्रहण करके भ्रष्ट आचरणों की धारा में बहने लगे। इन भ्रष्ट आचरणों या भ्रष्टाचारों में किसी परिवारीजन द्वारा किसी अन्य की कोई वस्तु चुराना या उस पर अधिकार जमाना, परिवार के कार्यों में सहयोग न करना, किसी वस्तु या बात को छुपाना, किसी कार्य से बचने या गलती करने पर झूठ बोलना, गलत संगत से अपराध जगत में प्रवेश करना आदि एसे उदाहरण हैं जिनसे भ्रष्टाचार की शुरुआत होती है। मगर उससे भी गलत प्रवृत्ति की शुरुआत इस रूप में हो चुकी है कि किंचित परिवारों या रिश्तेदारों के सदस्यों के बीच अवैध संबंध भी सुनने में आने लगे हैं। इसके अलावा कई परिवारों में टेलीविजन के धारावाहिकों की कल्पित कहानियों की तर्ज पर साजिशों का यथार्थ मंचन भी देखने को मिलने लगा है।

परिवार की दहलीज से बाहर मित्रों, रिश्तेदारों, पड़ोसियों, व सहकर्मियों के बीच भी कथित मानवीय विकारों के कारण अनेकों प्रकार के भ्रष्टाचारों का उदय होता है। जैसे स्वयं की झूठ–मूठ प्रसंशा करना, दूसरे की बुराई करना, स्वार्थवश झूठ बोलना, दूसरों को बहकाना एवं उकसाना, विश्वासघात करना, बेईमानी करना, दूसरे को नुकसान पहुंचाना, झगड़ा करना या करवाना, परनारियों या बालिकाओं पर बुरी नजर डालना, उन्हें छेड़ना, अपहरण, बलात्कार व हत्या करना, चोरी एवं डकैती डालना, कत्ल करना, ठगना, दूसरे की हंसी उड़ाना, अफवाह फैलाना आदि ऐसी सामाजिक बुराइयाँ हैं कि इनमें व्यक्तियों द्वारा भ्रष्ट आचरण किया जाता है जो की पूर्णतया भ्रष्टाचार की परिधि में आता है।

धार्मिक भ्रष्टाचार

सामाजिक व्यवस्था में अनेकानेक धर्म हैं और विभिन्न मतावलंबी अपने अपने मतानुसार अनुसार अलग–अलग धर्मों में विश्वास रखते हैं जो कि उनका संवैधानिक अधिकार है। धर्म वस्तुतः एक आस्था का विषय है जिसमें किसी भी व्यक्ति पर किसी भी प्रकार का दबाव नहीं होना चाहिए कि वह किस धर्म को अपनाए और किसे नहीं। मगर वस्तुस्थिति यह है कि अलग–अलग धर्मों के धर्म प्रवर्तकों ने अपने धर्म की स्थापना की और अपनी–अपनी पूजा पद्धतियों के साथ लिखित एवं अलिखित उपदेशों के द्वारा अपने अनुयायियों के लिए जीवन पद्धति, परोपकार, सामाजिक व्यवहार एवं सहिष्णुता का संदेश दिया। मगर उनके अनुयायियों में जो मठाधीश थे, ने अपने–अपने स्वार्थ के हिसाब से उन उपदेशों का विश्लेषण किया और अपने अनुयायियों की संख्या में वृद्धि करके अपने धर्म को सर्वोच्च सिद्ध करने की कुचेष्टा करते रहे और इसे फलीभूत करने के लिए भ्रष्ट आचरणों का सहारा भी लेते रहे। इन्हीं कुचेष्ठाओं का दुष्परिणाम है कि इस्लामी आतंकवाद दुनिया के लिए नासूर बन चुका है। धार्मिक कट्टरता के चलते आर्थिक भ्रष्टाचार के साथ–साथ मानवीय बर्बरताएँ धार्मिक भ्रष्टाचार के परिणाम हैं कालांतर में धार्मिक भ्रष्टाचार आर्थिक भ्रष्टाचार से जुड़ गया जिसमें सम्पत्ति, चन्दा, चढ़ावा, दान आदि के दुरुपयोग के साथ–साथ इसके स्वामित्व हेतु किसी भी भ्रष्ट आचरण तक जाना सम्मिलित है। धर्म के राजनीतीकरण से लेकर इसकी आड़ में अनेकों अनैतिक धंधे हो रहे हैं और धर्म का लगभग व्यवसायीकरण हो चुका है। अभी हॉल में ही कई धर्म गुरुओं के भ्रष्ट आचरणों का भंडाफोड़ हो चुका है जिनमें डेरा सच्चा सौदा के बाबा राम रहीम, संत धर्मपाल, आशाराम बापू, आध्यात्मिक विश्वविध्यालय के सर्वेसर्वा बीरेन्द्र देव दीक्षित जैसे धर्मगुरु जेल की हवा खा रहे हैं या फरार चल रहे हैं।

आर्थिक भ्रष्टाचार

आज का समस्त संसार अर्थमय हो गया है अर्थात् दुनिया के लगभग सभी व्यक्तियों की यह सबसे बड़ी आवश्यकता है क्योंकि धन के बदले में प्रत्येक व्यक्ति अपनी मन मर्जी का काम करवा सकता है और समस्त इच्छित द्रव्यों को प्राप्त कर सकता है। किसी व्यक्ति विशेष का धन से भौतिक पदार्थ प्राप्त करना ही मात्र लक्ष्य नहीं है बल्कि धन से किसी भी व्यक्ति का मनोबल तो बढ़ता ही है, साथ में उसमें स्वाभिमान और सम्मान से जीने की राह आसान हो जाती है। विश्व में आज जो भी देश आर्थिक रूप से समृद्ध हैं, विश्वपटल पर उन्हीं का बोलवाला है। अमेरिका, चीन, जापान आदि जैसे देशों को शक्तिशाली माने जाने के पीछे भी वहाँ की आर्थिक समृद्दि ही है जिसके बलबूते पर वह विश्व के अनेकों

देशों पर अपना प्रभाव रखते हैं क्योंकि अनेकों देश आर्थिक रूप से इन पर निर्भर हैं।

अब तो यह सर्वमान्य है कि आर्थिक शक्ति ही सर्वोच्च शक्ति है तो इसे पाने की स्पर्धा भी स्वाभाविक है और यह प्रतिस्पर्धा किसी एक सामान्य व्यक्ति से लेकर उस देश के सर्वोच्च पद पर पदासीन व्यक्ति पर अपना प्रभाव रखती है। इसी प्रतिस्पर्धा के द्वारा धन की चाहत में व्यक्ति ऐसे आचरणों में लिप्त हो जाता है जो कि सर्वथा भ्रष्टाचार की श्रेणी में आते हैं और यहीं से शुरू हो जाता है आर्थिक भ्रष्टाचार। महत्वपूर्ण बिन्दु यह है ही आर्थिक है भ्रष्टाचार की चपेट में समाज का प्रत्येक वर्ग है। इस भ्रष्टाचार में समाज का कोई व्यक्ति शिकार हो सकता है और कोई शिकारी। कई बार भृष्टाचार का शिकारी अन्य का शिकार बन जाता है। मसलन, व्यापारी ने ग्राहक को ठगा तो व्यापारी को मार्केटिंग इंस्पेक्टर ने, इंस्पेक्टर को ए सी बी ने तो ए सी बी को सी बी आई ने, इन सबके मुकदमों में वकीलों ने ठगा, और सभी को डॉक्टरों तथा राजनेताओं ने, राजनेताओं को जजों ने और कुल मिलाकर जिसको जिसने पाया, लूटा या ठगा। यह ऐसी उलझी श्रंखला है जिसमें कौन किस कड़ी में उलझा है समझ पाना मुश्किल है। मगर इस भ्रष्टाचार की व्यापकता इतनी बड़ी है कि शायद ही इससे कोई अछूता बचा हो। इस प्रकार के भ्रष्टाचार की जड़ भी मानवीय विकारों में निहित है जिनसे प्रेरित होकर व्यक्ति यह समझने लगता है कि धन ही एक सर्वोच्च सीढ़ी है जिस पर चढ़कर वह दुनिया की सारी हसरतें पूरी कर सकता है।

प्रशासनिक भ्रष्टाचार

भ्रष्टाचार का अगर कहीं जिक्र होगा तो नौकरशाही में व्याप्त भ्रष्टाचार की चर्चा हुए बिना संदर्भ अधूरा सा रहता है। शायद कोई 30–40 वर्ष पूर्व नौकरशाहों में भ्रष्टाचार की दर आज की तुलना में काफी कम होती थी और भ्रष्ट नौकरशाह को घृणित नजर से देखा जाता था, चाहे वह सजायाफ्ता हो या न हो। मगर आज ऐसे भ्रष्ट नौकरशाहों के पास अकूत संपत्ति तो होती ही है और साथ में उनकी गणना बड़े लोगों में की जाती है। यह लोग भ्रष्ट तरीकों से कमाये गये धन से अपने विरोधियों का मुंह बंद करने की क्षमता रखते हैं क्योंकि कानून, राजनेता व समाज के लालची व्यक्ति उनके भृष्ट कृत्यों का साथ देते हैं और शेष बचे लोगों को भयभीत करने या करवाने की क्षमता होती है एसे नौकरशाहों में। सरकारी तंत्र का शायद ही कोई विभाग ऐसा बचा हो जहां भ्रष्ट आचरण करने वालों की कमी हो। यहाँ भ्रष्टाचार के बारे में एक रोचक तथ्य यह भी है कि यह वर्गविहीन होता है यानि दैनिक वेतनभोगियों एवं चतुर्थ वर्ग के कर्मचारियों से लेकर विभागों के प्रमुख तक इसमें लिप्त होते हैं। भ्रष्टाचार की यह कड़ियाँ विभिन्न स्तरों से होती हुई माननीय मंत्रियों तक भी पहुँचती हैं जिन्हें आम जनता मतदाता के रूप में अपना प्रतिनिधि बनाकर विधायी सदनों में भेजती है यह आशा करके कि यह लोग आम जनता के कल्याण हेतु ऐसे कानून बनाएँगे जिनसे भ्रष्टाचार दूर होगा। मगर व्यावहारिकता में तो यह लोग मुख्य खलनायकों की भूमिका निभाते हैं। भ्रष्टाचार निरोधी विभाग जैसे कि सी.आई.डी., सी.बी.आई., अन्य खुफिया तंत्र, पुलिस एवं न्यायालय आदि विभागों में भी यदि भ्रष्टाचार हो तो भ्रष्टाचार से कौन बचाएगा। इन विभागों में पुलिस विभाग का नाम तो आए दिनों सुनने में आता रहता है। इसके अलावा चाहे चिकित्सा का क्षेत्र हो, शिक्षा जगत हो, स्थानीय निकाय हो, सभी जगहों भ्रष्टाचार ने समस्त हदें पार कर दी हैं। इसीलिए भ्रष्टाचार के मामले में प्रशासनिक भ्रष्टाचार का नाम संभवतः अग्रिम पंक्ति में आता है।

व्यावसायिक भ्रष्टाचार

भ्रष्टाचार का व्यवसायीकरण हो चुका है या व्यवसाय का भ्रष्टाचारीकरण हो गया है। इसमें अंतर धीरे–धीरे कम होता जा रहा है क्योंकि अब शायद ही कोई व्यवसाय बचा हो जिसमें भ्रष्टाचार ने अपनी जड़ें न जमा ली हों। व्यवसाय में भ्रष्टाचार का प्रकार एवं आकार अलग–अलग हो सकता है परंतु यह लगभग सभी स्तरों पर पाया जाता है। व्यवसाय में मुनाफाखोरी, चोरबाजारी, कर चोरी, घटतौली, अवमानक तथा गुणवत्ताहीन वस्तुओं की बिक्री, मिलावट एवं नकली पदार्थों का व्यापार, बिना लाइसेन्स या परमिट के व्यवसाय करना, परिवहन में ओवर लोडिंग, बिना बिल के समान बेचना, आकर्षक विज्ञापनों द्वारा ग्राहकों को ललचाना या बेवकूफ बनाना, घूस देकर लाइसेन्स प्राप्त करना तथा टैक्स चोरी के मामले निबटना, गुणवत्ता मानकों को धत्ता बताकर घूस के द्वारा अपना व्यापार जारी रखना और यदि माल गुणवत्ता के मानकों पर खरा न उतरे तो घूस देकर माल का गुणवत्ता हेतु प्रमाणपत्र प्राप्त करना आदि अनगिनत क्षेत्र हैं जहां व्यापारी वर्ग अपने भ्रष्ट आचरणों से रातों रात धनाढ्य बनाते जा रहे हैं। अगर सरकार ने जरा सी सख्ती दिखाई तो व्यापारी मण्डल हड़ताल पर उतर आते हैं। इसलिए यह कहना अतिशयोक्ति न होगा कि व्यवसाय का भृष्टाचारीकरण हो चुका है और यह निसंकोच कहा जा सकता है कि भ्रष्टाचार के बिना व्यवसाय में टिके रहना आसान नहीं है।

राजनैतिक भ्रष्टाचार

एक जमाने में राजनैतिज्ञ समाज सेवा के माध्यम से आते थे और राजनीति का उद्देश्य भी समाज सेवा होता था। स्वतन्त्रता आंदोलन के समय के अधिकांश राजनेताओं की पष्ठभूमि समाज सेवा होती थी जिसमें समाज व देशभक्ति सर्वोपरि हुआ करती थी। मगर समय परिवर्तन के साथ–साथ राजनीति का भी स्वरूप बदला और राजनीति में भी भ्रष्टाचार का पदार्पण हुआ। हाँलाकि

राजनीति में भ्रष्टाचार का इतिहास उतना ही पुराना है जितनी पुरानी राजनीति। उस समय इसे कूटनीति की आड़ में देखा जाता है क्योंकि तब सीधे तौर भ्रष्ट राजनैतिज्ञ समाज की नजर में तुरंत उतर जाता था मगर अब ऐसा नहीं है। भ्रष्ट से भ्रष्ट राजनीतिज्ञ तब तक भ्रष्ट नहीं माना जाता है जब तक कि सर्वोच्च न्यायालय द्वारा भ्रष्ट करार न दिया जा चुका हो। हमारे देश की लंबी न्यायायिक प्रक्रिया के कारण न्याय में देरी और न्यायतंत्र में भी भ्रष्टाचार के कारण आज तक बहुत ही बिरले राजनेताओं को भ्रष्टाचार में दोषी करार दिया गया हो। आज राजनीति में अगर चरम पर पहुँचना है तो मेहनत और संघर्ष से तो बिरले ही ऊपर पहुँच पाते हैं। हाँ किसी की पृष्ठभूमि में अथाह पैसा, राजनैतिज्ञ संरक्षण व हर भ्रष्ट कदम उठाने का दुस्साहस है तो फिर राजनीति में शिखर तक पहुँचने में कोई भी नहीं रोक सकता है। भ्रष्ट राजनेता गुंडों, माफियाओं यहाँ तक कि प्रत्येक गलत काम करने वालों से लेकर आतंकवादियों तक के संरक्षक तो होते ही हैं साथ ही साथ सरकारी तंत्र में विभिन्न विभागों के मंत्रियों के रूप उन विभागों के नियंत्रक की भूमिका निभाते भी हैं जिसमे सरकारी अधिकारियों के चयन, स्थानांतरण आदि को भृष्ट तरीके से प्रभावित करके अपने चहेतों को लाभ दिलवाकर अपना स्वार्थ सिद्ध करते हैं। मात्र दिखावे के लिए जनप्रतिनिधि के नाते जनता की भलाई का ढोंग करते हैं।

भ्रष्टाचार के संबंध में उपरोक्त तथ्यों के बाद महत्वपूर्ण प्रश्न यह उठता है कि भ्रष्टाचार का जिम्मेदार है आखिर कौन? हमारी समझ में उत्तर अत्यंत सरल व स्पष्ट है और **"वह है हम सभी"**। दरअसल यदि हम आत्मवलोकन करें कि जीवन के किन क्षेत्रों में हमने एसे आचरण किए हैं जिन्हें भ्रष्ट आचरणों की श्रेणी में रखा जा सकता है। तो हम पायेगें कि जीवन के नित्य दिन–प्रतिदिन के क्रिया–कलापों में कहीं न कहीं हम ऐसे आचरण करते जिन्हें किसी न किसी रूप में भ्रष्ट कहा जाएगा। सर्वविदित भ्रष्टाचारों को अगर हम एक तरफ रख दें तो भी हमारे द्वारा दिन–ब–दिन होने वाले सामान्य भ्रष्टाचारों की एक लंबी श्रंखला है जिनमें से कुछ का उल्लेख करना इसलिए अनिवार्य है ताकि सामान्य लोग भी यह जान सकें कि भ्रष्टाचार के लिए वह भी जिम्मेदार कैसे हैं?इस श्रंखला के कुछ भ्रष्टाचार इस प्रकार हैं:

1. सामन्यता छोटी–मोटी वस्तुएँ खरीदते समय हम दुकानदार से बिल नहीं लेते जिससे वह कर चोरी कर पाता है।
2. अपना घर साफ रखकर कूड़ा, पानी की खाली बोतलें या खाने पीने के सामानों तथा गिफ्ट आदि के कवर के अलावा अनेकों अवांछनीय वस्तुओं को सड़कों पर फेंककर गंदगी फैलाते हैं।
3. सड़क पर अपनी साइड पर न चलना या ट्रैफिक नियमों का पालन न करना।
4. जहां कहीं लाइन लगी हो उस लाइन के बीच में या आगे लगने की कोशिश करना।
5. सरकारी कार्यालयों में कामचोरी करना तथा स्वार्थवश अधिकारियों की चमचागीरी करना।
6. अनावश्यक किसी की बुराई करना, मजाक उड़ना, परेशान करना, आदि।
7. अपनी श्रेष्ठता जताने के लिए रौब जमाना, अमर्यादित भाषा का प्रयोग करना, या किसी के सामने एसी भाषा का प्रयोग करना जो कि उसे न आती हो।
8. गरीब या निम्न वर्ग के लोगों को हेय दृष्टि से देखना अथवा किसी की लाचारी का उपहास उड़ाना।
9. अपने स्वार्थ हेतु शडयंत्रकारी क्रिया–कलापों में भाग लेना।
10. निहित स्वार्थवश नैतिकता के निम्नतर स्तर तक चले जाना।
11. स्वयं के अहंकार में समाज की उपेक्षा करना।
12. किसी की मजबूरी का फायदा उठाकर उसका भयादोहन करना।
13. धर्म की आड़ में पाखंड करना।
14. किसी के नुकसान अथवा अपमान की परवाह न करना।
15. लैंगिग, जाँति–पात या किसी भी प्रकार का भेदभाव करना।

उपरोक्त किसी न किसी भ्रष्ट आचरणों की परिधि में हम सभी आते हैं। हाँ कोई कम जिम्मेदार हो सकता है और कोई अधिक। मगर भ्रष्टाचार से हम सभी प्रभावित भी हैं और इसके लिए जिम्मेदार भी। भ्रष्टाचार का उन्मूलन अगर कठिन है तो इसे कम करना असंभव भी नहीं है। इसे कम करने के लिए समाज के प्रत्येक व्यक्ति में अपनी नैतिक जिम्मेदारी का एहसास होना अति आवश्यक है और नैतिक मूल्यों युक्त सोच के साथ–साथ इनका प्रसार एवं प्रचार इस बीमारी को दूर करने का एक अहम उपाय हो सकता है।

अमोद–प्रमोद प्रभाग

पौष्टिकता से भरपूर उत्तराखण्ड के पहाड़ी व्यंजन

कु. मनीशा, वी.के. सचान, गौरव पपनै, पंकज नौटियाल एवं रश्मि

कृषि विज्ञान केन्द्र, भा.कृ.अनु.प.–विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, चिन्यालीसौड़ उत्तरकाशी एवं कृषि विज्ञान केन्द्र, भरसार (उत्तराखण्ड)

उत्तराखण्ड जैव विविधता से परिपूर्ण हिमालयी राज्य है। जहाँ उत्तराखण्ड की ऊँची चोटियों या पनढ़लों में सामान्यतः जलवायु ठण्डी रहती है, वहीं घाटियों में गर्मी भी पड़ती है। घाटी क्षेत्रों में सामान्यतः उन फसलों की खेती की जाती है, जिनकी खेती मैदानी क्षेत्रों में होती है। किन्तु ऊँचाई वाले क्षेत्रों में कुछ विशेष फसलों की खेती परम्परागत तरीके से की जाती है। ये परम्परागत फसले ऊँचाई वाले क्षेत्रों में न केवल विषम भौगोलिक परिस्थितियों में अच्छी पैदावार देती है, बल्कि पूरे पर्वतीय परिस्थितिकी को स्थायित्व भी प्रदान करती है। उत्तराखण्ड की ये परम्परागत फसलें मुख्य रूप से खरीफ ऋतु में उगाई जाती हैं। इन फसलों को मुख्य रूप से दो समूहों में रखा जा सकता है, मोटे अनाज वाली फसलें एवं अल्प प्रयुक्त फसलें। मोटे अनाज वाली फसलों में मंडुवा (रागी/कोदा), झंगोरा (मादिरा, सांवा), कौंणी (कंगना), चीवा एवं अल्प प्रयुक्त फसलों में रामदाना, कुट्टू, बथुआ व नौरंगी (राईसबीन) प्रमुख हैं।

कृषि क्षेत्र में मुख्य रूप से उगाई जाने वाली फसलें उस क्षेत्र की जलवायु एवं भूमि पर निर्भर करती हैं। पर्वतीय क्षेत्रों के कृषक पूर्वजों ने शायद ऐसे ही फसलों को खेती के लिए चयन किया जो कि यहाँ बदलते जलवायु एवं विभिन्न प्रकार की भूमियों पर आसानी से उगायी जा सकती हैं। फसलों में अनाज की फसलों के साथ–साथ दलहनी फसलें जैसे लोबिया, भट्ट, गहत, नौरंगी, राजमा आदि की भी खेती की जाती है। जिससे कि ये फसलें एक दूसरे को पोषण की पूर्ति करती है तथा उनकी वृद्धि एवं विकास में सहायक होती है।

उत्तराखण्ड राज्य के पर्वतीय क्षेत्रों में खरीफ में बोई जाने वाली फसलों में मंडुवा का स्थान क्षेत्रफल एवं उत्पादन के लिहाज से धान के बाद दूसरा है। अगर सभी परपंरागत फसलों को एक साथ देखा जाये तो राज्य में पर्वतीय क्षेत्रों में लगभग 70–75 प्रतिशत क्षेत्रफल पर इन्हीं फसलों की खेती की जाती हैं। पर्वतीय क्षेत्रों में कम उर्वरा शक्ति वाली मृदा में उगाये जाने के कारण इन फसलों का महत्व और भी बढ़ जाता है ।

पारंपरिक फसलों से बनने वाले भोज्य पदार्थः

उत्तराखण्ड के दो मंडल कुमाऊँ व गढ़वाल में इन पारम्परिक फसलों का महत्व उनके तीज त्यौहार व संस्कृति में देखा जा सकता है। विशेषकर पारंपरिक फसलों से वहाँ के लोग विभिन्न प्रकार के पकवान तैयार करते हैं जो किसी सुविशेष अवसर पर बनाये जाते हैं। जिनका स्वास्थ्य एवं पोषक दृष्टि से देखा जाये तो काफी विशेष महत्व है वे न केवल स्वादिष्ट होते हैं अपितु सेहत के लिये भी काफी लाभप्रद होते हैं जिनका प्रयोग हम अगर दिनचर्या में करें तो हमें रोगों से लड़ने की प्रतिरोधक क्षमता प्राप्त होगी एवं शरीर भी स्वस्थ रहेगा।

गढ़वाल के प्रमुख व्यंजनः– इन्ही दो मण्डलों में से एक गढ़वाल मंडल की अपनी अनूठी मान्यताएं एवं परम्पराएं हैं जिसमें कई प्रकार के आयोजन त्यौहारों पर किये जाते हैं। इन्हीं त्यौहारों के आयोजन पर गढ़वाल मण्डल की पारंपरिक फसलों से बनने वाले व्यंजनों का विवरण इस प्रकार है।

फाणा– यह गहत की दाल का बनने वाला तरल पदार्थ है इसे गढ़वाल में बड़े ही चाव से भात (चावल) के साथ खाया जाता है। इसको खाने से पथरी व भूख न लगने जैसी बीमारियों का निदान भी होता है। फाणा सर्दियों के मौसम में शरीर में गर्मी प्रदान करने का काम भी करता है जिससे कि ठण्ड के मौसम में लगने वाले रोगों से शरीर को रोग प्रतिरोधक क्षमता मिल सके ।

पटूंगाः– यह हरी सब्जियों को बेसन में मिलाकर पकोड़ी की तरह से बनाया जाता है जिसमें कि स्थानीय मसालों का प्रयोग कर इसे अत्यधिक स्वादिष्ट बनाया जाता है। यह स्वास्थ्यवर्धक होता है और शरीर में रक्त की कमी को दूर करता है। पटूंगा को साधारणतया स्नैक्स के रूप में प्रयोग किया जा सकता है।

बड़ीलः– यह मसूर की दाल से बना हुआ ढोकले की तरह दिखने वाला व्यंजन है, जो कि चटनी व धनिया के साथ परोसकर खाया जाता है। गुजराती भोज्य पदार्थ ढोकला की तरह दिखने वाले वाला बड़ील दलहनी होने के कारण प्रोटीन से भरपूर होता है। यह स्वादिष्ट होने के साथ–साथ सफर में ले जाने में भी आसान होता है, जिससे बाहर के खाने से भी बचा जा सकता है।

मनजोलीः– यह मट्ठे से बनने वाला पेय पदार्थ है। जिसका उपयोग चावल, रोटी के साथ किया जाता है, जो कि

पेचिश व पीलिया वाले मरीजों के लिए बड़ा ही लाभप्रद होता है। पेचिश में यह शरीर में इलेक्ट्रोलाइट्स की कमी को पूरा करता है इन बीमारियों को ठीक करने हेतु मंजोली एक बहुत ही आसान एवं कारगर इलाज भी है।

अरसे:– यह गढ़वाल का विशेष पकवान है, जो कि शादी एवं अन्य शुभ समारोहों में बनाया जाता है। अरसों को विशेषकर दुल्हन के साथ कलेऊ के रूप में उसके ससुराल भेजने की परम्परा है। अरसे बनाने हेतु चावल को भिगो कर पीसते हैं और गुड की चाशनी से गूँथकर एवं उनको आकार देकर तेल में तला जाता है इसमें लौह तत्व की प्रचुर मात्रा होती है। यह लंबी दूरी की यात्रा के समय भी भोजन हेतु प्रयोग में जाए जा सकते हैं।

भंजीर के लड्डू:– यह पहाड़ी क्षेत्रों में सरसों के दाने के समान पाये जाने वाला एक जंगली दलहनी फसल है जिसको यहाँ के लोग भूनकर व इसके लड्डू बनाकर खाते हैं। यह गर्भवती एवं धात्री महिलाओं के लिए बहुत ही हितकर होता है।

पत्यूड़े :– यह अरबी के पत्तों की बनायी जाती है। इसको बेसन के साथ लपेटकर बनाया जाता है। यह पकोड़ी की तरह एक पौष्टिक व्यंजन है जिसमें भरपूर मात्रा में पोषक तत्व होते हैं।

आटे का गिलोला एवं गुलगले:– यह आटे से बनने वाला मीठा व्यंजन है जो कि गढ़वाल में विशेषकर पर्व एवं शुभ–समारोहों में बनाया जाता है।

कंडाली की सब्जी :– इसको बड़े ही चाव के साथ खाया जाता है इसकी सब्जी बहुँत ही पौष्टिक होती है। इसमें भरपूर मात्रा में पोषक तत्व पाए जाते हैं इसकी सब्जी को पहले आग में भुना जाता है फिर उसको उबाला जाता है फिर इसकी सूखी एवं तरीदार सब्जी बनायी जाती है।

दूयूड़ा :– यह मक्के एवं गेंहूँ के आटे को मिश्रित कर समोसे के आकार का बनाया जाता है जिसे भाप में पकाकर घी के साथ परोसा जाता है । यह प्रोटीन से भरपूर व्यंजन होता है।

कुमाऊँ मण्डल

कुमाऊँ के प्रमुख व्यंजन :– गढ़वाल की तरह कुमाऊँ मण्डल मे भी कई पौष्टिक व्यंजन बनाये जाते हैं जिनमें निम्नलिखित व्यंजन प्रमुख है:–

डूबके :– यह काले भट्ट की दाल से बना हुआ एक पौष्टिक तरल पदार्थ है जिसे चावल या भात के साथ बड़े ही चाव से कुमाऊँ में खूब खाया जाता है। इसमें कम मसालों का प्रयोग होता है जिसको चावल के आटे के मिलाकर बनाया जाता है। जिस कारण यह उदर के लिए अति लाभदायक होता है। इसको खाने से शरीर का पाचन तंत्र ठीक रहता है व भूख भी खूब लगती है। यह कब्ज जैस समस्याओं का निवारण करता है ।

भट्ट का जौला :– यह भी डूबके की तरह से बनाया जाने वाला एक व्यंजन है लेकिन इसमें नमक पकाते वक्त नहीं मिलाया जाता है अपितु इसके लिए नमक का लहसून, जीरा, हरी मिर्च के साथ मिलाकर पिसा जाता है, और फिर इसे चावल के साथ परोस कर खाया जाता है यह दस्त, मिचली जैसी बीमारियों को दूर करता है। यह एक बड़ा ही पौष्टिक व्यंजन है जिसको खाने से शरीर में ताकत रहती है।

बड़ी :– यह भूजेला, मूली एवं पहाड़ी ककड़ी से बनने वाली एक सब्जी है जिसको उर्द की दाल के साथ नमक एवं अन्य मसालों से तैयार किया जाता है। फिर इसको धूप में खूब अच्छी प्रकार से सुखाकर संग्रहित किया जाता है और बाद में इसकी सब्जी बनाकर खायी जाती है। इसमें रेशे एवं अन्य पोषक तत्व होते हैं व यह अपच व बदहजमी जैसी समस्याओं का निवारण भी करता है।

बड़े :– यह उर्द की दाल से बनने वाला पकोड़ी की तरह दिखने वाला व्यंजन है जिसे मुख्यतः उत्सव, शादी एवं विशेष शुभ समारोहों में बनाया जाता है एवं गढ़वाल में इसको दाल की पकोड़ी बोला जाता है।

मुंगोडे :– यह मूंग की दाल से बना एक स्वादिष्ट व्यंजन है। जिसे चटनी के साथ बड़े ही चाव से खाया जाता है ।

ल्यूंडा :– यह पहाड़ में पाए जाने वाली एक विशेष प्रकार की सब्जी है जो न केवल स्वादिष्ट होती है अपितु पोषक तत्वों से भरपूर होती है इसमें विटामिन एं, आयरन, कैल्शियम एवं अन्य खनिज लवण भी पाए पाये जाते हैं।

कापा :– यह हरी पत्तेदार सब्जियाँ जैसे पालक व लाई का बनाया जाता है जिसके चावल के आटे के साथ तरल भाग की तरह पकाया जाता है यह भी काफी पौष्टिक होता है एवं गढ़वाल मण्डल में इसको काफली बोला जाता है ।

गडेरी की सब्जी :– यह एक बड़ी एवं मोटे आकार की अरबी की तरह दिखने वाली सब्जी है जिसको कुमाऊँ में बड़े ही चाव के साथ खाया जाता है। कुछ लोग इसमें भाँग डालकर भी खाते है। इससे इसकी पोषक गुण्वत्ता और बढ़ जाती है ।

भांग की चटनी :– भाँग की चटनी भाँग के बीजों से बनने वाली एक स्वास्थ्यप्रद चटनी है, जिसे विशेषकर जाड़ों में खाया जाता है क्योंकि यह शरीर को गर्मी प्रदान करती है।

घुघते :– यह मकर संक्रान्ति पर्व के उपलक्ष्य में कुमाऊँ मंडल में मनाये जाने वाला एक लोकप्रिय व्यंजन है जिसे आटे व गुड़ के साथ मिलाकर बनाया जाता है, यह विशेषकर छोटे बच्चों में खास लोकप्रिय है, क्योंकि मकर संक्रान्ति के दिन बच्चे सुबह–सुबह घुघते की माला पहनकर छत पर खड़े होकर कौओं

को बुलाते हैं।

अन्य व्यंजनः–

झंगोरे की खीर :– यह झंगोरे के चावल से बनी हुई एक स्वादिष्ट मीठी एवं पौष्टिक खीर है।

लाल चावल की खीर/भात :– उत्तराखंड में लाल रंग का चावल एक पारंपरिक फसल है, जिसको वहाँ के लोग चावल व खीर के रूप में प्रयोग कर खाते हैं।

लेसू :– यह गढ़वाल एवं कुमाँऊ में बनने वाली एक पौष्टिक भरवाँ रोटी है जिसमें मंडुवे के आटे को गेहूँ की रोटी के अंदर से भरकर बनाया जाता है और मक्खन व घी के साथ खाया जाता है।

मंडुवे की रोटी :– यह मंडुवे के आटे में थोड़ा सा गेंहूँ के आटे को मिलाकर बनाये जाने वाली रोटी है जो न केवल स्वाद में भरपूर अपितु स्वास्थ्य की दृष्टि से काफी स्वास्थ्यवर्धक है। इसमें रेशा, लौह तत्व व कैल्शियम होने के साथ इसकी गुणवत्ता अधिक बढ़ जाती है एवं यह मधुमेह के रोगियों के लिय काफी लाभप्रद है इसका सेवन शरीर के लिये काफी लाभदायक है ।

गहत/कुल्थी की दाल :– यह कुमाँऊ व गढ़वाल मंडल की प्रमुख दालों में से एक है जिसमें गन्धेणी, हींग व जीरे के तड़के के साथ बनाया जाता है। यह पथरी के मरीजों के लिए सेवन करना लाभप्रद है। यह गुर्दों के लिये भी लाभदायक है ।

आलू के गुटखे :– यह व्यंजन उबले पहाड़ी आलुओं से मसाला डालकर बनाया हुआ एक चटपटा व्यंजन है जिसे पहाड़ों में लोग अधिकतर अक्सर सड़क के किनारे दुकानों पर स्नैक्स के तौर पर खाना पसंद करते हैं। आने–जाने वाले यात्री एवं पर्यटक भी इसे बहुत ज्यादा पसंद करते हैं।

क्षेत्रीय स्तर पर खाद्य सुरक्षा कुपोषण से सुरक्षा एवं विभिन्न त्योहारों एवं संस्कृति से जुड़े होने के कारण इन फसलों का महत्व अन्य फसलों की तुलना में कहीं ज्यादा है। बदलते पर्यावरण परिस्थितिकी को दृष्टिगत रखते हुए इन फसलों को भविष्य हेतु संरक्षित करना एवं व्यापक प्रचार प्रसार के साथ–साथ शासन से अधिक प्रोत्साहन की आवश्यकता है व ये फसलें हमारी अमूल्य धरोहर के अंग है। जिनको हमारी आने वाली पीढ़ियों के लिये संरक्षित रखना हमारा कर्तव्य है।

क्र. सं.	व्यंजन	प्रोटीन (100 ग्राम प्रतिदर से)	वसा (100 ग्राम प्रतिदर से)	काबोहाईड्रेट (100 ग्राम प्रतिदर से)	ऊर्जा (किलो कैलोरी)	कैल्शियम (मिलीग्राम)	आयरन (100 ग्राम प्रतिदर से)
1	फाणा	11	5.25	28.6	205.5	143.5	3.385
2	पतुंगा	15.20	4.20	41.80	265.33	86.00	4.29
3	बडील	22.3	8.7	57.3	353	73	2.7
4	मंनजोली	0.93	1.20	1.89	21.98	33.00	1.46
5	पत्यूडा	15.14	9.11	43.20	269.71	56.21	4.50
6	गिलोले	4.86	0.68	47.64	216	21.6	1.991
7	द्यूणा	11.77	2.33	68.33	341.33	35.33	4.03
8	डुबके भटट के	15.81	4.00	38.65	253.55	48.39	2.52
9	भटट का जौला	14.40	6.50	6.97	144.00	80.00	3.47
10	बडी	18.47	1.08	45.91	267.26	118.72	2.94
11	बडे	16.80	10.98	41.72	332.90	107.80	2.66
12	मुगौडे	15.81	4.00	38.65	253.55	48.39	2.52
13	कापा पालक	1	0.35	1.45	13	36.5	0.57
14	कापा लाई	2.55	0.2	2.95	24	185	6.25
15	गडेरी की सब्जी	2.86	4.86	20.10	135.24	38.10	0.40
16	घुघते	6.83	11.12	76.53	343	219.55	4.12

अमोद–प्रमोद प्रभाग

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (कार्यालय–3), लखनऊ

छमाही प्रगति

संस्थान में दिनांक 25 नवम्बर 2017 को इस वित्तीय वर्ष की द्वितीय नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (नराकास) बैठक का आयोजन किया गया। इस बैठक में लखनऊ स्थित नराकास (कार्यालय–3) के 61 सदस्य कार्यालयों के कार्यालय प्रमुख एवं उस कार्यालय के हिंदी विद्वाजनों ने भाग लिया। साथ ही संस्थान के राजभाषा कार्यान्वयन समिति के सदस्यों ने भी भाग लिया। इस बैठक की अध्यक्षता नराकास (कार्यालय–3) के अध्यक्ष एवं संस्थान के निदेशक डॉ. अश्वनी दत्त पाठक एवं डॉ. ए. के. साह संस्थान के राजभाषा प्रकोष्ठ के प्रभारी एवं सचिव नराकास (कार्यालय–3) उपस्थित थे। इस बैठक में अक्टूबर 2016–मार्च 2017 के बीच हिंदी में प्राप्त प्रतिवेदन की समीक्षा करने के उपरांत उनका प्रस्तुतीकरण डॉ. ए. के. साह द्वारा किया गया। प्रस्तुतीकरण के उपरांत हिंदी में उत्कृष्ट कार्य करने हेतु 10 कार्यालयों को पुरस्कृत किया गया साथ ही 3 संस्थानों को राजभाषा पत्रिका हेतु सम्मानित किया गया। इसके उपरांत नराकास (कार्यालय–3) के अध्यक्ष एवं संस्थान के निदेशक डॉ. अश्वनी दत्त पाठक ने संस्थान द्वारा हिंदी के कार्यों के बारे में किए जा रहे कार्यों के बताया। इस बैठक में कार्यालयी कार्यों एवं राजभाषा पत्रिका हेतु प्रथम एवं द्वितीय स्थान पाने वाले कार्यालय अध्यक्षों ने भी अपने विचार को रखा। बैठक का संचालन श्री अभिषेक कुमार सिंह, तकनीकी अधिकारी (राजभाषा) ने किया था। साथ ही कार्यालयी कार्यों हेतु पुरस्कृत 10 कार्यालयों एवं पत्रिका हेतु पुरष्कृत 3 कार्यालयों को अध्यक्ष महोदय द्वारा मोमेंटों प्रदान किया गया। साथ ही इस दौरान जिन 27 कार्यालयों ने हिंदी कार्यशाला का आयोजन किया था, उनको प्रमाण पत्र दिया गया।

कार्यालयी कार्यों हेतु पुरस्कृत कार्यालयों की सूची

कार्यालयों का नाम	स्थान
मंडल रेल प्रबंधक कार्यालय, पूर्वोत्तर रेलवे, लखनऊ	प्रथम
सीएसआईआर –भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, लखनऊ	द्वितीय
मंडल रेल प्रबंधक कार्यालय, उत्तर रेलवे, लखनऊ	तृतीय
जगजीवन राम रेलवे सुरक्षा बल अकादमी, लखनऊ	चतुर्थ
पुलिस उप महानिरीक्षक, ग्रुप केन्द्र, के.रि.पु.बल, लखनऊ	पंचम
पुलिस महानिरीक्षक, मध्य सेक्टर, के.रि.पु. बल, लखनऊ	षष्टम
क्षेत्रीय पासपोर्ट कार्यालय, लखनऊ	सप्तम
पुलिस उप महानिरीक्षक, केन्द्रीय रिजर्व पुलिस बल, रेंज लखनऊ, बिजनौर, लखनऊ	अष्टम
उप क्षेत्रीय भविष्य निधि कार्यालय, लखनऊ	नवम
राष्ट्रीय जल विकास अभिकरण, लखनऊ	दशम
पत्रिका हेतु पुरष्कृत कार्यालय एवं प्रत्रिका का नाम	
सारंग : मंडल रेल प्रबंधक कार्यालय, उत्तर रेलवे, लखनऊ	प्रथम
संपदा संवाद : प्रधान निदेशलय, रक्षा सम्पदा, रक्षा मंत्रालय, मध्य कमान	द्वितीय
विष विज्ञान संदेश : सीएसआईआर –भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, लखनऊ	तृतीय

शब्दकोष

(पिछले अंक के आगे)

A

Advance	अग्रिम, पेशगी
Advance booking	अग्रिम बुकिंग
Advance increment	अग्रिम वृद्धि
Advance pay	अग्रिम वेतन
Advancement	उन्नति
Advantage	लाभ, फायदा
Adverse	प्रतिकूल
Adverse entry	प्रतिकूल इंदराज
Adverse remarks	प्रतिकूल अम्युक्ति
Advearse report	प्रतिकूल रिपोर्ट
Advertisement	विज्ञापन
Advertising	विज्ञापन
Advice	परामर्श
Advice note	सूचना पत्र
Advise	सलाह देना
Advisory	सलाहकार
Advisory board	सलाहकार बोर्ड
Advisory committee	सलाहकार समिति
Advisory council	सलाहकार परिषद्
Advisory panel	सलाहकार नामिका
Advocacy	वकालत, पक्ष–समर्थन
Advocate	अधिवक्ता, एडवोकेट, पक्ष–समर्थन

B

Band	पट्टी
Bank account	बही खाता
Bank balance	बैंक शेष
Bank book	बैंक पुस्तिका
Bank charges	बैंक प्रभार
Bank credit	बैंक साख
Bank draft	बैंक ड्राफ्ट
Banker	बैंकर
Banker's mortgage	बैंक बंधक
Bank guarantee	बैंक गारंटी
Bank holiday	बैंक अवकाश
Banking	बैंकिंग, बैंककारी
Bank arrangement	बैंकिंग व्यवस्था

C

Change slip	परिवर्तन पर्ची
Chaos	अव्यवस्था
Character roll	चरित्र पंजी
Character certificate	चरित्र प्रमाणपत्र
Charge	आरोप
Charge sheet	कार्यभार रिपोर्ट
Charity	दान

D

Departmental action	विभागीय कार्रवाई
Demand	माँग
Demarcation	सीमांकन
Demi- official letter	अर्ध–शासकीय पत्र
Demonstration	प्रदर्शन
Demoralization	हौसलापस्त
Demotion	पद घटना, पदावनति
Diet	आहार
Development	विकास
Departure	प्रस्थान
Deploy	तैनात करना
Deplоment	तैनाती
Departmental charge	विभागीय प्रभार
Depotation	देशनिकाला
Deputy	उप

E

Encouragement	उत्साहवर्द्धन
Endorsement	पृष्ठांकन

Enjoin	आदेश देना
Enlargement	परिवर्द्धन
Enquiry Officer	जाँच अधिकारी
Enterprise	उद्यमी
Entitle	हकदार होना
Entrance	प्रवेश
Entrance examination	प्रवेश परीक्षा
Entrance fee	प्रवेश शुल्क

F

Filing system	फाइल पद्धति
Figures	आँकड़े
Field	क्षेत्र
File board	फाइल बोर्ड
Final withdrawal	अंतिम निकासी
Finalise	अंतिम रूप देना
Financial powers	वित्तीय शक्तियॉ
Financial crisis	वित्तीय संकट

G

Gift	उपहार
Gift tax	उपहार कर
Gift voucher	उपहार वाउचर
Gist	सार
Glaring disparity	घोर असमानता
Glaring	सुस्पष्ट
Glaring mistake	जबरदस्त गलती
Global tender	विश्वव्यापी निविदा
Glossary	शब्दावली

H

Hierarchy	पद सोपान
Higher authority	उच्चतर प्राधिकारी
Higher education	उच्च शिक्षा
Hindi teaching scheme	हिंदी शिक्षण योजना
Hindi version	हिंदी रूपांतर
Hiring	रोजगार देना
History	इतिहास
History sheet	इतिवृत

I

In detail	विस्तार से
Inauguration	उद्घाटन
Incentive	प्रोत्साहन
Income	आय
Incoming	आवक
Incompetency	अक्षमता
Incongruous	असंगत, बेतुका
Inconvenience	असुविधा
Incumbent	पदधारी
Indent item	मांग–पत्र मद
Indentor	मांगकर्ता
Indenture	विलेख, दस्तावेज
Index	अनुक्रमणिका

J

Jointly and severally	संयुक्त और पृथक रूप से
Joint ownership	संयुक्त स्वामित्व
Joint planning staff	संयुक्त आयोजना स्टाफ
Joint representation	संयुक्त प्रतिनिधित्व
Joint resolution	संयुक्त संकल्प
Joint responsibility	संयुक्त उत्तरदायित्व
Joint sector	संयुक्त क्षेत्र
Joint stock bank	संयुक्त पूंजी बैंक

K

Knock-off	काम रोकना
Know-how	जानकारी

L

Legislatve remedy	विधायी उपचार
Legislature	विधानमंडल
Legitimate	उचित
Legitimate claim	विधिसंगत दावा
Legitimate grievance	जायज शिकायतें
leisure	अवकाश

Lenience	नरमी
Lenience bias	शैथिल्य उदारता
Lessee	पट्टेदार
Letter	पत्र

M

Metalled road	पक्की सड़क
Method	विधि
Midterm appraisal	मध्यावधि मूल्यांकन
Migration	प्रवास
Mileage	मील–दूरी
Ministerial	लिपिकवर्गीय
Minority	अल्पसंख्य, अल्पमत
Minority representation	अल्पमत प्रतिनिधित्व

N

Nominate	नामित करना
Nominee	नामिती
Nomination	नाम निर्देशन

O

Open tender	खुली निविदा
Operating costs	प्रचालन लागत
Operation	प्रचालन
Operative	कर्मी
Opportunity	अवसर
Optimum utilization	इष्टतम उपयोग
Optional	वैकल्पिक

P

Phenomenon	घटना
Pilgrim	तीर्थयात्री
Pilot programme	अग्रगामी कार्यक्रम
Pisciculture	मत्स्यपालन
Planning	योजना बनाना
Plant diseases	पादप रोग
Plantation	वृक्षारोपण
Pledger	गिरवीकर्ता

Q

Quarantine leave	संगरोध छुट्टी
Quarterly report	तिमाही रिपोर्ट
Query	प्रश्न, प्रश्नचिह्न
Questionable	प्रश्न योग्य

R

Reimbursement	प्रतिपूर्ति करना
Refer	संदर्भ
Reference book	संदर्भ पुस्तक
Referral	परामर्शी
Refundable	प्रतिदेय
Refusal	इंकार
Regard	आदर, ध्यान देना, सम्बन्धा
Registered	पंजीकृत
Registered letter	पंजीकृत पत्र
Registration fee	पंजीकरण शुल्क
Regret	खेद प्रकट करना
Regularization	नियमितीकरण
Reject	अस्वीकार
Rejoinder	प्रत्युत्तर
Relaxation	रियायत
Relevant papers	संबंधित कागजात

S

Share	अंश
Short list	लघु सूची
Shortfall	कमी
Shorthand	आशुलिपि
Significant	महत्वपूर्ण
Simple interest	साधारण व्याज
Simultaneous	समक्षणिक
Sine die	अनिश्चित काल के लिए
Sincere	सद्भावी
Slum	गंदी बस्ती
Slump	गिरावट

T

Tax assessment	कर निर्धारण
Tax exemption	कर छूट
Tax payer	करदाता
Tax rebate	कर घटौती
Tax return	कर विवरणी
Tax schedule	कर अनुसूची
Teacher	अध्यापक
Teacher education	अध्यापक शिक्षा
Teacher spirit	अध्यापक भावना
Team work	टीम कार्य
Tea plantation	चाय बगान
Tear gas	अश्रु–गैस
Tea time	चाय समय
Technical	तकनीकी
Technical advice	तकनीकी सलाह
Technical college	तकनीकी महाविद्यालय

U

Unprecedented	अभूतपूर्व
Unpredictable	अपर्वानुमेय
Unproductive	अनुत्पादक, निष्फल
Unproductive labour	अनुत्पादक श्रम
Unprofitable	अलाभकर
Unpunctual	लेटलतीफ
Unpunctuality	लेटलतीफी
Unqualified	अयोग्य
Unqualified apology	बिना शर्त क्षमायाचना
Unquestionable	प्रश्नातीत

V

Vis- a- vis	के सामने
Visibility	दृभयता
Visible	दृष्टिगोचर
Vision	दृष्टि
Visit	आगमन
Visitor	आगंतुक
Visiting hours	मिलने का समय
Visitors' book	आगंतुक पंजिकाा
Visual publicity	दृभय प्रचार
Vital	जीवनाधार

W

Waiting list	प्रतीक्षा सूची
Waiting room	प्रतीक्षालय
Waive	अधित्याग करना
Waiver	अधित्याग
Walkie talkie set	चल–वार्ता सेट
Walk-in-interview	प्रवेश साक्षात्कार
Want	अभाव
Ward	वार्ड
Warehousing charges	मालगोदाम प्रभार
Warn	चेतावनी देना
Warnrant	अधिपत्र
Warrant of precedence	पूर्वता–अधिपत्र
Warranty	आश्वस्ति
War risk insurance	युद्ध जोखिम बीमा
Washing allowance	धुलाई भत्ता
Wastage	बरबादी
Waste land	बंजर भूमि
Water capacity	जल धारिता
Water proof	जलसह
Water supply	जलापूर्ति

X

X-Ray Assistant	एक्सरे सहायक

Y

Yield	उपज, उत्पादकता

Z

Zoo	चिड़ियाघर
Zoo Supervisor	चिड़ियाघर पर्यवेक्षक
Zoological park	प्राणि उद्यान
Zoological survey	प्राणि–सर्वेक्षण

संकलन : अभिषेक कुमार सिंह

नराकास बैठक : 17 नवम्बर, 2017

हर कदम, हर डगर
किसानों का हमसफर
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
Agri search with a human touch

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

विजन

उत्कृष्ट, वैश्विक रूप से प्रतिस्पर्धात्मक तथा गन्ने की खेती के लिए एक अग्रणीय अनुसंधान संस्थान के रूप में कार्य करना।

मिशन

भारत की गन्ना एवं ऊर्जा की भावी आवश्यकताओं की पूर्ति करने हेतु गन्ने के उत्पादन, उत्पादकता, लाभप्रदता तथा स्थायित्व को बढ़ाना।

अधिदेश

- गन्ना उत्पादन एवं सुरक्षा पर मूल, नीतिगत एवं अनुकूलक शोध करना तथा देश के उपोष्ण क्षेत्रों के लिए गन्ना किस्मों के प्रजनन पर कार्य करना।
- उन्नत प्रजातियों एवं प्रौद्योगिकियों के विकास के लिए राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय मुद्दों पर प्रयुक्त शोध का समन्वयन एवं अनुश्रवण।
- प्रौद्योगिकी का प्रसार एवं क्षमता निर्माण

स्वच्छ भारत
एक कदम स्वच्छता की ओर